# भूमिका

संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ब्रिटेन आदि देशों में गत वर्षों में मापन एवं मूल्यांकन के क्षेत्र में बड़ी भारी प्रगति हुई है। यह प्रगति सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही रूपों में हुई है। सैद्धान्तिक रूप में मापन एवं मूल्यांकन विषय पर अनेक पुस्तिकाओं तथा परीक्षणों का प्रकाशन हुआ है। इस प्रगति का, विशेषकर सैद्धान्तिक पक्ष का, भारत पर भी प्रभाव पड़ा है, परिणामस्वरूप हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में मापन एवं मूल्यांकन सम्बन्धी अनेक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ है। भारत में मापन तथा मूल्यांकन के व्यावहारिक पक्ष की उतनी अधिक प्रगति नहीं हुई है।

राजस्थान विश्वविद्यालय ने बी. एड. पाठ्यक्रम में मापन एवं मूल्यांकन को महत्त्वपूर्ण एवं विशेष स्थान प्रदान किया है। इस पाठ्यक्रमानुसार विषय पर कोई भी पुस्तक उपलब्ध न थी। पाठ्यक्रम में कुछ शीर्षक तो ऐसे सम्मिलित किये गये हैं जिन पर हिन्दी भाषा में कोई भी पुस्तक उपलब्ध नहीं है, जैसे भारत में परीक्षा का इतिहास तथा शैक्षिक उद्देश्य। इस प्रकार के शीर्षकों को प्रस्तुत पुस्तक में उपयुक्त स्थान प्रदान किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक पूरी तरह राजस्थान विश्वविद्यालय के बी एड पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई है, किन्तु अन्य विश्वविद्यालयों के छात्र भी इस पुस्तक से लाभ उठा सकेंगे, ऐसी पूर्ण आशा है।

प्रस्तुत पुस्तक दो खण्डों में विभक्त की गई है। प्रथम खण्ड में मूल्यांकन तथा मापन विधियों की चर्चा है तथा द्वितीय खण्ड में सांख्यिकीय सिद्धान्तों की व्यावहारिक विवेचना की गई है।

पुस्तक लेखन-कार्य हेतु अनेक अंग्रेजी तथा हिन्दी की मूल पुस्तकों का अध्ययन किया गया है। आवश्यक स्थानों पर इनसे उद्धरण भी दिये गये हैं। इन उद्धरणों का हिन्दी अनुवाद भी सरल तथा स्पष्ट भाषा में दिया गया है। वैसे भी सम्पूर्ण पुस्तक की भाषा को सरल तथा सुगम बनाये रखने का प्रयास किया गया है। तकनीकी शब्दों की अंग्रेजी भी शब्दों के साथ ही साथ दी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक लिखने की प्रेरणा मुझे मेरे छात्रों से मिली है। वे इस प्रकार की पुस्तक के अभाव की ओर मेरा ध्यान बराबर आकर्षित करते रहे। पुस्तक उन्हीं की प्रेरणा का फल है, अतः सभी छात्रों के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। पुस्तक लेखन में मेरी

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर
कार्यालय रांगेय राघव मार्ग, आगरा-२
विक्री-केन्द्र हॉस्पिटल रोड, आगरा-३

# भूमिका

संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ब्रिटेन आदि देशो मे गत वर्षों में मापन एवं मूल्यांकन के क्षेत्र में बड़ी भारी प्रगति हुई है। यह प्रगति सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनो ही रूपो मे हुई है। सैद्धान्तिक रूप मे मापन एवं मूल्यांकन विषय पर अनेक पुस्तिकाओ तथा परीक्षणो का प्रकाशन हुआ है। इस प्रगति का, विशेषकर सैद्धान्तिक पक्ष का, भारत पर भी प्रभाव पड़ा है, परिणामस्वरूप हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में मापन एवं मूल्यांकन सम्बन्धी अनेक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ है। भारत मे मापन तथा मूल्यांकन के व्यावहारिक पक्ष की उतनी अधिक प्रगति नहीं हुई है।

राजस्थान विश्वविद्यालय ने बी एड पाठ्यक्रम मे मापन एवं मूल्यांकन को महत्त्वपूर्ण एवं विशेष स्थान प्रदान किया है। इस पाठ्यक्रमानुसार विषय पर कोई भी पुस्तक उपलब्ध न थी। पाठ्यक्रम में कुछ शीर्षक तो ऐसे सम्मिलित किये गये हैं जिन पर हिन्दी भाषा में कोई भी पुस्तक उपलब्ध नहीं है, जैसे भारत मे परीक्षा का इतिहास तथा शैक्षिक उद्देश्य। इस प्रकार के शीर्षकों को प्रस्तुत पुस्तक में उपयुक्त स्थान प्रदान किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक पूरी तरह राजस्थान विश्वविद्यालय के बी एड पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई है, किन्तु अन्य विश्वविद्यालयों के छात्र भी इस पुस्तक से लाभ उठा सकेंगे, ऐसी पूर्ण आशा है।

प्रस्तुत पुस्तक दो खण्डों मे विभक्त की गई है। प्रथम खण्ड मे मूल्यांकन तथा मापन विधियो की चर्चा है तथा द्वितीय खण्ड मे सांख्यिकीय सिद्धान्तो की व्यावहारिक विवेचना की गई है।

पुस्तक लेखन-कार्य हेतु अनेक अंग्रेजी तथा हिन्दी की मूल पुस्तकों का अध्ययन किया गया है। आवश्यक स्थानो पर इनसे उद्धरण भी दिये गये हैं। इन उद्धरणों का हिन्दी अनुवाद भी सरल तथा स्पष्ट भाषा मे दिया गया है। वैसे भी सम्पूर्ण पुस्तक की भाषा को सरल तथा सुगम बनाये रखने का प्रयास किया गया है। तकनीकी शब्दो को अंग्रेजी के शब्दो के साथ ही साथ दी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक लिखने की प्रेरणा मुझे मेरे छात्रों से मिली है। वे इस प्रकार की पुस्तक के अभाव की ओर मेरा ध्यान बराबर आकर्षित करते रहे। पुस्तक इन्हीं की प्रेरणा का फल है, अतः सभी छात्रो के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। पुस्तक लेखन में मेरी

खण्ड १

# मापन एवं मूल्यांकन

## (MEASUREMENT AND EVALUATION)

१

# ✓ मूल्यांकन
# (EVALUATION)

## १. अर्थ

शिक्षा-प्रक्रिया में शैक्षिक उद्देश्य तथा शिक्षण के अतिरिक्त मूल्यांकन भी आवश्यक है। मूल्यांकन हमें शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा तथा शिक्षण-कार्य की सफलता तथा असफलताओं से अवगत कराकर उनके सुधार हेतु परामर्श देता है। मूल्यांकन हमें छात्रों के व्यवहार में हुए परिवर्तनों से भी अवगत कराता है। मूल्यांकन शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त उपयोगी है। मूल्यांकन की उपयोगिता की चर्चा करने से पूर्व मूल्यांकन का अर्थ जान लेना आवश्यक है।

'मूल्यांकन' अंग्रेजी भाषा के 'इवैलुएशन' (Evaluation) शब्द के स्थान पर हिन्दी भाषा में प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी भाषा का 'इवैलुएशन' शब्द अंग्रेजी भाषा की क्रिया 'टू इवैलुएट' (To evaluate) से बना है। यह क्रिया स्वयं 'वैल्यू' (Value) संज्ञा से बनी है। इस प्रकार 'इवैलुएशन' का अर्थ किसी तथ्य के सम्बन्ध में निर्णय लेने तथा निष्कर्ष निकालने से है। हिन्दी भाषा का 'मूल्यांकन' शब्द इसकी व्याख्या स्पष्ट रूप से करता है। 'मूल्यांकन' दो शब्दों—मूल्य+अंकन' से बना है जिसका अर्थ है 'मूल्य आंकना' अर्थात् एक तथ्य, घटना, विचार आदि का समकक्ष तथ्य, घटना, विचारादि के सदर्भ में स्थान नियत करना, निर्णय लेना, एक अनुभव के सम्बन्ध में निष्कर्ष निकालना, तथा एक स्थिति का सम्पूर्ण वातावरण के सन्दर्भ में ज्ञान करना।

शिक्षा में मूल्यांकन का अर्थ पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर छात्रों द्वारा अर्जित अनुभवों की जाँच करना है। इस जाँच द्वारा दो तथ्यों का एक ही साथ पता लगाया जाता है :

(i) पूर्व-निर्धारित उद्देश्य कहाँ तक प्राप्त हुए।
(ii) शिक्षण द्वारा किस सीमा तक छात्रों के अनुभवों में परिवर्तन हुए।

इस प्रकार मूल्यांकन उद्देश्य तथा शिक्षण से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। उद्देश्य (लक्ष्य), शिक्षण (साधन), तथा मूल्यांकन (प्रमाण—evidence) एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। इनमें उद्देश्य केन्द्रीय स्थान पर आते हैं तथा शिक्षण और मूल्यांकन बाद में लिये जाते हैं।

## २. मापन और मूल्यांकन (Measurement and Evaluation)

मूल्यांकन का अर्थ समझने के लिए मूल्यांकन तथा मापन में अन्तर को स्पष्ट करना आवश्यक है। मापन से हमारा तात्पर्य किसी वस्तु का मान करना या परिमाणात्मक मूल्य प्राप्त करना है। जैसे, कमरे की लम्बाई ५ मीटर है तथा छात्र ने ५२ अंक प्राप्त किये हैं। यहाँ पर मापन हमें कमरे की लम्बाई तथा छात्र की स्थिति का मान बताता है किन्तु सम्पूर्ण वातावरण के सन्दर्भ में उसकी स्थिति नहीं बताता है। यह कार्य मूल्यांकन है। मापन एक अपूर्ण सम्बोध है। छात्र ने ५२ अंक प्राप्त किये, हमें यह कथन छात्र के सम्बन्ध में सम्पूर्ण तथा विश्वसनीय सूचना प्रदान नहीं करता है। इस अंक से हम छात्र के बारे में यथार्थ निश्चय नहीं कर पाते हैं। छात्र की कक्षा में कितने छात्र थे, कक्षा के उच्चतम तथा न्यूनतम अंक कितने हैं, छात्र की कक्षा में क्या स्थिति है आदि बातों के सन्दर्भ में यदि उसके ५२ अंकों का उल्लेख किया जाता तो हम छात्र के बारे में यथार्थ निश्चय तथा निर्णय ले सकते। इन सभी सन्दर्भों में छात्र का अध्ययन मूल्यांकन का कार्य है। मापन एक स्थिति का ज्ञान देता है किन्तु सम्पूर्ण वातावरण से पृथक रहता है, जबकि मूल्यांकन सम्पूर्ण वातावरण के सन्दर्भ में स्थिति का ज्ञान कराता है। मापन में विषय-वस्तु के एक ही पहलू पर ध्यान दिया जाता है।[1] 'ब्रेडफील्ड तथा मारडक' ने मापन और मूल्यांकन में अन्तर बताते हुए लिखा है कि मापन में किसी घटना या तथ्य के लिए प्रतीक (Symbols) निर्धारित किये जाते हैं, जबकि मूल्यांकन में घटना या तथ्य का मूल्य ज्ञात किया जाता है।[2] संक्षेप में मापन द्वारा परिमाणात्मक निर्णय लिये जाते हैं, जबकि मूल्यांकन में गुणात्मक निर्णय लिये जाते हैं।

1. "Evaluation is a relatively new technical term introduced to designate a more comprehensive concept of measurement than is applied in conventional tests and examinations....... The emphasis in measurement is upon single aspects of subject matter achievement or specific skills and abilities but....the emphasis in evaluation is upon broad personality changes and major objectives of an educational programme These include attitudes, interests, ideals, ways of thinking, work-habits and personal and social adaptability."—Wrightstone . 'Evaluations', *Encyclopedia of Educational Research*, Macmillan & Co, N Y, p 403.
2. Roy E Summerfield · *The High School Journal*, Vol 48, No 7, April 1965, pp 434-38.

### ३. मान्यताएँ (Assumptions)

समरफील्ड (Roy E Summerfield) ने मूल्यांकन में निहित निम्नांकित आठ मान्यताओं का उल्लेख किया है -

(i) शिक्षा का कार्य व्यक्तियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन करना है। शिक्षा द्वारा छात्र नये विचार, कौशल तथा अभिरुचियाँ प्राप्त करते हैं।

(ii) वांछित परिवर्तन ही शैक्षिक उद्देश्यों का रूप ग्रहण करते हैं। अतः वांछित परिवर्तन या शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण छात्रों के स्तर, आवश्यकता या तत्कालीन समाज की माँग का ध्यान में रखकर करना चाहिए।

(iii) मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा वह सीमा ज्ञात की जाती है जिस तक शैक्षिक उद्देश्य प्राप्त किये गये हैं।

(iv) मानव व्यवहार अत्यन्त जटिल है अतः उसका मूल्यांकन किसी एक ही तथ्य, संख्या या प्रदत्त द्वारा सम्भव नहीं है। इसके लिए व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों (Dimensions) का ज्ञान आवश्यक है।

(v) व्यक्ति जिस विधि से अपने विचारों को संगठित तथा परस्पर सम्बन्धित करते हैं, उस विधि का ज्ञान भी आवश्यक है।

(vi) मूल्यांकन केवल कागज, कलम तथा परीक्षण तक ही सीमित नहीं है। इसके लिए वे सभी तरीके अपनाने पड़ते हैं जिनसे यह पता लग सके कि वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु छात्र क्या प्रगति कर रहा है या नहीं है।

(vii) मूल्यांकन तथा शिक्षण विधि छात्र के सीखने को प्रभावित करती है।

(viii) मूल्यांकन का दायित्व विद्यालय—व्यक्ति तथा अभिभावक सभी पर ही है।

### ४. मूल्यांकन का क्षेत्र (Scope of Evaluation)

मूल्यांकन के क्षेत्र से हमारा तात्पर्य उन क्षेत्रों से है जिनमें व्यवहारगत परिवर्तन हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, किसका मूल्यांकन किया जाय—प्रश्न का उत्तर ही मूल्यांकन का क्षेत्र निर्धारित करता है। मूल्यांकन द्वारा हम व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों (Dimensions) का पता लगाते हैं। ये आयाम शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, सामाजिक तथा नैतिक क्षेत्रों से सम्बन्धित हो सकते हैं। व्यक्तित्व के परस्पर इतने अधिक सम्बन्धित होते हैं कि उनका पृथक्-पृथक् मूल्यांकन किन्तु फिर भी सुविधा हेतु उन्हें नीचे लिखे गए पहलुओं [illegible] द्वारा से ज्ञान

| | |
|---|---|
| २ बोध | ३ प्रयोग |
| ५ संश्लेषण | ६ मूल्यांकन |

[illegible] (Knowledge), बोध (Comprehension) प्रयोग (application), विश्लेषण (Analysis), संश्लेषण (Synthesis) तथा मूल्यांकन (Evaluation) के क्षेत्रों में रखता है।

## ५. मूल्यांकन की प्रविधियाँ तथा उपकरण (Techniques and Tools)

मूल्यांकन का कार्य व्यक्ति के अनेक आयामों को स्पष्ट करना है अतः इसके लिए वे सभी विधियाँ तथा उपकरण काम में आते हैं जिनसे हम इन आयामों का अध्ययन कर सकें। इन प्रविधियों तथा उपकरणों के निम्नांकित उल्लेखनीय हैं:

१ अप्रमापीकृत प्रविधियाँ तथा उपकरण (Non-Standardised Techniques and Tools)—

- A संचयी अभिलेख पत्र
- B समाजमिति
- C प्रगति प्रतिवेदन
- D आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख (Anecdotal Record)
- E आत्मकथा (Autobiography)
- F निर्धारण मान (Rating Scale)
- G व्यक्ति अध्ययन (Case Study)
- H प्रश्नावली (Questionnare)
- I साक्षात्कार (Interview)
- J प्रक्षेपण प्रविधियाँ (Projective Techniques)

२. प्रमापीकृत प्रविधियाँ व उपकरण (Standardised Techniques and Tools)—

- A बुद्धि परीक्षाएँ (Intelligence Tests)
- B निष्पत्ति परीक्षाएँ (Achievement Tests)
- C अभियोग्यता परीक्षाएँ (Aptitude Tests)
- D रुचि परीक्षाएँ (Interest Inventories)
- E व्यक्तित्व परीक्षाएँ (Personality Tests)

इन सभी प्रमापीकृत तथा अप्रमापीकृत प्रविधियों तथा उपकरणों का सविस्तार वर्णन आगामी अध्यायों में किया गया है।

## ६. मूल्यांकन में सोपान (Steps In Evaluation)

मूल्यांकन कार्य हेतु निम्नांकित सोपानों (Steps) की आवश्यकता पड़ती है :

(i) शैक्षिक उद्देश्यों का चयन
(ii) शैक्षिक उद्देश्यों का विशिष्टीकरण (Specification)
(iii) स्थिति का ज्ञान (Identification of the Shtuation)

स्थिति-ज्ञान से तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमे छात्रों द्वारा निश्चित व्यवहार करना है और फिर उसका माप करना है। मूल्यांकन कार्य हेतु इस प्रकार की स्थिति का निर्माण करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, यदि हम छात्रों की पढ़ने की गति का माप करना चाहते हैं तो हमे ऐसी स्थिति का निर्माण करना पड़ेगा जिसमे छात्र पढ़ने की गति सम्बन्धी कार्य करें और उस कार्य का माप हो सके।

(iv) परीक्षण-चयन (Selection of techniques and tools)।

(v) परीक्षण तथा प्राविधियों का निर्माण।

यह निश्चित हो जाने पर अध्यापक किन-किन प्राविधियों तथा उपकरणों से काम लेगा उनका निर्माण करना पड़ता है।

(vi) प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण करना।

(vii) निष्कर्ष निकालना और यह देखना कि छात्र ने पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति मे किस सीमा तक प्रगति की है, अर्थात् उनके व्यवहार मे कितने परिवर्तन हुए हैं।

## ७. मूल्यांकन से लाभ

आधुनिक मूल्यांकन से निम्नांकित लाभ हैं :

(i) शिक्षण-कार्य में सुधार—मूल्यांकन बताता है कि पूर्व-निर्धारित उद्देश्य किस सीमा तक प्राप्त कर लिये गये हैं। यदि इनकी प्राप्ति सन्तोषपद नहीं है तो यह समझा जाता है कि शिक्षण-कार्य सही ढंग से नहीं हुआ है। अतः मूल्यांकन निष्कर्षों के आधार पर शिक्षण-पद्धति, उपकरण तथा प्राविधियों मे सुधार किया जा सकता है।

(ii) उद्देश्यों का स्पष्टीकरण—मूल्यांकन उद्देश्यों पर आधारित होता है अतः जब तक उद्देश्यों का निर्धारण तथा स्पष्टीकरण न हो जायगा तब तक मूल्यांकन सम्भव नहीं है। मूल्यांकन करना है इसलिए उद्देश्यों का स्पष्टीकरण एवं विशिष्टीकरण करना पड़ता है।

(iii) सीखने में सुधार—यदि शिक्षा का ध्येय उद्देश्यों की प्राप्ति है तो छात्र परीक्षा को साध्य न मानकर उन महान उद्देश्यों की प्राप्ति का एक साधन मानेंगे, परिणामस्वरूप उनके सीखने मे सुधार होगा क्योंकि अब उनके पढ़ने का ध्येय परीक्षा उत्तीर्ण करना न रहकर उद्देश्यों की प्राप्ति है।

(iv) पाठ्यक्रम सुधार—उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उचित पाठ्यक्रम तथा शिक्षा-क्रम का निर्माण करना पड़ता है। शिक्षाक्रम तथा पाठ्यक्रम दोनों को ही अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से इस प्रकार बनाना पड़ता है जिसमे उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

(v) मूल्यांकन निर्देशन हेतु आवश्यक—मूल्यांकन प्रक्रिया से छात्रों के व्यक्तित्व से सम्बन्धित प्राप्त सूचनाएँ निर्देशन के [illegible]

शेष के व्यक्तित्व के सभी आयामों पर प्रकाश डालता है। इससे उसे उचित शैक्षिक
या व्यावसायिक निर्देशन देना सरल हो जाता है।

(vi) शैक्षिक कार्य प्रारम्भ करने का बिन्दु ज्ञात होता है। शिक्षक मूल्यांकन
छात्रों के पूर्वानुभवों का ज्ञान प्राप्त करता है, इन्हीं अनुभवों को आधार बनाकर
शिक्षक आगे बढ़ता है।

(vii) सीखने को प्रेरणा मिलती है।

(viii) छात्रों को अपने मजबूत तथा कमजोर पहलुओं का ज्ञान होता है।

(ix) छात्रों की रुचि तथा रुझानों का शीघ्रता से पता चल जाता है।

(x) छात्रों की कक्षोन्नति तथा कक्षा-विभाजन में सुविधा होती है।

### अभ्यासार्थ प्रश्न

. मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं ? वर्तमान शिक्षा-क्षेत्र में इसे क्या स्थान प्राप्त है ?

मापन किसे कहते हैं ? मापन एवं मूल्यांकन में क्या अन्तर है ? इन दोनों में कौन श्रेष्ठ है ?

३. मूल्यांकन के आधारभूत सिद्धान्त क्या है ? किसी छात्र-समूह का मूल्यांकन करते समय आप कौनसे कदम उठायेंगे ?

४. मूल्यांकन किसे कहते हैं ? मूल्यांकन किन-किन मान्यताओं को मानकर चलता है ?

५. मूल्यांकन के क्षेत्र की विवेचना करते हुए इसके लाभों पर प्रकाश डालिए।

२

# शैक्षिक उद्देश्य

## (EDUCATIONAL OBJECTIVES)

### १ परिभाषा

शिक्षा एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। शिक्षा के उद्देश्य समय-समय पर समाज की आवश्यकतानुसार बदलते रहते है। कुछ लोग शैक्षिक उद्देश्यों को अत्यन्त संकीर्ण रूप मे लेते हैं। इन लोगो के अनुसार निर्धारित पाठ्यक्रम को पढा देना या छात्रो द्वारा सीख लेना ही शैक्षिक उद्देश्य होता है, किन्तु निर्धारित पाठ्यक्रम को सीख लेना ही शैक्षिक उद्देश्य नही होता है। शिक्षा का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम को समाप्त कर देना नही है, वरन् शिक्षा द्वारा अन्य व्यापक तथा विस्तृत उद्देश्यो की प्राप्ति की जाती है। शिक्षा का कार्य छात्रो के व्यवहार मे वांछित परिवर्तन करना होता है। समाज जिस तरह के व्यक्तियो को चाहता है, शिक्षा उसी प्रकार के व्यवहार का विकास छात्रो मे करती है। इस तरह शिक्षा का प्रमुख कार्य छात्रो मे समाज द्वारा वांछित व्यवहारो का विकास करना है। इस दृष्टिकोण से शैक्षिक उद्देश्यो मे हमारा तात्पर्य छात्रो के व्यवहार मे पूर्व-निर्धारित परिवर्तनो से है।[1] ब्लूम तथा अन्य ने शैक्षिक उद्देश्यों की परिभाषा देते हुए लिखा है कि शैक्षिक उद्देश्यों मे हमारा तात्पर्य उन व्यवहारो के निर्माण से है जिनमे शैक्षिक प्रक्रिया द्वारा छात्रो को लाना होता है।[2] परिवर्तित व्यवहारो से हमारा तात्पर्य छात्रो की चिन्तन, मनन, अनुभव करने तथा कार्य करने की विधियों मे आवश्यक तथा वांछनीय परिवर्तन करने से है। छात्रों के व्यवहार मे परिवर्तन उनके ज्ञान, कौशल (Skills), रुचि

---

1. "Our educational objectives, therefore, are the changes we wish to produce in the child" 'The Concept of Evaluation,' Directorate of Extension Programmes for Secondary Education

2. "By educational objectives, we mean explicit formulations of the ways in which students are expected to be changed by the educative process"—Bloom, B ■ & others—'Taxonomy of Educational Objectives'

तथा अभिरुचियों के परिवर्तन के रूप में हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, जो छात्र शैक्षिक प्रक्रिया से गुजर चुका है या जिसने शिक्षा प्राप्त कर ली, तो उसके ज्ञान, कौशल रुचि तथा अभिरुचियों में परिवर्तन आवश्यक है। यदि परिवर्तन वांछित दिशा में होता है तो हम कहते हैं कि शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हो चुकी है। यदि शिक्षा प्रभावोत्पादक विधि से दी जाती है, तो छात्र पढ़ने में विभिन्न व्यवहार करेगा। अब छात्र अनेक ऐसे ज्ञान, कौशल, रुचि तथा अभिरुचियों से युक्त हो गया है जिनका शिक्षा से पूर्व छात्र के पास अभाव था।

शैक्षिक उद्देश्य अपने स्वभाव से सामान्य (General), आदर्शात्मक (Idealistic) तथा सूक्ष्म (Abstract) होते हैं। शैक्षिक उद्देश्य अपने स्वभाव में सामान्य होते हैं, अपने रूप में आदर्शात्मक तथा सूक्ष्म होते हैं तथा ये अप्राप्य होते हुए भी प्राप्य जैसे दिखाई देते हैं।

## २ शैक्षिक उद्देश्यों के प्रकार

शैक्षिक उद्देश्य दो प्रकार के होते हैं—(१) सामान्य व्यापक उद्देश्य, तथा (२) विशिष्ट कक्षा-कक्ष उद्देश्य। सामान्य व्यापक उद्देश्य मानव विकास के महत्वपूर्ण पहलुओं से सम्बन्धित होते हैं तथा ये सम्पूर्ण शिक्षा-व्यवस्था के लिए समान होते हैं। सामान्य व्यापक उद्देश्य परोक्ष होते हैं। सामान्य व्यापक उद्देश्यों के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट उद्देश्य भी होते हैं। विशिष्ट उद्देश्य प्रत्यक्ष तथा क्रियान्वित करने योग्य होते हैं। विशिष्ट उद्देश्यों के द्वारा सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति की चेष्टा की जाती है। सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों के सम्बन्ध को निम्न चार्ट द्वारा सरलता से समझा जा सकता है
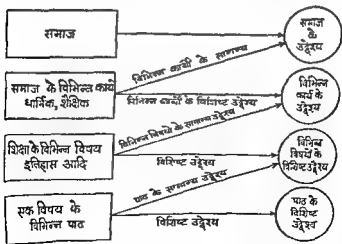
### ३. उद्देश्यों का निर्धारण

शिक्षा का प्रथम कार्य उद्देश्यों का निर्धारण करना है। उपयुक्त तथा पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों के अभाव में किसी भी प्रकार की फलदायक शिक्षा संभव नहीं है। उद्देश्यों के न होने से एक ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जायगी जिसे हम शून्य (Vaccum) की अवस्था कह सकते हैं और शून्यावस्था में किसी प्रकार की शिक्षा संभव नहीं है। शून्यावस्था को समाप्त करने के हेतु उद्देश्यों का निर्धारण करना पड़ता है। उद्देश्य-निर्धारण सफल शिक्षण की कुंजी है। उद्देश्य-निर्धारण के द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि हम किन व्यवहारों का विकास छात्रों में करना चाहते हैं, उन्हें कौनसा ज्ञान देना चाहते हैं, किस प्रकार की कुशलता में विकसित करना चाहते हैं तथा कौन-कौनसी रुचियों तथा अभिवृत्तियों का विकास करना चाहते हैं।

उद्देश्यों के निर्धारण के समय निम्नांकित चार बातें उल्लेखनीय हैं [1]

१ उद्देश्य सामाजिक रूप से मान्य हों।
२ उद्देश्य में प्राप्यशीलता दृष्टिगोचर होनी चाहिए।
३ उद्देश्य छात्रों के समक्ष कुछ कार्य प्रस्तुत करें।
४ उद्देश्य छात्रों तथा विद्यालय के द्वारा स्वीकार किये जाने वाले हों।

शैक्षिक उद्देश्य सामाजिक रूप से मान्य होने चाहिए। यदि उद्देश्य ऐसे है जो समाज के आदर्शों के अनुरूप नहीं हैं तो समाज उन्हें स्वीकार नहीं करेगा। अतः शैक्षिक उद्देश्य सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप होने चाहिए।

उद्देश्य ऐसे होने चाहिए जो ऐसे मालूम पड़ें जैसे वे प्राप्त किये जा सकते हैं। यदि उद्देश्य स्पष्ट रूप से अप्राप्यशील दिखाई देने वाले हों तो वे छात्रों को कभी भी प्रेरणा नहीं दे पायेंगे।

उद्देश्य ऐसे हों जो छात्रों के सम्मुख कुछ समस्या पैदा करें और उनके लिए एक चुनौती (Challange) दें।

अन्त में उद्देश्य ऐसे होने चाहिए जिन्हें छात्र तथा विद्यालय दोनों स्वीकार कर लें। यदि छात्र या विद्यालय उद्देश्यों को स्वीकार नहीं करते हैं तो वे व्यर्थ ही रहेंगे।

उद्देश्यों का निर्धारण करना एक कठिन कार्य है। इसके लिए शिक्षक को बड़ी लगन से परिश्रम करना पड़ता है। उद्देश्य-निर्धारण के समय शिक्षक को अपने पूर्वानुभव तथा उसके द्वारा संगृहीत अनेक प्रकार के प्रदत्तों (Data) का उपयोग करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा को सीखने के विभिन्न सिद्धान्तों तथा शिक्षा-दर्शन

---

1 "An educational objective (1) must have the opproval of society or at least of some articulate groups, (2) must be susceptible of being achieved through instruction, (3) must propose tasks that are within the capacities of the school population; and (4) must be actually accepted and undertaken by the schools"—Wesley and Wronski *Teaching Social Studies in High School*, p 72

## ५ मूल्यांकन और शैक्षिक उद्देश्य

शैक्षिक उद्देश्य और मूल्यांकन में गहरा सम्बन्ध है। बिना मूल्यांकन के शैक्षिक उद्देश्य व्यर्थ है और बिना शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण के मूल्यांकन सम्भव नहीं है। जब हम शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण कर देते हैं और उनके मूल्यांकन की व्यवस्था नहीं करते तो हमें न तो यह ज्ञान होगा कि जिस व्यवहारगत परिवर्तन हेतु उद्देश्यों का निर्धारण किया गया था, वे परिवर्तन छात्रों के व्यवहार में हुए अथवा नहीं, इन परिवर्तनों की सीमा भी ज्ञात नहीं होगी, और न हमें शैक्षिक उद्देश्य के औचित्य का ही भान होगा। ठीक इसी प्रकार यदि उद्देश्य-निर्धारण नहीं करते और मूल्यांकन करने की चेष्टा करते हैं, तब समस्या यह उठेगी कि हम किस वस्तु या परिवर्तनों का मूल्यांकन करें, क्योंकि मूल्यांकन जैसा कि पहले ही कहा गया है शून्यावस्था में नहीं हो सकता, शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण इस शून्यावस्था की पूर्ति में करते हैं।

वास्तव में हम सर्वप्रथम सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं। इनके आधार पर शिक्षा-व्यवस्था नियोजित की जाती है, कक्षाएँ बनाई जाती हैं, शिक्षाक्रम (Curiculum) बनता है, पाठ्यक्रम (Syllabus) निर्धारित होते हैं तथा शिक्षण विधियों और शिक्षण-सामग्री की व्यवस्था की जाती है। इनके माध्यम से छात्र सीखते हैं, सीखने के परिणामस्वरूप छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन होते हैं और यह पता लगाने हेतु कि शिक्षण ने छात्रों के व्यवहार में वही परिवर्तन लाये हैं जो हमारे पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों में थे, हम मूल्यांकन करते हैं। मूल्यांकन के फलस्वरूप प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर हम अपने उद्देश्यों का पुनर्निर्धारण तथा शिक्षण कार्य में उपयुक्त परिवर्तन करते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन उद्देश्य तथा शिक्षण-कार्य दोनों ही को प्रभावित करता है। फिर जिस प्रकार के उद्देश्य होंगे, वैसे ही शिक्षण-कार्यों को सम्पादित करना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में, उद्देश्य शिक्षण को प्रभावित करते
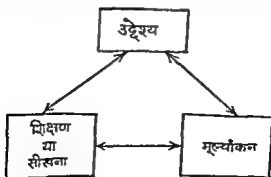
है और जिस प्रकार के उद्देश्य तथा शिक्षण-सामग्री होगी, उसी के उपयुक्त मूल्यांकन विधियों तथा उपकरणों का निर्माण करना पड़ेगा अर्थात् मूल्यांकन स्वयं उद्देश्य तथा शिक्षण के द्वारा प्रभावित होता है। संक्षेप में, उद्देश्य, शिक्षण या सीखना तथा उद्देश्य तीनों ही एक दूसरे को परस्पर प्रभावित करते हैं। यह पारस्परिक प्रभाव पीछे रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट है।

## ६. उद्देश्य-आधारित शिक्षण (Objective-Based Instructions)

पीछे रेखाचित्र में यह स्पष्ट है कि प्रत्येक अध्यापक को उद्देश्यों के आधार पर ही शिक्षण-कार्य करना चाहिए। यदि शिक्षण उद्देश्यों के अनुरूप नहीं है तो उद्देश्यों का निर्धारण व्यर्थ रहेगा और मूल्यांकन से भी लाभप्रद निष्कर्ष न निकाले जा सकेंगे। वास्तव में छात्रों के व्यवहार-परिवर्तन का उद्देश्य सैद्धान्तिक पहलू है और शिक्षण उसका प्रयोगात्मक पक्ष है। उद्देश्यों में उन व्यवहारगत परिवर्तनों का उल्लेख होता है और शिक्षण द्वारा उन परिवर्तनों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। अतः शिक्षण का मुख्य ध्येय पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करना ही होना चाहिए।

इस सम्बन्ध में हमें थोड़ा मानसिक प्रक्रिया का अध्ययन करना चाहिए। शिक्षण तभी सफल माना जाता है जब उसमें छात्र सीखें। सीखना अनुभवों से होता है, अतः शिक्षण का ध्येय छात्रों के अनुभवों में वृद्धि करना होना चाहिए। अनुभव तभी सम्भव है जब छात्र विभिन्न इन्द्रियों के द्वारा विचार ग्रहण करें। विचार ग्रहण-शीलता के लिए उपयुक्त परिस्थिति (Situation) की आवश्यकता पड़ती है। इन्द्रियाँ बाह्य परिस्थिति के प्रति प्रतिक्रियाएँ करके अनुभव प्राप्त करती हैं। परिस्थितियाँ छात्र क्रियाओं द्वारा निर्मित होती हैं तथा छात्र क्रियाएँ उद्दीपक (Stimulus) का परिणाम होती हैं, अतः हम कह सकते हैं, कि उद्देश्यों का विकास छात्र क्रियाओं से प्रारम्भ होता है। छात्र जिस स्थिति में है, उद्देश्य-निर्धारण के समय उस स्थिति की अवहेलना नहीं की जा सकती है। इसी स्थिति को आधार बनाकर शिक्षण-कार्य तथा मूल्यांकन किया जाता है। जब अध्यापक इस स्थिति से विचलित हो जाता है तब उसका शिक्षण न तो उद्देश्यों के अनुसार ही रह पाता है, न उसका मूल्यांकन ही सम्भव है तथा न उस शिक्षण से वांछित व्यवहारगत परिवर्तन ही सम्भव होते हैं।

उद्देश्य-आधारित पदों के द्वारा पूर्व-निर्धारित शैक्षणिक उद्देश्यों की दिशा में छात्रों की निष्पत्तियों के सम्बन्ध में तथ्य एकत्रित किये जाते हैं। उद्देश्य पूर्व-निर्धारित व्यवहारगत परिवर्तनों का उल्लेख करता है अतः प्रश्न-पद उद्देश्यों पर आधारित होने चाहिए। उद्देश्य-आधारित प्रश्न-पद पूर्व-निर्धारित शैक्षणिक उद्देश्यों के भार (Weights) के आधार पर निर्मित किये जाते हैं। प्रत्येक शैक्षणिक उद्देश्य का उसके महत्त्व के अनुसार पहले ही भार प्रदान कर दिया जाता है। उद्देश्य-आधारित शिक्षण हेतु अध्यापक पहले से ही उद्देश्यों के महत्त्व, कठिनाई स्तर, वांछित श्रम तथा समय के आधार पर महत्त्व प्रदान कर सकता है। नीचे एक इसी प्रकार की योजना है।

उसे उच्च शिक्षालयों में प्रवेश मिलता था। विश्वविद्यालयी शिक्षा में प्रवेश पाने का यह एक अनुमति-पत्र था। अतः इसका नाम 'प्रवेश परीक्षा' रखा गया।

सन् १८८२ में भारतीय शिक्षा आयोग जिसे हण्टर आयोग भी कहते हैं, का गठन किया गया। इस आयोग ने भी इसी परीक्षा-प्रणाली का अनुमोदन किया। इस प्रकार वुड घोषणा-पत्र में शिक्षा के जिन महान् और उपयोगी उद्देश्यों की चर्चा की गई थी, हण्टर आयोग ने उनकी प्राप्ति हेतु कोई भी प्रयास नहीं किया। घोषणा-पत्र शिक्षा को जीवनोपयोगी बनाना चाहता था। इसके लिए परीक्षा-सुधार कार्यक्रम अत्यन्त आवश्यक थे, किन्तु हण्टर आयोग ने इस दिशा में कुछ भी प्रशंसनीय प्रयास नहीं किये। प्रवेश परीक्षा अब मैट्रीकुलेशन परीक्षा (Matriculation Examination) कहलाने लगी इस परीक्षा का उद्देश्य हाई स्कूल के छात्रों को उत्तीर्ण होने पर उच्च शिक्षा में प्रवेश लेने की अनुमति देना मात्र था। उसका परिणाम यह हुआ कि हाई स्कूलों के छात्रों के सम्मुख शिक्षा का केवल एकमात्र उद्देश्य रह गया था कि कैसे भी मैट्रीकुलेशन परीक्षा उत्तीर्ण कर ली जाय, जिससे वे उच्च शिक्षा ग्रहण कर सकें और तदोपरान्त किसी अच्छी सरकारी नौकरी पर लग सकें। उस समय सरकारी नौकरियाँ बड़ी ही आकर्षक तथा सम्मानप्रद मानी जाती थी। इस समय की शिक्षा की कोई व्यावहारिक उपयोगिता न थी, वह तो सरकारी नौकरी प्राप्त करने का एक साधन मात्र रह गई थी।

इस समय में प्रचलित सहायता-अनुदान प्रणाली ने परिणामों को और भी खराब कर दिया था। अनुदान प्रदान करने में मैट्रीकुलेशन परीक्षा परिणामों का काफी विचार किया जाता था। विद्यालय के परीक्षा परिणाम अच्छे हैं तो उसे सहायता अनुदान भी अच्छा मिलता था, परिणामस्वरूप विद्यालय हाई स्कूल की परीक्षा में बिठाने से पूर्व छात्र की अच्छी प्रकार जाँच कर लेते थे कि वह उत्तीर्ण होने योग्य है अथवा नहीं। इसके लिए विद्यालयों ने प्रत्येक कक्षा-स्तर पर परीक्षाएँ प्रारम्भ कर दी। ये परीक्षाएँ काफी कठिन होती थी। इन आन्तरिक परीक्षाओं में वही उत्तीर्ण हो पाते थे जो काफी परिश्रमी तथा बुद्धिमान होते थे। इससे अपव्यय तथा अवरोधन की समस्या पैदा हो गई।

सन् १९०२ ई० में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग का गठन किया गया। अपने प्रतिवेदन में आयोग ने तत्कालीन परीक्षा-प्रणाली की तीव्र आलोचना की। आयोग ने कहा कि विश्वविद्यालय शिक्षा को परीक्षाओं से कम महत्त्व दिया जाता है और परीक्षाओं को *शिक्षा से कहीं अधिक महत्त्व दिया जाता है।*[1] तत्कालीन परीक्षा-

1. ".......The greatest evil from which the system of University education suffers in India is that teaching is subordinated to examination and not examination to teaching."

—The Indian Universities Commission, 1902.

प्रणाली के दोषों का अनावरण होने के पश्चात् परीक्षा के क्षेत्र में कुछ सुधार किये गये। इन सुधारों में प्रमुख सुधार प्राथमिक स्तर पर भी परीक्षा प्रारम्भ करना था। अब छात्रों की दो स्तरों पर परीक्षा होने लगी—प्रथम, प्राथमिक (Primary) स्तर के बाद और द्वितीय, सेकेण्डरी स्तर पर। अब सेकेण्डरी स्तर की परीक्षा को एंग्लो-वर्नाकूलर (Anglo-Vernacular) परीक्षा कहा जाने लगा।

सन् १६०४ में लार्ड कर्जन के प्रस्ताव (Resolution) के आधार पर बम्बई, मद्रास, संयुक्त प्रान्त (अब उत्तर प्रदेश) तथा मध्य प्रदेश प्रान्तों में शिक्षा विभाग भी परीक्षा लेने का कार्य करते थे, किन्तु विश्वविद्यालय इन विभागीय परीक्षाओं को सम्मान तथा समता की दृष्टि से नहीं देखते थे। वे अपनी परीक्षाओं को उत्तम समझते थे। फलतः ये विभागीय परीक्षाएँ अधिक प्रचलित न हो पाईं।

सन् १६१३ के सरकारी प्रस्ताव (Resolution) ने प्रयोगात्मक परीक्षाओं तथा आन्तरिक मूल्यांकन की आवाज उठाई। प्रस्ताव में तत्कालीन परीक्षा-प्रणाली पर गम्भीर दोषारोपण किया गया और उनके निराकरण हेतु प्रयोगात्मक परीक्षाएँ तथा आन्तरिक मूल्यांकन की व्यवस्था करने का सुझाव दिया। परीक्षा-सुधार प्रयासों में यह पहला व्यावहारिक सुझाव था।

सैडलर आयोग ने जिसे कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग भी कहते हैं, परीक्षा सुधार की चर्चा करते हुए विकल्प प्रश्न, अंक प्रदान करने की यांत्रिक विधि तथा 'ग्रेस मार्क' (Grace marks) की व्यवस्था करने के मूल्यवान सुझाव दिये। आयोग ने सर्वप्रथम देश में इण्टरमीडियेट कालेज स्थापित करने का सुझाव दिया और कहा कि इण्टरमीडियेट परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त ही छात्र को विश्वविद्यालय में प्रवेश मिलना चाहिए। परीक्षा लेने के लिए पृथक बोर्ड बनने चाहिए। आयोग ने कहा कि प्रत्येक प्रान्त में एक-एक बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी एण्ड इण्टरमीडियेट एजूकेशन की स्थापना की जाय। आयोग के सुझावों को मानकर यू० पी०, पंजाब व बिहार प्रान्तों में शिक्षा बोर्डों की स्थापना की गई और हाई स्कूल तथा इण्टरमीडियेट स्तर तक की परीक्षा लेने का कार्य इन्हें सौंप दिया गया।

सन् १६२७ ई० में हर्टाग समिति ने तत्कालीन शिक्षा-व्यवस्था की आलोचना करते हुए कहा कि सम्पूर्ण शिक्षा परीक्षा-केन्द्रित है। शिक्षा-जगत में परीक्षा का भय तथा आतंक छाया हुआ है। इस समय मैट्रीकुलेशन परीक्षा दूषित होने के कारण असफल होने वाले छात्रों की संख्या काफी अधिक थी। इससे छात्रों का एक बड़ी मात्रा में श्रम, समय तथा धन व्यर्थ जा रहा था। दोषों के निराकरणार्थ समिति ने मिडिल वर्नाकूलर विद्यालयों की स्थापना का सुझाव दिया। समिति ने औद्योगिक तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रम चालू करने की भी सिफारिश की।

सन् १६४४ में युद्धोपरान्त की शिक्षा-व्यवस्था की नई रूपरेखा बनाने हेतु सार्जेण्ट योजना बनाई गई। इस योजना ने शिक्षा-व्यवस्था की यह कहकर तीव्र आलोचना की कि इसमें परीक्षा को आवश्यकता से कहीं अधिक महत्त्व दिया जाता है।

(v) अन्त में आयोग ने कहा कि अध्यापकों को दिन-प्रतिदिन छात्रों की जाँच करने हेतु उपयुक्त वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का विकास किया जाय।
(vi) वार्षिक परीक्षा के परिणामों में छात्र द्वारा वर्ष भर में किये गये कक्षा कार्य का भी ध्यान रखा जाय। प्रश्न-पत्र के लिए निर्धारित सम्पूर्ण अंकों के एक-तिहाई अंक वर्ष भर के कार्य के लिए निर्धारित कर देने चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (१९५२-५३) ने भी जिसे मुदालियर आयोग भी कहा जाता है, प्रचलित परीक्षा-प्रणाली की तीव्र आलोचना की। आयोग ने परीक्षा-प्रणाली को पुस्तकीय, यांत्रिक, परम्परागत, एकक तथा सर्दुचित बताया।[1] आयोग ने इन दोषों के निराकरण हेतु पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण का अमूल्य सुझाव दिया। परीक्षा के अन्य दोषों के निराकरण हेतु आयोग ने निम्नांकित सुझाव दिये

(i) बाह्य परीक्षाओं तथा निबन्धात्मक प्रश्नों की संख्या यथासम्भव कम कर देनी चाहिए।
(ii) विद्यालयों में छात्रों की सम्पूर्ण प्रगति का लेखा रखा जाय। इसके लिए उपयुक्त संचयी अभिलेख पत्र रखे जायें।
(iii) कक्षोन्नति में आन्तरिक परीक्षाओं को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाय।
(iv) मूल्यांकन में संख्यात्मक प्रणाली के स्थान पर श्रेणी-प्रणाली अपनानी चाहिए।
(v) माध्यमिक पाठ्यक्रम के उपरान्त केवल एक ही अन्तिम बाह्य वार्षिक परीक्षा ली जाय।
(vi) उत्तीर्ण छात्रों को जो प्रमाण-पत्र दिया जाय उसमें विभिन्न परीक्षा विषयों के अतिरिक्त उन विषयों का नाम भी हो जो विद्यालय में पढ़ाये गये हैं किन्तु जिनमें वार्षिक परीक्षा नहीं ली गई है।
(vii) पूरक परीक्षाओं की व्यवस्था की जाय।

सन् १९५३ में माध्यमिक शिक्षा पुनर्गठन समिति ने अपने प्रतिवेदन में परीक्षा-सुधार हेतु निम्नांकित सुझाव दिये

(i) बाह्य परीक्षा-प्रणाली समाप्त करके उसके स्थान पर शिक्षक-मूल्यांकन प्रणाली प्रारम्भ की जाय।
(ii) वार्षिक मूल्यांकन छात्रों के वर्ष भर के कार्यों के मूल्यांकन पर आधारित होना चाहिए।

सन् १९५४ ई० में इण्टरनेशनल टीम (International team) ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस 'टीम' का अध्ययन-विषय माध्यमिक विद्यालयों के

1. "......bookish and mechanical, stereotyped and rigidly uniform and did not cater to the different aptitudes of the pupils "

अध्यापक तथा शिक्षाक्रम था। इस टीम का गठन भारत सरकार द्वारा किया गया। टीम ने अपने प्रतिवेदन में परीक्षा सम्बन्धी निम्नांकित सुझाव प्रस्तुत किये :

(i) परीक्षा-प्रणाली दूषित है। अध्यापक तथा छात्रों पर निजी शिक्षण (Private tutions) का बुरा प्रभाव पड़ता है। दूषित परीक्षा-प्रणाली के कारण अध्यापक तथा छात्र ही आवश्यकता से अधिक व्यस्त रहते हैं।

(ii) बाह्य परीक्षा-प्रणाली (External Examination System) शिक्षा के व्यापक तथा उदार उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधक है।

इन दोषों के निराकरण हेतु टीम ने निम्नांकित सुझाव प्रस्तुत किये :

(i) बाह्य परीक्षाओं के दबाव को यथासम्भव कम किया जाय।

(ii) निजी शिक्षण-व्यवस्था को बन्द किया जाय।

(iii) परीक्षाओं के लिए एक मान (Standard) निर्धारित किया जाय।

सन् १९६४ ई० में कोठारी आयोग की नियुक्ति भारत सरकार द्वारा की गई। आयोग ने जून १९६६ में अपना प्रतिवेदन भारत सरकार को प्रस्तुत किया। आयोग ने अपने प्रतिवेदन में भारतीय शिक्षा के हर स्तर के हर पहलू पर विस्तृत अध्ययन कर अपने मत दिये। आयोग ने मूल्यांकन को शिक्षा का एक आवश्यक अंग बताया।[1] आयोग ने मूल्यांकन के सम्बन्ध में निम्नांकित विचार प्रस्तुत किये :

(i) लिखित परीक्षाओं के सुधार हेतु मूल्यांकन की नवीन विधियाँ अपनाई जायें, जिससे परीक्षाओं में विश्वसनीयता तथा वैधता आ सके।

(ii) निम्न प्राथमिक स्तर पर मूल्यांकन का उद्देश्य छात्रों में आधारभूत दक्षताओं तथा वाञ्छनीय आदतों एवं अभिरुचियों का विकास करना होना चाहिए।

(iii) कक्षा १ से लेकर कक्षा ४ तक की कक्षाओं को एक अविभाजनीय इकाई मानना चाहिए। इस इकाई के अन्त में एक ही परीक्षा होनी चाहिए।

(iv) उच्च प्राथमिक स्तर पर लिखित परीक्षा के साथ ही साथ एक मौखिक परीक्षा भी होनी चाहिए। इस स्तर पर आन्तरिक मूल्यांकन की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

(v) संचयी आलेख-पत्र (Cumulative Record Cards) की व्यवस्था की जाय। मूल्यांकन के समय इन पत्रों को उचित स्थान दिया जाना चाहिए।

1. "...... evaluation was a continuous process, forms an integral part of the total system of education and was intimately related to educational objectives, exercised a great influence on the pupils, study habits and teachers method of instruction."

(vi) प्राथमिक स्तर के अन्त में जिला स्तर पर एक सामान्य परीक्षा की व्यवस्था की जाय। इसमें प्रमापीकृत परीक्षा की सहायता ली जाय।

(vii) प्राथमिक परीक्षा के पश्चात एक प्रमाण-पत्र दिये जाने की व्यवस्था हो।

(viii) बाह्य परीक्षाओं को सुधारा जाय। इसके लिए आयोग ने निम्न सुझाव दिये

(A) प्रश्न-पत्र निर्माताओं को प्रश्न-पत्र निर्माण हेतु उचित प्रशिक्षण दिया जाय।

(B) वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की व्यवस्था की जाय।

(C) परीक्षाएँ पूर्व-निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार हों।

(D) अंक-प्रदान विधि को वैज्ञानिक बनाया जाय।

(E) परिणामों को सार्थक बनाया जाय।



(ix) परीक्षोपरान्त प्रमाण-पत्र देने की व्यवस्था हो। प्रमाण-पत्र में बाह्य परीक्षा के विषयों का उल्लेख होना चाहिए।

(x) छात्र को अपनी श्रेणी (Division) सुधारने हेतु पुनः परीक्षा में प्रवेश पाने की अनुमति दे देनी चाहिए।

(xi) आन्तरिक मूल्यांकन का प्रमाण-पत्र भी दिया जाना चाहिए।

(xii) समय-समय पर आकस्मिक परीक्षण की व्यवस्था विद्यालयों को करनी चाहिए।

(xiii) कुछ विद्यालयों को बाह्य परीक्षा से मुक्त कर देना चाहिए और उन्हें अधिकार दे देना चाहिए कि वे अपने छात्रों का मूल्यांकन स्वयं कर सकें।

(xiv) विद्यालयों में आन्तरिक मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए। आन्तरिक मूल्यांकन में छात्र के व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू तथा आयाम (Dimension) के माप की व्यवस्था होनी चाहिए। आन्तरिक मूल्यांकन हेतु आयोग ने निम्न सुझाव दिये :

(A) आन्तरिक मूल्यांकन उन तथ्यों का भी माप करें जिनका माप बाह्य परीक्षाओं द्वारा सम्भव नहीं है।

(B) आन्तरिक मूल्यांकन हेतु अध्यापकों को उचित प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए।

(C) प्रमाण-पत्र में आन्तरिक मूल्यांकन के परिणाम बाह्य परीक्षाओं के परिणामों से पृथक दिखाने चाहिए।

(D) आन्तरिक मूल्यांकन सत्यात्मक तथा वैज्ञानिक दोनों ही रूप से
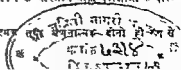
(iv) देश के माध्यमिक शिक्षा मण्डलों को परामर्श तथा तकनीकी सहायता प्रदान करना।

(v) शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को परीक्षा-सुधार सम्बन्धी कार्यक्रमों से अवगत कराना।

(vi) राज्यों में स्थित मूल्यांकन एककों (Evaluation units) की सहायता करना।

(vii) अनुसंधान कार्य करना।

(viii) प्रश्न-पत्र सुधार हेतु अनुभवी विद्वानों का सम्मेलन करना।

(ix) प्रश्न-पत्र निर्माताओं के प्रशिक्षण हेतु राज्यों की सहायता करना।

(x) प्रयासात्मक तथा मौखिक परीक्षाओं के वैध तथा विश्वसनीय उपकरणों का निर्माण करना।

(xi) मूल्यांकन की नवीनतम विधियों तथा उपकरणों से परिचित कराने की दृष्टि से अल्पकालीन प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन करना।

(आ) अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद (A I C S E)

अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद (All India Council for Secondary Education) भी परीक्षा-समस्या निवारणार्थ अनेक उल्लेखनीय कार्य कर रही है। परिषद का गठन सन् १९५५ में हुआ। इसी वर्ष अक्टूबर ३ तथा ४ को परिषद ने अपनी पहली गोष्ठी आयोजित की। गोष्ठी ने परीक्षा-सुधार हेतु एक समिति का गठन करने का निर्णय लिया। परिणामस्वरूप, सात व्यक्तियों की एक समिति का गठन किया गया। समिति ने परीक्षा-सुधार हेतु अनेक उपयोगी सुझाव दिये हैं।

फरवरी १९५६ में परिषद ने भोपाल में एक सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन ने निम्नांकित विषयों पर विचार-विमर्श किये

A. प्रश्न-पत्र सुधार, मूल्यांकन, आंतरिक कार्यों को भार प्रदान।

B. सञ्चयी अभिलेख-पत्र, आंतरिक परीक्षा में उसका स्थान।

C. आठवीं कक्षा के उपरान्त चयन-परीक्षण का प्रयोग।

D. प्रत्येक राज्य में परीक्षा अनुसंधान ब्यूरो का गठन।

इसी सम्मेलन के एक निर्णय के आधार पर एक 'परीक्षा समिति' की नियुक्ति की गई। समिति ने एक प्रश्नावली (Questionaire) बनाकर देश के विभिन्न राज्यों के माध्यमिक शिक्षा मण्डलों के पास भेजा। इस प्रश्नावली के आधार पर समिति ने परीक्षा-सुधार हेतु अनेक उपयोगी सुझाव दिये।

सन् १९५७ में परिषद ने देश के शिक्षा मण्डलों के सचिव तथा सभापतियों एवं विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में प्रत्येक मण्डल से कहा गया कि वह एक परीक्षा अनुसन्धान एकक का गठन करे तथा मण्डलों को भोपाल सम्मेलन की सिफारिशें लागू करने के लिए कहा गया।

(ii) परीक्षा केवल रटने का ही विकास करती है, विषय-वस्तु के समझने का नहीं, क्योंकि छात्र समझता है कि वह केवल रटने से ही सफल हो सकता है।

(iii) परीक्षा-प्रश्न-पत्रों के पश्चात् देखा गया कि कुछ महत्वपूर्ण तथा प्रिय (favourite) प्रश्नों को अनावश्यक रूप में दुहराया जाता है।[1] इससे छात्र हर वर्ष इन्हीं प्रश्नों के उत्तर तक अपना अध्ययन केन्द्रित रखते हैं।

(iv) प्रश्न-पत्रों में मौलिकता का पूर्ण अभाव रहता है।

(v) विषयगत तथ्य (Subjective elements) परीक्षा में महत्वपूर्ण योग देते हैं।

(vi) विभिन्न विषयों के परिणामों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की विधि अत्यन्त दूषित है। इससे असफल छात्रों का प्रतिशत काफी ऊँचा हो जाता है।

(vii) बाह्य परीक्षाएँ ज्ञान-निष्पत्तियों का असन्तोषप्रद तथा अपर्याप्त मापक हैं।

(viii) पाठ्यक्रम दूषित है। पाठ्यक्रम केवल विषय के कुछ शीर्षकों का उल्लेख मात्र है। उसमें निर्दिष्ट उद्देश्यों का अभाव है, फलतः परीक्षा उद्देश्य आधारित नहीं हो पाती है।

अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद की भोपाल में हो रही गोष्ठी के उद्घाटन भाषण में बोलते हुए तत्कालीन मुख्य-मंत्री डा० एस० डी० शर्मा ने परीक्षा प्रणाली के दोषों पर प्रकाश डालते हुए कहा—

(i) प्रश्न-पत्रों में कठिनाई स्तर का कोई प्रमाण नहीं है।

(ii) परीक्षाओं की बारम्बारता तथा परीक्षाएँ लेने की विधि शिक्षा के उद्देश्यों पर बुरा प्रभाव डालती है।

(iii) परीक्षाओं में अवसर तत्त्व (Chance factor) काफी महत्त्व रखता है।

---

1. "Favourite questions are repeated, slight changes are made in the wordings of questions in successive years, there are great similarities in the questions used in different states, most of the questions appeared to be a sort that might be thought about on the last day or a short time before the examination material was due. Rarely, did I encounter questions which suggest d that the paper-setter had given careful thought to the matter over an extended period of time. In short, the questions were routine and stereotyped, as though, everyone was quite weary with the sys'em and was merely going through the formalities required by it." —Dr. B. S. Bloom : 'Evaluation in Secondary Schools', A. I. C. S. E.

(१४) परीक्षा उन्ही के लिए सुविधाजनक रहती है जो भाषा का ज्ञान अच्छा रखते हैं।

जहाँ तक इन दोषों को दूर करने का प्रश्न है, इस हेतु विभिन्न संस्थाओं तथा आयोगों के द्वारा दिये गये सुझावों का अध्ययन ऊपर कर ही चुके हैं अतः इनकी आवृत्ति करना व्यर्थ ही है। यदि इन सुझावों को क्रियान्वित कर दिया जाय निश्चय ही आशातीत परिणाम प्राप्त होंगे।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१ वुड-घोषणा-पत्र (१८५४) से लेकर स्वतन्त्रता-प्राप्ति (१९४७) तक भा
 शिक्षा के क्षेत्र मे परीक्षा से सम्बन्धित दोषों को दूर करने हेतु किये गये प्रय
 का उल्लेख कीजिए।
२. मुदालियर आयोग तथा कोठारी आयोग ने भारतीय परीक्षा-प्रणाली को सुधा
 हेतु कौन-कौनसे सुझाव दिये ?
३. मुदालियर आयोग ने भारतीय परीक्षा-प्रणाली की किस प्रकार आलोचना
 है ? आयोग ने इन दोषों को दूर करने के क्या सुझाव दिये हैं ?
४. केन्द्रीय सरकार के अतिरिक्त अन्य कौन-कौनसी संस्थाएँ भारत में परीक्षा-सु
 के कार्य कर रही हैं ? किन्हीं दो प्रमुख संस्थाओं के प्रयासों का विस्तृत व
 कीजिए।
५ भारतीय परीक्षा-प्रणाली के दोषों की चर्चा करते हुए उनके निराकरण
 सुझाव दीजिए।
६. अपने राज्य के माध्यमिक शिक्षा मण्डल की परीक्षा-प्रणाली का आलोचनात
 विवेचन दीजिए।

## ४

# छात्र का अध्ययन

## (THE STUDY OF THE STUDENT)

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान के परिणामस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में जो प्रमुख परिवर्तन हुआ है, वह है अध्यापन में बालक को प्रधानता देना। अध्यापन तभी सफल माना जाता है जब शिक्षक छात्रों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन कर सके। इस परिवर्तन के ज्ञान के हेतु दो तथ्य अत्यन्त आवश्यक होते हैं—शिक्षण से पूर्व छात्र कहाँ था और अब शिक्षणोपरान्त कहाँ आ पहुँचा। प्रत्येक बालक की ग्रहण तथा प्रतिक्रिया शक्ति और दिशा भी पृथक-पृथक होती है। एक ही वातावरण में दो छात्र पृथक-पृथक परिमाण में तथा पृथक-पृथक प्रकार से अनुभव प्राप्त करते हैं, अतः अध्यापक को व्यक्तिगत विभिन्नताओं का ध्यान भी रखना आवश्यक हो जाता है। अध्यापक के लिए इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर छात्र के अनुभवार्जन में सहायता करनी चाहिए, नहीं तो उसके प्रयास व्यर्थ जाने की ही अधिक सम्भावना है।[1] अतः छात्र के प्रत्येक पहलू का अध्ययन अध्यापक को करना नितान्त आवश्यक है। छात्र का अध्ययन करने—उसकी क्षमताओं, रुचियों, योग्यताओं, अभिरुचियों, बुद्धि तथा व्यक्तित्व आदि का ज्ञान करने के लिए छात्र सम्बन्धी अनेक प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता पड़ती है।

### १. आवश्यक सूचनाओं के प्रकार (Types of the Information Needed)

निम्न क्षेत्रों में सूचनाएँ प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है

(१) सामान्य सूचनाएँ (General data)—इसके अन्तर्गत छात्र के सम्बन्ध

---

1. "To attempt to guide the development of the pupil without an intimate knowledge of his background and the sum total of his experience is to attempt the impossible"
—Reavis, William C, Judd, Charles H

रे व्यक्तिगत सूचनाएँ एकत्रित की जाएँ। छात्र का नाम, उपनाम, घर का पता, लिंग, जन्म-स्थान तथा जन्म-तिथि आदि सभी सूचनाएँ एकत्रित की जानी चाहिए। सामान्य सूचनाओं में वे सभी तथ्य सम्मलित हैं जो छात्र से सम्पर्क स्थापित करने के लिए आवश्यक हैं। उन व्यक्तियों से भी सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है जो छात्र के निकट सम्बन्धी हैं।

(२) पारिवारिक तथा सामाजिक वातावरण (Family and Social environment)—यह बात मनोवैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा सिद्ध की जा रही है कि घर तथा सामाजिक वातावरण बालकों के शारीरिक तथा मानसिक विकास में अपना सहयोग देता है। अतः माता-पिता का व्यवसाय, शिक्षा, धर्म, स्वास्थ्य, जन्म-स्थान, नागरिकता, बोली जाने वाली भाषा आदि सभी तथ्य एकत्रित करने चाहिए। घरेलू परिस्थितियाँ किस प्रकार की हैं? घर के अन्य सदस्य क्या कार्य करते हैं? घर की आर्थिक दशा कैसी है? आदि सूचनाएँ प्राप्त करना भी आवश्यक है। छात्र के भाई-बहनों के नाम, जन्म-तिथि, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी आँकड़े संगृहीत करने चाहिए। यह जानना भी आवश्यक है कि माता-पिता जीवित हैं या मर गये हैं, या उसकी सौतेली माँ तो नहीं है? उसके घर के आस-पास के सामाजिक वातावरण का ज्ञान भी निर्देशन में सहायक होता है। बालक के साथियों के बारे में भी सूचना प्राप्त करनी चाहिए।

(३) स्वास्थ्य (Health)—तीसरे प्रकार की सूचनाएँ छात्रों के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में एकत्रित करनी चाहिए। शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार का स्वास्थ्य सम्मिलित किया जाय। परामर्श के लिए दृष्टि, श्रवणेन्द्रिय, बोलना, स्नायविक (Neurotic) आदि की सूचनाएँ उपयोगी रहती हैं। छात्र के स्वास्थ्य परीक्षण का सम्पूर्ण अभिलेख सुरक्षित रखना चाहिए। छात्र का अध्ययन करने के लिए उसकी बीमारी, कमियों तथा दुर्घटनाओं के सम्बन्ध में सूचनाएँ प्राप्त करना आवश्यक है। बहुत से व्यक्तियों के शरीर अनेक प्रकार के दोषों से युक्त होते हैं। इन दोषों का ज्ञान रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, कमजोर हृदय या कमजोर दृष्टि वाले व्यक्ति वायुयान सम्बन्धी शिक्षा में प्रवेश नहीं पा सकते हैं। स्वास्थ्य से सम्बन्धित सूचनाएँ व्यावसायिक तथा शैक्षिक दोनों प्रकार के निर्देशन के लिए आवश्यक रहती हैं।

(४) विद्यालयीय इतिहास और कक्षा-कार्य का उल्लेख (School history and record of class work)—छात्र ने किन-किन विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त की है तथा विद्यालय में उसको क्या-क्या कठिनाइयाँ अनुभव हुई हैं, आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित की जानी चाहिए। छात्र ने जिन विषयों का अध्ययन किया है उन विषयों में उसकी प्रगति आदि का पूर्ण अभिलेख रखा जाए। छात्र का निर्देशन करते समय ये सूचनाएँ अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

(५) उपलब्धि (Achievement)—छात्र की शिक्षा सम्बन्धी योग्यता के ... रखना चाहिए। छात्र ने क्या शिक्षा पायी है? उसने कौनसी कक्षा

उत्तीर्ण की है ? वह किन विषयो मे अधिक ज्ञान रखता है ? उसको सफलता किन विषयो मे सन्तोषजनक नही है ? क्या उसने कभी कोई पारितोषिक या छात्रवृत्ति प्राप्त की है ? केवल शिक्षा सम्बन्धी प्रगति ही ज्ञात करना पर्याप्त नही है, इसके साथ ही सामाजिक समायोजना, भाषा या योग आदि क्षेत्रो मे प्राप्त साफल्य का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिए। ये सभी सूचनाएँ विद्यालय मे छात्र को निर्देशन सहायता प्रदान करने के लिए ही उपयोगी नही है, बल्कि उच्च सस्थाओ और व्यापारिक तथा औद्योगिक सगठनो मे छात्रों का चुनाव करने और निर्देशन के लिए प्रतिवेदन तैयार करने मे भी सहायक होती हैं। विभिन्न विषयो मे की गयी प्रगति का वैषयिक और विश्वसनीय मापन प्राप्त करने के लिए रूढ़िगत परीक्षाओ के स्थान पर नई प्रकार की परीक्षाओ का प्रयोग करना चाहिए। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओ मे की गई प्रगति का भी आलेख करना चाहिए।

(६) मानसिक योग्यता (Mental ability)—बुद्धि-परीक्षाओ द्वारा छात्रों की बुद्धि मापी जाती है। उच्च शिक्षा या कुछ व्यवसायो मे सफलता प्राप्त करने के लिए छात्रो की बुद्धि-लब्धि उच्च होनी चाहिए। मन्द बुद्धि बालको को उच्च शिक्षा मे सफलता प्राप्त करने की सम्भावना कम रहती है। कुछ विषय अपेक्षाकृत अधिक कठिन होते हैं। अत उनमे सफलता प्राप्त करने के लिए अधिक बुद्धि की आवश्यकता होती है, उदाहरण के लिए विज्ञान।

(७) अभियोग्यता (Aptitude)—अभियोग्यता का पता लगाने के लिए भी प्रमापीकृत परीक्षाओं का प्रयोग करना चाहिए। निर्देशन का एक उद्देश्य उचित व्यवसाय का चयन करने मे छात्र की सहायता करना भी है। छात्र की कार्य के विभिन्न क्षेत्रों मे क्षमता निश्चित करने के लिए सूचनाओ की आवश्यकता होती है। यान्त्रिक (machanical), लिपिक (clerical), सगीतात्मक, कलात्मक तथा वैज्ञानिक अभियोग्यताओं से सम्बन्धित सूचनाएँ भी सकलित करनी चाहिए। ये सूचनाएँ पाठ्य-विषयो या व्यवसाय के चुनाव करने मे छात्रो को प्रदान की जाने वाली सहायता का आधार बनाती हैं। माध्यमिक विद्यालय विशेष अभियोग्यताओं का आलेख नही रख सकते हैं, क्योंकि इस स्तर पर छात्रो मे किसी विशेष क्षेत्र मे अभियोग्यता नही पायी जाती है। परन्तु कुछ प्रतिभाशाली छात्रो मे जब भी किसी विशेष प्रकार की अभियोग्यता दिखाई दे तो उसकी सूचना परामर्शदाता को देनी चाहिए।

(८) रुचियाँ (Interests)—शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन के लिए छात्रो की इसी क्षेत्र से सम्बन्धित रुचियों की सूचना रखना भी आवश्यक होता है। प्रत्येक छात्र की रुचियो के बारे मे विद्यालय को दो प्रकार की सूचनाएँ रखनी चाहिए। प्रथम तो छात्र की क्रियाओं का आलेख जो उसकी कृत्यकारिणी (functioning) रुचि को प्रकट करेगा, दूसरे प्रमापीकृत रुचि परिसूचियो (interest inventories) तथा निरीक्षण द्वारा प्राप्त रुचियों का आलेख। रुचियो मे अवस्थानुसार परिवर्तन

होता रहता है। परामर्शदाता को व्यक्ति के वर्णन से कि वह अमुक कार्य में रुचि रखता है, निर्णय सही कर लेना चाहिए।

(९) व्यक्तित्व (Personality)—छात्र के व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले गुणों की सूचना भी प्राप्त करनी चाहिए। छात्र के व्यक्तित्व के विकास पर अधिक ध्यान देना चाहिए। परन्तु यह बताना कठिन होगा कि व्यक्तित्व के लिए कौन-कौन से गुण होने चाहिए जो सभी के लिए सन्तोषप्रद हों। वर्ग-क्रम मापदण्ड (rating scales) द्वारा छात्रों के गुण ज्ञात करना कठिन है, क्योंकि इस विधि से कार्य करने में बहुत-सी त्रुटियाँ आ जाती हैं। व्यक्तित्व परीक्षाओं के लागू करने में बहुत सावधानी की आवश्यकता है। घटना-वृत्त (anecdotal records) द्वारा ठीक प्रकार से व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण ज्ञात किए जा सकते हैं।

(१०) व्यक्तिगत समायोजन (Personal adjustment)—व्यक्तित्व से सम्बन्धित ही व्यक्तिगत समायोजन का क्षेत्र है। छात्र का अपने अध्यापक, मित्र, माता-पिता तथा अन्य छात्रों के साथ व्यक्तिगत, सामाजिक, सांवेगिक सम्बन्ध स्थापित करते होते हैं। छात्र का इन सभी व्यक्तियों के साथ समायोजन किस प्रकार का है, इससे सम्बन्धित सूचनाओं का आलेख रखना चाहिए। विद्यालय में विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ होती रहती हैं। विद्यालय की क्रियाओं, जैसे—वाद-विवाद प्रतियोगिता, नाटक, खेल-कूद, छात्र परिषद आदि में छात्रों द्वारा लिये जाने वाले भाग को अंकित कर लेना चाहिए। विद्यालय से बाहर की क्रियाएँ उसके सामाजिक समायोजन को स्पष्ट करती है। ये सभी सूचनाएँ छात्र के सामाजिक तथा सांवेगिक विकास का ज्ञान प्रदान करती हैं।

(११) भविष्य की योजना (Plans for the future)—छात्र अध्ययन के शैक्षिक या व्यावसायिक योजनाओं के बारे में भी सूचनाएँ एकत्रित की जाएँ। ये भविष्य की योजनाएँ छात्र स्वयं या अपने माता-पिता की सहायता से बनाते हैं। अध्यापक छात्रों की योग्यताओं, रुचियों या आकांक्षा (aspiration) के अनुकूल ही भविष्य की योजनाओं के निर्माण में सहायता दे सकते हैं। भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित सूचनाएँ प्रश्नावली या साक्षात्कार (interview) द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं।

## २ सूचनाएँ प्राप्त करने की विधियाँ (Techniques for Collecting Information)

छात्रों से सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित करने के लिए अध्यापक को बहुत सी विधियाँ प्रयोग में लानी होती हैं। वह किसी एक विधि पर निर्भर नहीं रह सकता है। वही विधियाँ प्रयोग में लानी चाहिए जो विश्वसनीय तथा वस्तुनिष्ठ (objective) हों। सूचनाएँ एकत्रित करने के लिए दो प्रकार की विधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं :

(अ) प्रमापीकृत परीक्षाएँ (Standardized tests); और

(आ) अप्रमापीकृत विधियाँ (N- ... ized techniques)।

## ३. प्रमापीकृत परीक्षाएँ

छात्र अध्ययन में प्रमापीकृत परीक्षाओं को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इन प्रमापीकृत परीक्षाओं के व्यापक उपयोग के निम्नलिखित कारण हैं -

(१) प्रमापीकृत परीक्षाएँ निष्पक्ष (impartial) तथा वस्तुनिष्ठ (objective) विधि है।

(२) अन्य विधियों की अपेक्षा प्रमापीकृत परीक्षाओं द्वारा सूचनाएँ एकत्रित करने में कम समय लगता है।

(३) परीक्षाओं द्वारा सूचनाएँ इस रूप में एकत्रित की जाती हैं कि सभी निर्देशन कार्यकर्ताओं द्वारा उनका समान अर्थ लगाया जाता है।

(४) परीक्षाओं द्वारा व्यक्तित्व सम्बन्धी समस्याओं या व्यवहार के क्षेत्र के तथ्यों का अप्रत्यक्ष रूप से पता लगाना सम्भव है।

(५) अध्यापक द्वारा किए गए निरीक्षण में बहुत छात्र छूट भी सकते हैं। लेकिन परीक्षाओं द्वारा उन छात्रों का पता भी लग जाता है जिन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

यद्यपि प्रमापीकृत परीक्षाओं की उपयोगिता अत्यधिक है परन्तु इनकी भी कुछ परिसीमाएँ होती हैं। इनकी परिसीमाएँ वैधता, विश्वसनीयता, उपयोगिता तथा प्रतिदर्शी (Sampling) के क्षेत्रों में पायी जाती हैं। इन परीक्षाओं के प्रयोग में भी निम्नलिखित त्रुटियाँ होने की सम्भावना पायी जाती है -

(१) परीक्षाएँ विस्तृत मापन प्रदान नहीं करती हैं।

(२) परीक्षाएँ यह स्पष्ट कर सकती हैं कि छात्र परीक्षा की परिस्थितियों में क्या कर सकता है, लेकिन यह इसको स्पष्ट नहीं करतीं कि छात्र अन्य परिस्थितियों में क्या करेगा।

(३) परीक्षाएँ कभी-कभी ऐसे उद्देश्यों के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं जिनके लिए वे बनी ही नहीं।

(४) छात्र क्या कर सकता है, परीक्षाएँ प्रमाण दे सकती हैं, परन्तु उसके लिए निर्णय नहीं दे सकती हैं।

(५) परीक्षा कार्यक्रम निर्देशन कार्यक्रम का एक अंग है, न कि सब कुछ।

**प्रमापीकृत परीक्षाओं का वर्गीकरण**—प्रमापीकृत परीक्षाओं का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है -

(अ) बुद्धि परीक्षाएँ (Intelligence tests)।

(आ) साफल्य परीक्षण (Achievement tests)।

(इ) विशेष योग्यताएँ या अभियोग्यता परीक्षाएँ (Special abilities of aptitude tests)।

(ई) रुचि-परीक्षाएँ (Interest tests)।

(उ) व्यक्तित्व-परीक्षाएँ (Personality tests)।

उपर्युक्त सभी प्रकार की परीक्षाओं का विस्तृत वर्णन आगे अध्याय ६ में किया गया है।

## अप्रमापीकृत विधियाँ (Non-Standardized Methods)

छात्रों का अध्ययन करने के लिए आवश्यक है कि इनसे सम्बन्धित सभी प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त की जाएँ। स्ट्रैंग (Strang) ने कहा है कि सम्पूर्ण छात्र का अध्ययन करने के लिए अभी तक किसी ने भी एक पूर्ण विधि का निर्णय नहीं किया है। सम्भवतः अच्छी विधि वह है जिसके द्वारा छात्र का विभिन्न परिस्थितियों में अध्ययन किया जाए। छात्रों के बहुत-से गुणों का ज्ञान प्रमापीकृत परीक्षाओं द्वारा नहीं हो पाता है। अतः अप्रमापीकृत विधियों का उपयोग करना पड़ता है। अप्रमापीकृत विधियाँ निम्नलिखित हैं :

(१) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख (Anecdotal record)।

(२) आत्मकथा (Autobiography)।

(३) निर्धारण (Rating)।

(४) *व्यक्ति अध्ययन (Case study)।*

(५) समाजमिति (Sociometry)।

(६) प्रश्नावली (Questionnaire)।

(७) *साक्षात्कार (Interview)।*

(८) सामूहिक आलेख पत्र (Cumulative record card)।

(९) प्रक्षेपण विधियाँ (Projective techniques)।

इन विधियों का विस्तृत वर्णन अध्याय ५ में किया जाएगा। उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त निम्न और भी विधियाँ हैं

(१) पारस्परिक अनुभव (Mutual experiences)—एक सामान्य उद्‍ की प्राप्ति के लिए साथ-साथ कार्य करके व्यक्ति एक दूसरे को अधिक समझ स हैं। पिता-पुत्र या माता-पुत्री अपने घर पर मिलकर कार्य कर सकते हैं। इसी प्र की अन्य क्रियाएँ, जैसे पैदल सैर (hikes), नौका विहार (boating), मत्स्य शि (fishing) या फूल, वृक्ष, चिड़ियों आदि का अध्ययन है। आज का मानव इत कार्य व्यस्त है कि उसके पास इतना समय नहीं है कि अपने बच्चों के साथ उठ-बै सके। खेल-कूद प्रशिक्षक अपने विद्यार्थियों के निकटतम सम्पर्क में आता है। अ वह छात्रों के सम्बन्ध में अधिक ज्ञान रखता है। हमारे अध्यापक या निर्देश कार्यकर्ताओं को इस प्रकार की सूचनाएँ उपलब्ध नहीं हो पाती हैं।

(२) विद्यालय में बराबर सहयोग—अध्यापक तथा छात्र जब किसी का एक दूसरे के सम्पर्क में पूर्ण करते हैं तो उनको छात्रों के गुणों का ज्ञान प्राप

करने का अवसर प्राप्त होता है। विद्यालय में विभिन्न परिस्थितियों में छात्र को कार्य करते हुए देखा जा सकता है। अध्यापक या माता-पिता की अपेक्षा साथी छात्र अपने साथियों का अधिक निकटता से निरीक्षण करते हैं। अत: वे अपने साथियों के बारे में अधिक जानते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि जितने व्यक्ति छात्र के सम्पर्क में आते हैं, एक दूसरे को छात्र के समझने में सहयोग दें।

(३) सामाजिक सूचनाएँ—अध्यापक को छात्रों की अधिक सहायता करने के लिए उनके समाज का अध्ययन भी करना चाहिए। सामाजिक क्रियाओं में छात्र भाग लेते हैं। वहाँ से छात्रों के सम्बन्ध में अधिक सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। हमारे देश में पंचायत राज होने से गाँवों में बहुत सी क्रियाएँ होती रहती हैं। इन क्रियाओं में छात्र भी भाग लेते हैं। विद्यालयों को सामाजिक सर्वेक्षण करने चाहिए।

## सूचनाओं का आलेख रखना (Record of Informations)

सूचनाएँ एकत्रित कर लेना ही पर्याप्त नहीं, बल्कि उन एकत्रित सूचनाओं का सुरक्षित आलेख रखना अति आवश्यक है। सभी सूचनाएँ व्यवस्थित रूप में रखनी चाहिए ताकि आवश्यकता होने पर उनको सरलता से प्राप्त भी किया जा सके। सूचनाओं के आलेख निम्नलिखित सामान्य सिद्धान्तों पर आधारित होने चाहिए :

(१) प्राप्त सूचनाएँ ऐसे व्यवस्थित की जाएँ कि वे कार्य-कारण सम्बन्ध स्पष्ट करें।

(२) आलेख की सूची इस प्रकार संगठित की जाएँ कि सूचनाएँ सरलता से अंकित तथा प्राप्त की जा सकें।

(३) आलेख पत्र ऐसे स्थानों पर रखे जाएँ कि उनका उपयोग करने वाले सरलता से उनको प्राप्त कर सकें।

(४) आलेख का उपयोग करने के लिए स्पष्ट निर्देशन आलेख के साथ लिख दिए जाएँ।

(५) जब छात्र एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय को जाए तो उसका आलेख भी उसके साथ जाए।

(६) इस प्रकार का प्रबन्ध किया जाए कि जिस व्यक्ति को अधिकार प्राप्त न हो वह उन आलेखों को न देख पाए।

(७) आलेख की सामग्री का प्रकार (अ) अधिक टिकाऊ हो, (आ) अधिक पतला हो, (इ) कम भारी हो, (ई) पेन्सिल या स्याही से लिखने के उपयुक्त हो, (उ) आकर्षक रंग का हो।

(८) फाइल व्यवस्था सादी होनी चाहिए।

सूचनाओं के प्राप्त करने, उनका आलेख रखने के लिए अध्यापक, प्रधाना- को सम्मिलित रूप से कार्य करना चाहिए।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. छात्र अध्ययन के लिए आवश्यक सूचनाओं का उल्लेख कीजिए। ये सूचन एकत्रित करना क्यों आवश्यक है ?

२ छात्र-अध्ययन हेतु आवश्यक सूचनाओं के संग्रहीत करने हेतु काम में लाई ज वाली विभिन्न विधियों पर प्रकाश डालिए।

३ 'प्रमापीकृत परीक्षाओं के क्या लाभ तथा दोष है ?' संक्षेप में प्रकाश डालिए।

४. "सूचनाएं प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं, बल्कि एकत्रित सूचनाओं की उ योगिता उनके व्यवस्थित रूप में रखने पर निर्भर करती है।" इस कथन अपने विचार प्रकट कीजिए।

## ५

# ✓ सूचनाएँ प्राप्त करने की अप्रमापीकृत विधियाँ
## (UNSTANDARDISED TECHNIQUES TO COLLECT INFORMATIONS)

छात्रों का सही मूल्यांकन करने के लिए आवश्यक है कि उनसे सम्बन्धित समस्त सूचनाओं का ज्ञान प्राप्त किया जाय। अध्यापक अप्रमापीकृत विधियों से भी सूचनाएँ एकत्रित करते हैं। इन विभिन्न विधियों का विस्तृत वर्णन इस अध्याय में किया जायगा।

### १. आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख
### (Anecdotal Record)

आकस्मिक निरीक्षण की विधि निरीक्षण विधि की ही एक शाखा है। इसके द्वारा व्यक्तित्व का अध्ययन किया जाता है। अध्यापक द्वारा छात्रों का प्रतिदिन जो निरीक्षण किया जाता है, वह कभी-कभी उनके व्यवहार या प्रतिक्रिया को अधिक स्पष्ट करता है। परन्तु अध्यापक पर कार्य की अधिकता के कारण वह छात्रों के विशिष्ट व्यवहार को भूल जाता है। अतः ऐसी विधि का निर्माण किया गया कि अध्यापक जब भी किसी छात्र के व्यवहार को महत्त्वपूर्ण समझे, उसे लिख ले।

आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख की परिभाषा कई मनोविदों ने दी है। रैम्स स्पूइस—"किसी छात्र के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना का प्रतिवेदन ही आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख है।"

आर्थर, जे॰ जोन्स—"कुछ निरीक्षण की गयी घटनाओं का घटनास्थल (on the spot) पर ही वर्णन तथा सम्भावित महत्त्व के कारण उनका अभिलेख आकस्मिक निरीक्षण है। जब ये प्रतिवेदन एक साथ संगृहीत कर लिए जाते हैं तो वे आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख के नाम से जाने जाते हैं।"

जॉन डी॰ विलार्ड—"किसी छात्र के जीवन की घटना का जो निरीक्षक द्वारा महत्त्वपूर्ण समझी जाती है, सादा वर्णन ही आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं में विचार-विभिन्नता पाई जाती है। रूथ स्ट्रैंग द्वारा दी गई परिभाषा अधिक मान्य है : "वास्तविक स्थिति में बच्चे के चरित्र तथा

व्यक्तित्व सम्बन्धी क्रियाओं के निरीक्षण का वर्णन ही आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख है।"

(i) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख योजना के मुख्य पद

किसी विद्यालय में इस प्रकार के अभिलेखों को आरम्भ करने के लिए अग्रलिखित पदों पर ध्यान देना चाहिए

(१) सहयोग प्राप्त करना—परामर्शदाता इन अभिलेखों के महत्त्व को समझता है, परन्तु कुछ अध्यापक अज्ञानतावश कार्य को विद्यालय कार्य के अतिरिक्त कार्य समझते हैं। इस योजना की सफलता के लिए अध्यापकों का सहयोग आवश्यक होता है क्योंकि छात्रों के व्यवहार का निरीक्षण करने का अवसर अध्यापकों को अधिक मिलता है। इन अभिलेखों की सफलता व्यक्तिगत शिक्षण (individualised education) के आदर्श पर निर्भर रहती है। अध्यापक की छात्रों में रुचि, व्यक्तिगत विभिन्नता के सिद्धान्त के ज्ञान तथा कक्षा के प्रत्येक छात्र से पहचान पर ही आकस्मिक निरीक्षण का अभिलेख आधारित है।

(२) निरीक्षक कितना लिखे—यह निश्चित करना भी आवश्यक है कि अध्यापक कितनी घटनाओं का विवरण लिखे। इसके लिए आवश्यक है कि व्यवहार के कुछ निश्चित अंग चुन लिये जाएँ तथा अध्यापकों से छात्रों के व्यवहार के विशेष प्रकार की घटनाओं का अभिलेख लिखने के लिए कहा जाए। इससे यह लाभ है कि अध्यापक अपना ध्यान कुछ गुणों तक ही केन्द्रित कर सकते हैं।

(३) फार्म तैयार करना (Preparing Forms)—प्रत्येक अध्यापक को आकस्मिक निरीक्षण का वर्णन लिखने के लिए निश्चित फार्म दिये जाएँ। प्रत्येक फार्म पर घटना का स्थान तथा दिनांक लिखने के लिए स्थान होना चाहिए। घटना तथा उस पर टिप्पणी लिखने के लिए भी दो स्तम्भ होने चाहिए। प्रत्येक फार्म पर नीचे निरीक्षक के हस्ताक्षर के लिए भी स्थान होना चाहिए। आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख का निम्न रूप होता है :

**आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख**

छात्र.................................. कक्षा.........................................

| दिनांक | स्थान | घटना | टीका-टिप्पणी |
|---|---|---|---|
| | | | |

निरीक्षक ....................................

(४) **मुख्य अभिलेख प्राप्त करना**—बहुत सी घटनाएँ जिनका आलेख रखा जाए, कक्षा में शिक्षण के समय घटित होती हैं। अध्यापक उनको शिक्षण रोककर नहीं लिख सकता है। ऐसा करने से कक्षा के कार्य की निरन्तरता समाप्त होती है तथा छात्रों का ध्यान अनावश्यक ही अभिलेख की ओर आकर्षित होता है। ऐसे समय में अध्यापक को कुछ चिन्ह तथा नाम लिख लेना चाहिए, जिससे वह घटना बाद में याद आ जाए।

(५) **प्रमुख फाइल (Central Filing)**—प्रत्येक छात्र के आकस्मिक आलेख एक स्थान पर एकत्रित करने की सुन्दर विधि ढूँढनी चाहिए, जिससे उनका अध्ययन उचित प्रकार से किया जा सके। ये अभिलेख परामर्शदाता को रखने चाहिए।

(६) **संक्षिप्तीकरण**—अभिलेखों का संक्षिप्तीकरण करने के लिए उत्तम विधि होनी चाहिए। महीने में एक बार प्रत्येक छात्र के अभिलेखों का संक्षिप्तीकरण परामर्शदाता को करना चाहिए।

**(ii) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख के लाभ**

(१) छात्र के व्यक्तित्व का ठीक-ठीक वर्णन मिलता है। उसके व्यक्तित्व में होने वाले परिवर्तनों का ज्ञान भी होता है।

(२) बालक की विभिन्न परिस्थितियों में की गयी प्रतिक्रियाओं को समझने में सहायक होते हैं।

(३) इससे अध्यापक का ध्यान पुस्तकीय ज्ञान से हटकर व्यक्तिगत छात्र की ओर खिंचता है।

(४) अध्यापक को विवरण लिखने की प्रेरणा मिलती है।

(५) यह एक सतत अभिलेख होने से गुण निर्धारण रीति की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है।

(६) इन अभिलेखों में परामर्शदाता को भी लाभ है। वह छात्र की समस्या को पहले से ही समझ लेता है। अत: साक्षात्कार के लिए जब छात्र आता है तो परामर्शदाता को कार्यवाही करने में सुविधा रहती है।

(७) ये अभिलेख छात्रों को आत्मज्ञान प्राप्त करने में सहायता करते हैं, वैसे यह अभिलेख छात्रों को दिखाने नहीं चाहिए।

(८) इन अभिलेखों द्वारा छात्र तथा परामर्शदाता के मध्य व्यक्तिगत सम्बन्ध दृढ़ होते हैं क्योंकि छात्रों को यह स्पष्ट हो जाता है कि परामर्शदाता उनकी समस्याओं से परिचित है।

(९) विद्यालय द्वारा एकत्रित किए गए सम्पूर्ण आकस्मिक निरीक्षण अभिलेखों के आधार पर पाठ्यक्रम-रचना तथा सुधार में सहायता मिलती है।

(१०) जब छात्र एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय में प्रवेश लेता है तो आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख का संक्षिप्त सार भी उसके साथ दिया जाए।

(११) विद्यालय में आने वाले नवीन अध्यापकों के लिए भी ये महत्त्वपूर्ण हैं। इनके आधार पर नवीन अध्यापक को छात्रों को समझने में अधिक सुविधा हो जाती है।

(१२) बहुत-सी प्रमापीकृत परीक्षाओं द्वारा व्यक्तित्व का मापन होता है। यह अभिलेख उनके मूल्यांकन में प्रमाण का काम करता है।

(iii) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख की संकीर्णता

(१) आकस्मिक अभिलेख तभी महत्त्वपूर्ण होता है जबकि निरीक्षण यथार्थ (accurate) है और उसका ठीक-ठीक लेखन कर लिया गया है। अध्यापक कक्षा में अध्यापन कार्य भी करते हैं, अतः उनके निरीक्षण में कुछ असत्यता हो जाने की सम्भावना रहती है, क्योंकि घटना के प्रति उनका ध्यान पूर्ण रूप से नहीं रहता है। आकस्मिक अभिलेख लिखने का प्रथम नियम यह है कि व्यवहार का प्रतिवेदन ठीक होना चाहिए।

(२) इन अभिलेखों में जिन घटनाओं का वर्णन किया जाय, वह वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। अध्यापक को निष्पक्ष रूप से घटनाओं का लेखन करना चाहिए। अभ्यास द्वारा अध्यापक वस्तुनिष्ठ वर्णन लिख सकते हैं।

(३) अभिलेख लिखने वालों को उस पृष्ठभूमि का संक्षिप्त वर्णन लिख देना चाहिए जिन परिस्थितियों में वह व्यावहारिक प्रतिक्रिया घटित हुई।

(४) मूल आलेख (Original Records) गुप्त रखने चाहिए। परामर्शदाता ही इनका प्रयोग कर सकें। इन अभिलेखों का वार्षिक सारांश गुप्त रखने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि किसी विशेष घटना का वर्णन नहीं होता है।

(५) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख कार्य आरम्भ करने से सम्पूर्ण विद्यालय का कार्य-भार बढ़ जायगा। अतः यह कार्य आरम्भ करने से पहले अभिलेखों को रखने तथा वार्षिक संक्षिप्त सारांश लिखने की व्यवस्था कर लेनी चाहिए।

(६) इस प्रकार के विवरण कुछ तेज या निम्न स्तर के छात्रों के ही मिलते हैं। अध्यापक औसत बच्चों पर ध्यान नहीं देते हैं।

## २. आत्मकथा

## (Autobiography)

यह एक आत्मनिष्ठ विधि है। इसमें बालक अपनी बाल्यावस्था से लिखने समय तक के जीवन सम्बन्धी अनुभवों का विवरण लिखता है। बालक द्वारा लिखे गए तथ्यों से मापित तथ्यों की व्यवस्था करने की सुविधा रहती है।

(i) आत्मकथा के प्रकार

आत्मकथाएँ कई प्रकार से लिखी जा सकती हैं। मुख्यतः आत्मकथा के दो प्रकार होते हैं :

(१) निर्देशित आत्मकथा (Directed Autobiography),

(२) व्यक्तिगत इतिहास (Personal History)।

**(१) निर्देशित आत्मकथा**—इस प्रकार की आत्मकथा मे व्यक्ति अपने सम्बन्ध मे लिखने के लिए स्वतन्त्र नही होता है। यह एक प्रश्नावली जैसी होती है, जिसके अनुसार ही उसको अपनी आत्मकथा लिखनी होती है। निर्देशित आत्मकथा का एक रूप नीचे दिया जा रहा है।

(क) (१) परिवार—
- (२) परिवार की आर्थिक दशा
- (३) धर्म
- (४) सामाजिक वातावरण—
  - (अ) स्थान जहाँ पहले रह चुके हो।
  - (ब) स्थान जहाँ आजकल रह रहे हो।

(ख) विद्यालय के अनुभव—
- (१) विद्यालय के आरम्भ का जीवन
- (२) प्राथमिक विद्यालय के अनुभव
- (३) किन-किन विद्यालयो मे अध्ययन किया ?
- (४) विद्यालय के मित्र
- (५) अध्यापक
- (६) रुचिकर पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएँ
- (७) रुचिकर विषय

(ग) (१) व्यक्तिगत विचार, रुचि, तथा उद्देश्य
- (२) राष्ट्रीय समस्याओं से सम्बन्ध
- (३) परिवार से सम्बन्ध।

**(२) व्यक्तिगत इतिहास**—इसमे किसी प्रकार के निर्देश नहीं होते हैं। छात्र अपने सम्बन्ध में सब कुछ लिखता है। इस प्रकार का विवरण या, गाथा क्रमबद्ध या, व्यवस्थित नहीं होती है।

**आत्मकथा का महत्व**—आत्मकथा विधि का भी अधिक महत्त्व है। परामर्शदाता तथा अध्यापक आत्मकथा से अपने छात्रो के बारे मे बहुत कुछ जान सकते है, यथा—

(१) परामर्शदाता छात्र के जीवन-दर्शन, उसके व्यक्तित्व की सरचना, उसके चिन्तन करने की विधि आदि के सम्बन्ध मे ज्ञान प्राप्त करता है।

(२) इस विधि द्वारा अध्यापक छात्र की सफलता (achievement) के बारे में जानकारी प्राप्त करता है। उसके शब्दकोष, वर्ण-विन्यास (spelling) तथा लिखने के ढंग का पता चलता है।

(२) यह विधि महान् व्यक्तियों की आत्मकथाएँ पढ़ने के लिए छात्रों को प्रोत्साहन देती है।

(३) आत्मकथा लिखने से व्यक्ति के अन्दर के दबाव समाप्त हो जाते हैं।

(४) यह विधि छात्रों को आत्म प्रदर्शन की स्वतन्त्रता देती है।

(५) यह विधि मितव्ययतापूर्ण है। सभी छात्रों को एक समूह में कितने कम समय में आत्मकथा लिखाई जा सकती है।

(ii) आत्मकथा विधि को उपयोगी बनाने के उपाय

(१) अन्य महान् व्यक्तियों की आत्मकथाएँ पढ़ने के लिए छात्रों को उत्साहित किया जाए।

(२) छात्रों को स्वयं आत्मकथा लिखने की प्रेरणा दी जाए।

(३) आत्मकथा का महत्त्व छात्रों को समझाया जाए।

(४) आत्मकथा लिखवाने वाले व्यक्ति में छात्रों का विश्वास हो।

(५) छात्रों को यह विश्वास दिलाया जाए कि उनकी आत्मकथाएँ गुप्त रखी जाएँगी।

## ३ निर्धारण मापदण्ड (Rating Scale)

इस विधि द्वारा व्यक्तित्व तथा साफल्य (achievement) का मापन होता है। यह एक आत्मनिष्ठ विधि है, अतः इसमें वैधता तथा विश्वसनीयता कम पायी जाती है। आजकल औद्योगिक संस्थानों में कर्मचारियों के वेतन बढ़ाने या तरक्की करने में इस विधि का सहारा लिया जाता है।

रूथ स्ट्रैंग ने निर्धारण के सम्बन्ध में कहा है—"निर्देशित निरीक्षण ही निर्धारण है।" जिन तथ्यों का निरीक्षण किया जाता है, उनका सार निकालकर संख्यात्मक रूप में व्यक्त करना ही निर्धारण है।

(i) निर्धारण मापदण्ड के प्रकार (Types of Rating Scale)

निर्धारण मापदण्ड कई प्रकार के होते हैं। यहाँ उनमें से कुछ का विवरण दिया जायगा (१) रेखांकित, (२) संख्यात्मक, (३) संचयी अंक, एवं (४) जनसंख्या प्रतिशत मापदण्ड।

(१) रेखांकित मापदण्ड (Graphic Scale)—इस मापदण्ड का व्यापक रूप से उपभोग होता है। इसमें एक रेखा बनी रहती है जिसको कई भागों में विभक्त किया जाता है। प्रत्येक भाग में अनेक विशेषण लिख दिए जाते हैं। निर्णायक को इनमें से ही किसी एक पर चिन्ह लगाना होता है। गिलफोर्ड ने रेखांकित मापदण्ड को बनाने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्त बताए हैं :

(१) रेखा की लम्बाई लगभग ५ इंच होनी चाहिए।

(२) रेखा टुकड़ों में कटी हुई नहीं होनी चाहिए।

(३) तीन या पाँच विशेषणों का प्रयोग करना चाहिए। दो उच्च, एक या दो मध्यम तथा बाद के निम्नतम हों।

(४) औसत या निष्पक्ष शब्द मध्य में होने चाहिए।

(५) आवश्यक नहीं है कि रेखांकित संकेतों के मध्य समान दूरी हो।

उपयोग—(१) यह सरल होने के कारण आसानी से समझ में आ जाती है।

(२) इसको शीघ्रता से भरा जा सकता है।

(३) निर्णायक को इसमें सूक्ष्म विभेद करने का अवसर मिलता है।

(४) तुलनात्मक निर्णय देने की सुविधा रहती है।

(२) संख्यात्मक मापदण्ड (Numerical Scale)—इस विधि में अंकों को निश्चित उद्दीपकों के साथ सम्बन्धित कर देते हैं। इस मापदण्ड में छात्रों को गुणों के आधार पर अंक मिलते हैं। ये अंक भी ३, ५, या ७ के पैमाने पर रखे जाते हैं। उदाहरण के लिए—

३ अत्यन्त सुन्दर
२ सुन्दर
१ कुरूप

उपयोग—(१) इस निर्धारण का बनाना सरल है।

(२) इसमें उच्च मापन भी किया जा सकता है।

(३) संचयी अंक विधि के निर्धारण (Rating by Cumulative Points)—इस विधि में व्यक्ति के गुणों का मूल्यांकन करके अंक प्रदान कर दिये जाते हैं। इन अंकों के कुल मध्य के आधार पर व्यक्ति के सम्बन्ध में निर्णय किया जाता है।

(४) पदक्रम मापदण्ड (Rank Order Scale)—इसमें नियमानुसार उच्च से निम्न स्तर की ओर क्रम से स्थान दिए रहते हैं। निर्णायक व्यक्ति को एक क्रम के विशेष स्थान पर रखता है। समूह में उस व्यक्ति की तुलना करके उचित स्थान पर रखा जाता है।

(ii) निर्धारण मापदण्ड की संरचना के सुझाव (Suggestions for the Construction of Rating Scales)

(१) मापदण्ड के पदों की संख्या निश्चित करना प्रथम कार्य है। अगर पदों की संख्या कम है तो निर्णायक को सूक्ष्म भेद करने का अवसर नहीं मिलता है। यदि इनकी संख्या अधिक कर दी जाए तो सम्भवत: निर्णायक इन सबका उपयोग न कर पाए। कुछ विद्वानों के अनुसार पदों की संख्या २० से अधिक नहीं होनी चाहिए। साइमण्ड्स के अनुसार पदों की संख्या ७ होनी चाहिए।

(२) निर्धारण किए जाने वाले लक्षणों की संख्या सीमित होनी चाहिए।

अब निर्देशन, व्यक्तिगत विभिन्नता तथा मानसिक स्वास्थ्य को शिक्षा के क्षेत्र में प्रमुख स्थान दिया जाने लगा है। अतः प्रत्येक छात्र का समझना आवश्यक है। अब विद्यालयों में मुख्यत: विचलित (deviate) छात्रों का अध्ययन करने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

(i) व्यक्ति-वृत्त अध्ययन क्या है ?

'व्यक्ति-वृत्त अध्ययन' शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है -

(१) किसी दिए हुए क्षेत्र में मुख्य सिद्धान्त ज्ञात करने के लिए यथार्थ परिस्थितियाँ उपस्थित करके वार्तालाप किया जाय।

(२) किसी छात्र का उचित समायोजन करने के उद्देश्य से उसका गहन अध्ययन किया जाय। यही व्यक्ति-वृत्त अध्ययन कहलाता है।

निर्देशन के क्षेत्र में व्यक्ति-वृत्त अध्ययन का दूसरा अर्थ ही प्रयोग में आता है। इसमें व्यक्ति से सम्बन्धित सभी सूचनाएँ एकत्रित तथा व्यवस्थित की जाती हैं। छात्र की कठिनाइयों के कारण ज्ञात करने के लिए उन सूचनाओं का अध्ययन किया जाता है। इसके आधार पर ही इन कठिनाइयों को दूर करने की योजना बनाई जाती है।

(ii) व्यक्ति-वृत्त या व्यक्ति-इतिहास में अन्तर

व्यक्ति-इतिहास में व्यक्ति का सम्पूर्ण इतिहास वस्तुनिष्ठ रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसमें सूचनाओं की व्याख्या नहीं की जाती है। अगर विद्यालय में प्रत्येक छात्र का संचयी अभिलेख-पत्र रखा जाता है तो यही प्रत्येक छात्र का सतत या नवीनतम (upto-date) व्यक्ति-इतिहास होगा।

व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में भी व्यक्ति-इतिहास की भाँति व्यक्ति से सम्बन्धित सूचनाएँ सम्मलित नहीं की जाती हैं परन्तु व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में तीव्र बुद्धि तथा सूझ की आवश्यकता होती है। इसमें सकलित सूचनाओं की व्याख्या की जाती है। यह व्याख्या ही व्यक्ति की कठिनाइयों के निदान में सहायक होती है जिसके आधार पर चिकित्सा की जाती है। ट्रेक्सलर के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति-वृत्त अध्ययन के साथ उपचार सम्बन्धी सुझाव भी होने चाहिए।

(iii) व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में सूचनाओं का सकलन और व्यवस्थीकरण

व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में सूचनाएँ किस प्रकार सकलित की जाएँ ? यह एक मुख्य प्रश्न है। व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में प्रथम पद व्यक्ति से सम्बन्धित सूचनाएँ सकलित करना है। ये सूचनाएँ छात्र से सम्बन्धित विद्यालय के आलेख पत्रों से प्राप्त की जा सकती हैं। इन आलेखों से वे ही सूचनाएँ प्राप्त की जाएँ जो छात्र की कठिनाइयों को समझने में सहायक हों।

अगर छात्र के उचित समायोजन के लिए सहायता प्रदान करने हेतु अध्ययन किया जा रहा है तो छात्र से सम्बन्धित प्रत्येक सूचना महत्त्वपूर्ण होगी। छात्र के सामाजिक इतिहास, अभियोग्यता, व्यक्तित्व या साफल्य सम्बन्धी सूचनाएँ प्राप्त करनी चाहिए।

छात्रों का भी साक्षात्कार किया जाता है। उनकी परीक्षा लेने के लिए भी छात्रों को बुलाया जाता है जब सभी सूचनाएँ प्राप्त हो जाएँ तो व्यक्ति-अध्ययन लिखा जाए तथा निदान ढूँढ कर उनके उपचार की योजना बनाई जाए। व्यक्ति-वृत्त अध्ययन का प्रतिवेदन पूर्ण होने पर छात्रो के अध्यापको के पास उनके सुझाव आमन्त्रित करने हेतु प्रतिवेदन भेजा जाए।

(iv) व्यक्ति-वृत्त अध्ययन के लिए आवश्यक तथ्य

निम्नलिखित तथ्य व्यक्ति-वृत्त अध्ययन के लिए एकत्रित किए जाएँ :

(१) सामान्य तथ्य—छात्र का नाम, घर का पता, उम्र, लिंग आदि से सम्बन्धित तथ्य एकत्रित करना आवश्यक है।

(२) पारिवारिक इतिहास—परिवार का वातावरण कैसा है ? माँ-बाप का बालक के प्रति व्यवहार कैसा है ? माता-पिता का परस्पर सम्बन्ध कैसा है ? परिवार का समाज मे क्या स्थान है ? पड़ोस कैसा है ? घर पर मनोरंजन सुविधाएँ क्या हैं ? छात्र के खेल के साथी, आदि सभी सूचनाएँ छात्र के व्यक्तित्व को समझने मे सहायता देती हैं।

(३) व्यक्तित्व (Personality)—परिवार के प्रति अभिवृत्ति, विद्यालय, मित्र, परिवार तथा स्वयं के प्रति अभिवृत्ति, संवेगात्मक सामंजस्य एवं हॉबीज (Hobbies) आदि सूचनाएँ भी एकत्रित करनी चाहिए।

(४) सामान्य बुद्धि।

(५) शारीरिक स्वास्थ्य—स्वास्थ्य की सामान्य दशा, शारीरिक दोष, लम्बाई तथा भार का अनुपात, दाँत, बीमारियाँ, ऑपरेशन आदि सूचनाएँ भी आवश्यक हैं।

(६) विशिष्ट योग्यताएँ।

(७) वर्तमान समस्या या दोष—समस्याएँ बहुत प्रकार की हो सकती हैं, जैसे आचरण, स्वास्थ्य, सावेगिक, उपस्थिति, पढ़ने सम्बन्धी आदि।

(८) व्यवसाय एवं शिक्षा की योजना।

(v) व्यक्ति-वृत्त अध्ययन में ध्यान देने योग्य बातें

(१) व्यक्ति-वृत्त अध्ययन की योजना बनाना (Planning the Case Stu-dy)—योजना बनाने मे निम्नलिखित बातो पर ध्यान देना चाहिए :

(i) सर्वप्रथम व्यक्ति का चुनाव करना। अच्छा तो यह रहेगा कि अपनी ही कक्षा का कोई छात्र चुना जाए जिसको सहायता की आवश्यकता हो।

(ii) समस्या या भिन्न छात्र व्यक्ति-वृत्त अध्ययन के लिए अधिक उपयुक्त रहते हैं।

(iii) केवल उतने ही छात्रों का व्यक्ति-वृत्त अध्ययन किया जाय जो कि एक वर्ष में पूरा हो सके। अगर पूर्ण अध्ययन जिसमे उपचार भी सम्मिलित हो, करना है तो एक वर्ष मे एक ही छात्र लिया जाए।

(२) तथ्य एकत्र करना (Collecting the Data)—ऊपर वर्णित सभी सूचनाएँ एकत्रित करनी चाहिए। तथ्य प्राप्त करने के लिए अन्वेषक को छात्रों का साक्षात्कार भी करना पड़ेगा।

(३) व्यक्ति-वृत्त लिखना (Writing up the Case)—व्यक्ति-वृत्त लिखते समय निम्नलिखित सिद्धान्तों पर ध्यान देना चाहिए

(i) वस्तुनिष्ठ वर्णन लिखना चाहिए। लिखते समय पक्षपात नहीं करना चाहिए। वर्णन स्पष्ट तथा सादा होना चाहिए।

(ii) अप्रासंगिक प्रश्नों को हटा देना चाहिए।

(iii) सामान्य कथन तथा विशिष्ट उदाहरणों का प्रयोग प्रतिवेदन में करना चाहिए।

(४) उपचार करना तथा उपचार का मूल्यांकन (Applying and Evaluating Treatment)—कठिनाइयों के उपचार तथा उनके मूल्यांकन में अन्वेषक के सामने समस्या उत्पन्न हो जाती है। समस्याओं के समाधान में सहायक कुछ सुझाव निम्न हैं

(i) जिन कठिनाइयों का उपचार करने में अन्वेषक असमर्थ हो, वहाँ उसको प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

(ii) उपचार के समय अन्वेषक को उपचार की प्रगति का आलेख रखना चाहिए। उसको प्रत्येक साक्षात्कार का विवरण तुरन्त लिख लेना चाहिए।

(iii) जब व्यक्ति का उपचार समाप्त हो जाए तो उसका उत्तरोत्तर अध्ययन (follow up) करना चाहिए।

## ✓ ५ समाजमिति
## (Sociometry)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसको समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ रहना पड़ता है। सामाजिक वातावरण में समायोजन स्थापित करने के लिए उसको दूसरे व्यक्तियों के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करने होंगे। एक ही व्यक्ति को आवश्यक नहीं कि सभी व्यक्ति चाहते हों। किसी एक परिस्थिति में जिस व्यक्ति को सब चाहते हैं, किसी अन्य परिस्थिति में सभी व्यक्ति उसको नापसन्द कर सकते हैं। समाजमिति विधि द्वारा व्यक्ति का समाज में क्या स्थान है, यह पता लग सकता है।

एण्ड्र तथा विली ने समाजमिति की परिभाषा इस प्रकार दी है: "समाजमिति एक रेखाचित्र है जिसमें कुछ चिन्ह और अक्षर किसी सामाजिक समूह के सदस्यों द्वारा सामाजिक स्वीकृति या त्याग का ढंग प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त होते हैं।" समाजमिति द्वारा एक समूह के सदस्यों में पारस्परिक मित्रता का पता लगाया जा सकता है। समाजमिति में सोशियोग्राम अधिक काम में लाया जाता है।

समाजमिति की जाँच से प्राप्त होने वाले तथ्य—इस विधि द्वारा व्यक्तियों के बारे में जाँच के उपरान्त निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होते हैं :

(१) तटस्थ—ऐसे व्यक्ति भी मिलते हैं जिनको समाज के सदस्य न मित्र के रूप में और न नेता के रूप में स्वीकार करते हैं। ये व्यक्ति 'तटस्थ' कहलाते हैं।

(२) नायक—समूह में किसी एक व्यक्ति को ही उसके नेतृत्व करने के गुण के आधार पर नेता मानते हैं।

(३) गुटबन्दी—छोटे-छोटे समूह बनाकर रहने वाले व्यक्ति गुटबन्दी करने वाले माने जाते हैं।

(४) तिरस्कृत—समाज द्वारा अपनाये न जाने वाले व्यक्ति तिरस्कृत कहलाते हैं।

(i) समाजमिति में प्रयुक्त होने वाली विधियाँ

समाजमिति में प्रमुख रूप से दो विधियाँ काम में लायी जाती हैं :

(१) प्रश्नावली, और

(२) निरीक्षण।

यहाँ पर प्रश्नावली विधि का वर्णन किया जायेगा। प्रश्न दो प्रकार के होते हैं :

(i) स्वीकारात्मक प्रश्न (Positive Questions),

(ii) नकारात्मक प्रश्न (Negative Questions)।

(i) स्वीकारात्मक प्रश्न—व्यक्ति की समाजमिति स्वीकारोक्ति को स्पष्ट करती है। प्रत्येक प्रश्न के साथ तीन या चार नाम इच्छानुसार प्राथमिकता देते हुए लिखने को कहा जाता है। उदाहरण के लिए—

१. तुम किसको अपनी कक्षा का मानीटर चुनना पसन्द करोगे ?
   पहला—
   दूसरा—
   तीसरा—

२ तुम किसके साथ बात करना पसन्द करोगे ?
   पहला—
   दूसरा—
   तीसरा—

(ii) नकारात्मक प्रश्न—समाज द्वारा तिरस्कृत व्यक्तियों का पता लगाने के लिए पूछे जाते हैं। उदाहरण के लिए—

१ तुम किसको खेल का नेता चुनना पसन्द नहीं करोगे ?
   पहला—
   दूसरा—
   तीसरा—

प्रश्नों से प्राप्त तथ्यों का सारणीकरण (Tabulation) करना पड़ता है। उसके बाद प्राप्त तथ्यों की गणना की जाती है। सारणी बनाते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

१. चुनाव करने वाले (Choosers) लम्बवत् (vertical) दूरी में लिखे जाते हैं।

२ चुने गये (Choosen) व्यक्ति क्षैतिज (horizontal) खाने में लिखने चाहिए।

३. प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्राप्त चुनावों (Choices) के योग को नीचे लिखते हैं।

४. इसी प्रकार तिरस्कृत व्यक्तियों की सारणी बनायी जाती है।

उपर्युक्त आँकड़ों को समाजमिति के रूप में रेखाचित्र द्वारा नीचे दिखाया गया है। इसमें चयन तीरों के द्वारा दिखाया गया है।

(iii) समाजमिति की व्याख्या

समाजमिति का अध्ययन व्यक्तियों के पारस्परिक सामाजिक सम्बन्धों को प्रकट करता है। इसमें निम्नलिखित प्रमुख तथ्य हैं
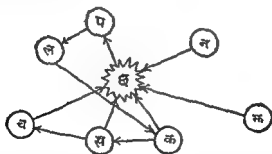
(समाजमिति)

(१) 'द' प्रधान केन्द्र बिन्दु है। (२) 'न' और म एकाकी व्यक्ति हैं क्योंकि इनको कोई अभिमान नहीं मिला है।

समाजमिति के लिए एकत्रित किए गए सभी आँकड़ों की व्याख्या करने के लिए सारणी (table) बनानी पड़ेगी। इसमें चयनकर्ता ऊपर के खाने में तथा चयन किए गए व्यक्ति खड़े खाने में लिखने चाहिए। इस सारणी में प्रथम अभिमान १ अंक तथा द्वितीय अभिमान २ अंक द्वारा प्रदर्शित किए गए हैं। इन अभिमानों का

योग करने के लिए तीन खाने होने चाहिए। प्रत्येक खाने के प्रथम तथा द्वितीय अभिमानों का पृथक-पृथक योग होना चाहिए।

समाजमिति विधि द्वारा व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध प्रदर्शित होता है। इनसे प्राप्त फल का उपयोग कई रूप में हो सकता है और इसके आधार पर उपचार की योजना बनायी जा सकती है। समाजमिति की व्याख्या करने में निम्नलिखित सुझाव सहायक हो सकते हैं

(१) एक समय में एक व्यक्ति पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए और सभी प्राप्त चयनों (choices) का गहन अध्ययन करना चाहिए। ये चयन प्रकट करेंगे कि कौनसे छात्र चुने गए हैं या कौनसे परित्यक्त हैं।

(२) तटस्थ (isolates) तथा नायक व्यक्तियों का पता लगाने पर उन कारणों को ढूँढना चाहिए, जिनसे उनको वह स्थान प्राप्त हुआ है। कई कारणों से व्यक्ति तटस्थ हो सकता है

(अ) वह समुदाय का नया सदस्य हो सकता है।

(आ) वह शर्मीले स्वभाव के कारण अन्य व्यक्तियों के साथ मित्रता न बना सका हो।

(इ) वह निम्न या उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर से सम्बन्धित हो सकता है। अतः समूह के अन्य सदस्यों ने उसको स्वीकार न किया हो।

(३) ऐसे व्यक्तियों को ढूँढा जाय जो परस्पर एक दूसरे को चुनते हों। इसके भी कई कारण हो सकते है, जैसे—आपस मे मित्रता, पड़ोस या समान रुचियाँ होना।

उपर्युक्त तथ्यों का ज्ञान होने पर निर्देशक बालकों में सामाजिकता की भावना उत्पन्न करने में सहायता दे सकता है।

## ६. प्रश्नावली
## (Questionnaire)

व्यक्ति से सम्बन्धित सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए 'प्रश्नावली' विधि का प्रयोग किया जाता है। यह भी एक आत्मनिष्ठ विधि है। गुड और हैट ने प्रश्नावली की परिभाषा इस प्रकार दी है

"सामान्यतः प्रश्नावली शब्द प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की योजना की ओर संकेत करता है। व्यक्ति को स्वयं प्रश्नावली फार्म भरना होता है।"

इस विधि के दो रूप होते हैं—(अ) प्रमापीकृत प्रश्नावली—इसको ही इन्वेंट्री भी कहते हैं। व्यक्तित्व की जाँच के लिए इसका प्रयोग होता है। (आ) प्रश्नावली—इस प्रश्नावली द्वारा व्यक्ति की साधारण सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं। प्रश्न भी सरल होते हैं। निर्देशन कार्य में इसी प्रश्नावली का प्रयोग होता है।

**(ii) प्रश्नावली के प्रकार (Types of the Questionnaire)**

प्रश्नावली मुख्यत दो प्रकार की होती है :

**(१) बन्द फार्म (The Closed Form)**—इसमें केवल व्यक्ति को 'हाँ' या 'ना' पर चिन्ह लगाना होता है। वह स्वयं की ओर से कुछ नहीं लिखता है। इस विधि के निम्नलिखित लाभ है :

(अ) उत्तर देना सरल है, (आ) समय कम लगता है, (इ) इसमें वस्तुनिष्ठता पाई जाती है, (ई) सारणी बनाने और व्याख्या करने में सरल रहती है।

**(२) प्रतिबन्धहीन प्रश्नावली (The Open End or Unrestricted Type)**—इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों के आगे उत्तर लिखने के लिए रिक्त स्थान रहता है। उत्तर देने वाला व्यक्ति स्वयं की ओर से उत्तर देता है। इस विधि में सारणी बनाने तथा व्याख्या करने में समय लगता है।

निर्देशन कार्यक्रम में प्रयोग होने वाली प्रश्नावली दो प्रकार की होती है

**(१) अभिभावक या माता-पिता द्वारा भरी जाने वाली प्रश्नावली**—छोटी कक्षाओं के छात्रों का ज्ञान अधिक नहीं होता है। भाषा पर भी उनका अधिकार नहीं हो पाता है। अत उनके बारे में सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली उनके माँ-बाप से भरवायी जाती है।

**(२) छात्र द्वारा भरी जाने वाली प्रश्नावली**—उच्च कक्षाओं के छात्रों से सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए उनसे ही प्रश्नावली भरवायी जाती है। अगर बालक परिपक्व है तो रुचियों तथा शैक्षिक और व्यावसायिक योजनाओं सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर भी स्वयं दे सकता है।

दोनों प्रकार की प्रश्नावलियों के उदाहरण अग्रलिखित है

**प्रश्नावली**

**(छात्रों के लिए)**

| | | | |
|---|---|---|---|
| छात्र का नाम | .... | .... | .... |
| घर का पता | .... | .... | .... |
| जन्म-स्थान | .... | .... | .... |
| राष्ट्रीयता | .... | .... | .... |
| पिता का नाम | .... | मृत या जीवित | .... |
| पिता का व्यवसाय | .... | .... | .... |
| माँ का नाम | .... | मृत या सौतेली | .... |
| बड़े भाइयों की संख्या | .... | छोटे भाइयों की संख्या | .... |
| बड़ी बहनों की संख्या | .... | छोटी बहनों की संख्या | .... |
| मातृभाषा | .... | घर की भाषा | .... |

किस प्राथमिक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की ? ···  ....

इस विद्यालय में प्रवेश की तिथि .... कक्षा ....
विद्यालय में कौन-कौनसे विषय अच्छे लगते हैं ? .... ....
और क्यों ? .... .... .... .... ....
विद्यालय में कभी कोई पुरस्कार मिला ? .... ....
घर पर कितने घण्टे पढ़ते हो ? .... .... ....
तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है ? चश्मा लगाते हो ? ....
कोई शारीरिक दोष है ? .... .... .... ....
स्वास्थ्य की जाँच की गयी ? .... ....कब ? ....
कौन-कौनसे खेल खेलते हो ? .... .... ....
संगीत में कैसी रुचि है ? .... .... ....
स्कूल की पढ़ाई के बाद कॉलेज की शिक्षा लोगे ? .... ....
किस कॉलेज में शिक्षा लोगे ? .... .... ....
क्या तुमने कोई जीविका चुन ली है ? .... ....
अगर चुनी है तो कौनसी ? .... .... ....

## प्रश्नावली
### (माँ-बाप के लिए)

छात्र का नाम .... जन्म तिथि.... ....
घर का पता .... जन्म-स्थान ....
जाति .... धर्म ....
पिता का नाम .... पिता का पेशा ....
कितने बच्चे हैं ? .... .... ....
क्या बच्चा गुस्सा करता है ? .... ....
क्या बच्चा कभी बीमार हुआ है ? .... ....
बच्चा घर पर कितने समय तक पढ़ता है ? ....

### (ii) उत्तम प्रश्नावली की विशेषताएँ

१. प्रश्नावली में पूर्ण तथा स्पष्ट निर्देश होने चाहिए। छात्रों या माँ-बाप को प्रश्न का उत्तर किस प्रकार देना है तथा उत्तर कहाँ पर लिखना है, आदि निर्देश प्रश्नावली के साथ लिखे रहने चाहिए।

२. प्रश्नावली स्वच्छता से मुद्रित हो।

३. प्रश्नावली अधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए।

४. प्रश्न ऐसे न हों कि उत्तर देने वाले को स्पष्ट कर दें।

५. प्रश्नावली की सारणी बनाना व व्याख्या करना सरल हो।

## ७. अवलोकन
### (Observation)

छात्र के सम्बन्ध में सूचनाएँ प्राप्त करने की एक अन्य विधि अवलोकन है। यह एक अति प्राचीन विधि है। प्राचीन काल में आदि मानव द्वारा अवलोकन विधि का प्रयोग अधिक किया जाता था। शिशुओं के व्यवहार का अध्ययन अवलोकन विधि द्वारा ही किया जाता है। ज्योतिषी नक्षत्रों का अवलोकन करता है। चिकित्सक रोगी का निरीक्षण करने के उपरान्त औषधि या उपचार की सलाह देता है। शिक्षा या मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी इस विधि का प्रयोग विस्तृत रूप में किया जाने लगा है। शिक्षक छात्रों का अवलोकन करके ही उनको समझने का प्रयत्न करता है। छात्रों के व्यवहार का निरीक्षण विभिन्न परिस्थितियों में करना चाहिए। अभाग्यवश अध्यापकगण केवल बालकों के शैक्षिक समायोजन का ही अवलोकन करते हैं। उनको जीवन से सम्बन्धित सभी परिस्थितियों में छात्र किस प्रकार समायोजित होते हैं, इसका निरीक्षण करना चाहिए। निरीक्षण केवल समस्यात्मक छात्र के व्यवहार का ही नहीं बल्कि सभी छात्रों का करना चाहिए।

व्यक्ति-अध्ययन की विधि का मूलाधार अवलोकन विधि है। साक्षात्कार विधि में निर्देशक वार्तालाप के अतिरिक्त अवलोकन भी करता जाता है। इस अवलोकन से निर्देशक साक्षात्कार द्वारा प्राप्त तथ्यों की पुष्टि करता है। निर्धारण विधि का आधार ही अवलोकन विधि है। व्यक्तित्व परीक्षा में प्रयुक्त होने वाली मनोवैज्ञानिक जाँचों का प्रयोग करते समय परामर्शदाता छात्र की प्रतिक्रियाओं का अवलोकन करता जाता है।

अवलोकन एक वस्तुनिष्ठ विधि है। अवलोकन को उपयोगी बनाने के लिए उसका वस्तुनिष्ठ तथा विश्वसनीय होना आवश्यक है।

(1) अवलोकन के प्रकार (Types of Observation)

अवलोकन का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है; जैसे—

१. नियन्त्रित या अनियन्त्रित (Controlled or Uncontrolled)
२. वाह्य या स्वप्रेरित (External or Internal)
३. निर्देशित या उपपत्ति (Directed or Finding)
४. प्रमापीकृत या अप्रमापीकृत (Standardised or Natural)

(१) नियंत्रित या अनियंत्रित (Controlled or Uncontrolled)—नियन्त्रित अवलोकन कुछ निश्चित परिस्थितियों में किया जाता है। इस प्रकार के अवलोकन में यन्त्र उपकरण भी प्रयोग में लाए जाते हैं। इसमें पहले से ही समय, स्थान परिस्थितियाँ तथा अवलोकनार्थ इकाइयाँ निश्चित कर दी जाती हैं।

अनियंत्रित अवलोकन में अवलोकनकर्ता को स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। वह स्वयं निश्चित करता है कि किन परिस्थितियों में तथा किन इकाइयों का अवलोकन करता है।

(२) बाह्य या स्वयंप्रेरित (External or Internal)—इस प्रकार के अवलोकन में किसी बाहरी व्यक्ति पर निर्भर रहना पड़ता है। इसमें एक दोष रहता है कि अवलोकनकर्ता केवल एक ही पक्ष का अवलोकन कर पाता है, क्योंकि वह उन व्यक्तियों से पूर्ण परिचित नहीं होता है।

स्वयंप्रेरित अवलोकन में व्यक्ति से स्वयं अपना विवरण देने को कहा जाता है। इस प्रकार के अवलोकन में व्यक्ति बहुत सी बातों को छिपा लेता है।

(३) निर्देशित या उपपत्ति (Directed or Finding)—निर्देशित अवलोकन में पहले से बनाई गई सूची के आधार पर ही अवलोकन किया जाता है।

उपपत्ति अवलोकन में निरीक्षण करने वाला व्यक्ति दी हुई परिस्थिति का अवलोकन करता है। वह उस परिस्थिति के सम्बन्ध में जानने का इच्छुक नहीं है कि उसका क्या अर्थ है, इत्यादि।

(४) प्रमापीकृत या स्वाभाविक (Standardised or Natural)—प्रमापीकृत अवलोकन में व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण उस समय किया जाता है, जब उसकी परीक्षा ली जाती है। परीक्षण-काल की प्रतिक्रिया उसके बहुत से गुणों को स्पष्ट करती है।

स्वाभाविक अवलोकन में व्यक्ति को सामान्य रूप से दिन-प्रतिदिन का कार्य करते हुए देखा जाता है।

अवलोकन का दो अन्य प्रकार से भी वर्गीकरण किया जा सकता है :

(१) प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation),

(२) अप्रत्यक्ष अवलोकन (Indirect Observation)।

प्रत्यक्ष अवलोकन में व्यक्ति का यथार्थ स्थिति में निरीक्षण किया जाता है। अप्रत्यक्ष या परोक्ष निरीक्षण में प्राप्त तथ्यों के आधार पर व्यक्ति को समझने का प्रयास किया जाता है। विश्वसनीय सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित प्रत्यक्ष अवलोकन करना चाहिए।

व्यवस्थित निरीक्षण में निम्नलिखित पद सहायक होते हैं

(१) अवलोकन किये जाने वाले व्यवहारों के अंगों का चुनाव—मानव व्यवहार का निरीक्षण करने वाले के समक्ष एक समस्या यह रहती है कि वह व्यवहार के किन-किन अंगों का निरीक्षण करे। किसी एक परिस्थिति में कार्यरत व्यक्ति की इतनी क्रियाएँ होती हैं कि कुछ क्रियाएँ अवलोकन में छूट जाती हैं। कभी-कभी महत्वपूर्ण विशेषताएँ भी छूट जाती हैं। अतः अवलोकन के लिए व्यक्ति के व्यवहार से सम्बन्धित कुछ सीमित पहलू (aspects) निश्चित कर लेने चाहिए।

(२) निश्चित किए गए व्यवहार का अर्थ स्पष्ट करना (Define the behaviours selected)—निश्चित किए गए व्यवहार का अर्थ स्पष्ट कर लेना चाहिए। जब दो अवलोकनकर्ता किसी व्यवहार का निरीक्षण कर रहे हों तो उनके परिणाम में भी अन्तर होगा, अगर उनको उस व्यवहार का अर्थ स्पष्ट न हो। उदा

हरण के लिए, अगर हम आक्रामक (aggressive) वृत्य का अध्ययन कर रहे है तो हमको इसका अर्थ स्पष्ट होना चाहिए कि इस प्रकार के व्यवहार को कौनसी क्रियाएँ सम्मिलित होकर बनाती हैं। अतः वैधयिक तथा विश्वसनीय अवलोकन के लिए आवश्यक है कि व्यवहार का अर्थ सभी को स्पष्ट हो।

(३) निरीक्षक का प्रशिक्षण (Training Observer)—इसी उद्देश्य से निरीक्षक प्रशिक्षित नहीं किए जाएँ तो उनके अंक प्रदान करने में अन्तर आ जाएगा। उनके निर्णयों मे भिन्नता कई कारणों से आ सकती है, जैसे ध्यान की अस्थिरता। प्रशिक्षण द्वारा इस प्रकार की भिन्नता बहुत कुछ दूर की जा सकती है। निरीक्षकों को अवलोकन करने का अभ्यास कराया जाए। प्रशिक्षण के परिणामस्वरूप निरीक्षक एक ही प्रकार अवलोकित उसी वस्तु की एकसी ही व्याख्या करेंगे।

(४) अवलोकन को परिमाणित करना (Quantifying Observations)—अवलोकित व्यवहार को परिमाणित करना आवश्यक है। यह परिणाम संख्या का रूप धारण कर लेता है। एक बालक द्वारा एकसे ही व्यवहार की कितनी बार पुनरावृत्ति की जाती है, इसको गिनना ही अवलोकनों को परिमाणित करना है।

(५) आलेख लिखने की विधि का विकास (Developing Procedures of Recording)—निरीक्षक को अवलोकित तथ्य को याद रखने के लिए अपनी स्मृति पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, क्योंकि सभी तथ्यों को उसी क्रम से याद नहीं रखा जा सकता है। व्यवहार के विभिन्न वर्गों के लिए कूट शब्द (Code word) प्रयोग करना उत्तम विधि है। टेप रिकार्डिंग या फोटोग्राफी भी अन्य विधियाँ हैं। यह लेखन कार्य छात्रों की उपस्थिति में नहीं करना चाहिए।

निरीक्षण के लिए आवश्यक सिद्धान्त (Principles to be followed in Observations)

(१) पूर्ण परिस्थिति का अवलोकन (Observe the whole Situation)—निरीक्षक को अपना ध्यान केवल छात्र के व्यवहार तक ही सीमित नहीं करना चाहिए, उसको उन परिस्थितियों का निरीक्षण भी करना चाहिए जिनमें उसको कार्य करना है। यह देखना भी आवश्यक है कि किन परिस्थितियों द्वारा उसके व्यवहार में परिवर्तन लाया जाता है।

(२) एक समय में एक छात्र का अवलोकन (Select one Student to observe at a time)—एक समय में एक से अधिक छात्रों का अवलोकन नहीं करना चाहिए।

(३) नियमित क्रियाओं में छात्रों का अवलोकन (Observe Students in Regular Activities)—छात्रों के व्यवहार का अवलोकन उनकी दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं में करना चाहिए। कक्षा में पढ़ते समय, क्रीडाक्षेत्र में या एक कक्षा से दूसरे कक्षा में जाते समय छात्र कैसा व्यवहार करते हैं।

(५) व्यक्तिगत या समूह दोनो में उपयोगी—इस विधि द्वारा ही एक व्यक्ति या समूह का अवलोकन किया जा सकता है। इस प्रकार एक समय मे एक या अनेक गुणो का निरीक्षण सम्भव है।

(iv) प्रत्यक्ष अवलोकन की परिसीमाएँ (Limitations of Direct Observation)

(१) अवलोकन का पक्षपाती होना—प्रत्येक कक्षा से कुछ लोग अपने व्यक्तित्व तथा आचरण द्वारा अध्यापको को अधिक प्रभावित कर देते है। इनका निरीक्षण करते समय अध्यापक केवल अच्छे गुणो पर ही ध्यान देता है। उसके द्वारा किया जाने वाला निर्धारण (Rating) भी इसी प्रभाव से युक्त होता है। मनोवैज्ञानिक इसको 'व्याप्त प्रभाव' (halo effect) नाम से भी पुकारते हैं।

(२) विवरण में विभिन्नता—विभिन्न अवलोकको द्वारा दिया गया विवरण समान नही होता है। विवरण की असमानता का कारण है—व्यवहार के विभिन्न पक्षो पर समान ध्यान न देना।

(३) अधिक समय लगाना—अवलोकन करने मे समय अधिक लगता है। अधिक समय तक अगर निरीक्षण नही किया जाए तो अवलोकन का विवरण विश्वसनीय नही कहा जा सकता है।

(४) अवलोकक की थकान तथा उसकी मानसिक एव शारीरिक स्थिति भी उसके अवलोकन को प्रभावित करती है।

अवलोकन विधि को अधिक उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक है कि निम्न-लिखित सुझावो पर ध्यान दिया जाए :

१. अवलोकक को छात्र के प्रति सामान्य दृष्टिकोण रखना चाहिए।
२. अवलोकक को अपनी स्मृति पर निर्भर नही रहना चाहिए। उसको अवलोकन करते समय या उसके तुरन्त बाद ही उसके विवरण का लेखन कर लेना चाहिए।
३ उचित उपकरणो की पहले से ही तैयारी कर लेनी चाहिए।
४ विश्वसनीय मूल्यांकन करने के लिए अनेक अवलोकन करने चाहिए।

## ✓ ८. साक्षात्कार
### (Interview)

साक्षात्कार एक आत्मनिष्ठ विधि है। इस विधि द्वारा व्यक्ति की समस्याओ तथा गुणो का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। साक्षात्कार निर्देशन कार्य-विधि का एक आवश्यक अग है। परामर्श प्रक्रिया का मूल माना जाता है। शिक्षा के क्षेत्र मे एक

जाता है। विद्यालयों में छात्रों के समक्ष अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं के समझने तथा उनके समाधान में छात्रों की सहायता करने के लिए साक्षात्कार एक महत्त्वपूर्ण विधि है।

**(i) साक्षात्कार की परिभाषाएँ**

१ जान जी० डार्ले ने साक्षात्कार की परिभाषा इस प्रकार दी है—"साक्षात्कार एक उद्देश्यपूर्ण वार्तालाप है।"

२ गुड और हैट ने लिखा है—"किसी उद्देश्य से किया गया गम्भीर वार्तालाप ही साक्षात्कार है।"

उपर्युक्त परिभाषाएँ स्पष्ट करती हैं कि साक्षात्कार में आमने-सामने बैठकर किसी उद्देश्य को लेकर व्यक्तियों में वार्तालाप होता है। सभी प्रकार के साक्षात्कार में निम्नलिखित तत्त्व समान रूप से पाए जाते हैं

(१) व्यक्ति का व्यक्ति से सम्बन्ध (A person to person relationship)।

(२) एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने का साधन (A mean of Communicating with each other)।

(३) साक्षात्कार में संलग्न दो व्यक्तियों में से एक को साक्षात्कार के उद्देश्य का ज्ञान रहता है (One of the persons of the interview has the knowledge of the purpose)।

**(ii) साक्षात्कार के प्रकार**

साक्षात्कार अनेक प्रकार के होते हैं। यहाँ कुछ प्रकार के साक्षात्कार का विवरण दिया जायगा

**(१) नियुक्ति साक्षात्कार (Employment Interview)**—किसी भी जीविका में नवीन नियुक्ति के लिए व्यक्ति का साक्षात्कार किया जाता है। इस साक्षात्कार का प्रमुख उद्देश्य जीविका के लिए व्यक्ति की उपयुक्तता (fitness) निश्चित करना है। इसमें जीविका से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं। ये प्रश्न साक्षात्कार करने वाले के द्वारा पूछे जाते हैं।

**(२) सूचनात्मक साक्षात्कार (Informative Interview)**—इस प्रकार के साक्षात्कार में छात्र के साफल्य तथा विभिन्न परीक्षाओं में प्राप्त अङ्कों की व्याख्या सम्बन्धी सूचनाएँ प्रदान की जाती हैं। छात्रों को भिन्न-भिन्न नौकरियों, जीविकाओं तथा शिक्षण-संस्थाओं के सम्बन्ध में सूचनाएँ देना भी सूचनात्मक साक्षात्कार का उद्देश्य है।

**(३) अनुसंधान साक्षात्कार (Research Interview)**—साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति में रुचि न रखकर उन तथ्यों में रुचि लेता है जो तथ्य साक्षात्कार देने वाला बताता है। इस प्रकार के तथ्य बहुत व्यक्तियों से प्राप्त किए जाते हैं।

सकलन निदान का महत्वपूर्ण अङ्ग होता है।

(५) परामर्श साक्षात्कार (Counselling Interview)—साक्षात्कार परामर्श प्रक्रिया का प्रमुख आधार माना जाता है। इसका उद्देश्य व्यक्ति में सूझ उत्पन्न करना है जो आत्म-बोध प्राप्त करने में सहायक होता है।

(६) उपचारात्मक साक्षात्कार (Treatment Interview)—उपचारात्मक साक्षात्कार में व्यक्ति से इस प्रकार वार्तालाप किया जाता है कि उसको अपनी चिन्ताओं एवं परिस्थितियों से मुक्ति मिले, उसका समायोजन ठीक हो सके। वह अपनी सभी चिन्ताओं, भावनाओं आदि को व्यक्त करके अपने मन के भार का दूर करता है।

(७) तथ्य सकलन साक्षात्कार (Fact Finding Interview)—इस साक्षात्कार में व्यक्ति या व्यक्तियों के समुदाय से मिलकर तथ्य सकलित किए जाते है। शिक्षक या निर्देशक भी इसी विधि द्वारा छात्रों के सम्बन्ध में तथ्य एकत्रित करते है।

(iii) तथ्य सकलन साक्षात्कार के उद्देश्य

तथ्य सकलन करने के लिए जो साक्षात्कार किया जाता है, उसके तीन उद्देश्य होते हैं.

(१) अन्य विधियों द्वारा सगृहीत किए गए तथ्यों में न्यूनता पूर्ति (Supplement) करना। कुछ तथ्य अन्य विधियों द्वारा प्राप्त नहीं हो पाते हैं। साक्षात्कार में उन सूचनाओं को एकत्रित करने का प्रयत्न किया जाता है जो मनोवैज्ञानिक जांचों द्वारा प्राप्त नहीं हो पाती हैं।

(२) पहले से सकलित की गयी सूचनाओं की पुष्टि करने के लिए तथ्य सकलन साक्षात्कार किया जाता है।

(३) तथ्य सकलन साक्षात्कार का तीसरा उद्देश्य शारीरिक रूप का अवलोकन करना है। बहुत से छात्रों में अनेक शारीरिक दोष पाए जाते हैं जिनका ज्ञान मनोवैज्ञानिक जांचों से नहीं हो सकता है। इसके साथ ही साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के कार्य करने के ढग तथा आचरण करने के ढग का ज्ञान होता है।

(iv) साक्षात्कार के भाग (Parts of Interview)

साक्षात्कार के तीन प्रमुख भाग होते हैं·

(अ) प्रारम्भ (Opening),

(ब) मध्य भाग (The Body),

(स) अन्त (The Closing)।

(अ) साक्षात्कार का आरम्भ (Opening of Interview)

साक्षात्कार के इस भाग में साक्षात्कार करने वाला तथा प्रार्थी के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित करना आता है। साक्षात्कार की सफलता इन मधुर सम्बन्धों पर ही

काम करना चाहिए -

(क) आत्मीयता स्थापित करना (To establish Rapport)—साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के साथ एकतानता स्थापित करनी चाहिए। एकतानता स्थापन हेतु डेविस तथा रॉबिन्सन ने निम्न सुझाव दिए हैं -

(१) सहानुभूति (Sympathy)—साक्षात्कार लेने वाले व्यक्ति को कुछ शब्दों या अन्य किसी विधि द्वारा साक्षात्कार देने वाले के साथ सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए।

(२) विश्वास (Assurance)—साक्षात्कार लेने वाले को चाहिए कि वह साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति में विश्वास पैदा करे तथा साथ ही उसको प्रोत्साहित करे कि उसकी समस्या का समाधान अवश्य होगा।

(३) स्वीकृति (Approval)—साक्षात्कारकर्ता या तो साक्षात्कार देने वाले के साथ अपनी सहमति प्रकट करता है या उसके कृत्यों (actions) को स्वीकृति प्रदान करता है। यह स्वीकृति व्यक्ति को उत्साहित करने के लिए दी जाती है जिससे वह स्वयं की भावनाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक तथा निःसंकोच होकर प्रकट कर सके।

(४) हास्य (Humour)—तनाव दूर करने के लिए हास्य का भी प्रयोग करना चाहिए।

(५) व्यक्तिगत संदर्भ (Personal Reference)—अपनी बातों को स्पष्ट करने के लिए साक्षात्कारकर्ता को अपने अनुभवों के उदाहरण देने चाहिए।

(६) प्रश्न पूछना—व्यक्ति को अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में अधिक विचार करने की प्रेरणा देने के लिए साक्षात्कारकर्ता को कुछ प्रश्न पूछने चाहिए।

(७) भय (Threat)—कभी-कभी साक्षात्कारकर्ता को यह भय दिखाना चाहिए कि अगर साक्षात्कार देने वाला सभी सूचनाएँ नहीं देता है तो परिणाम अच्छा नहीं होगा।

(८) आश्चर्य (Surprise)—साक्षात्कार देने वाले के कथन या क्रिया पर कभी-कभी साक्षात्कार लेने वाले को आश्चर्य प्रकट करना चाहिए। इस प्रकार व्यक्ति अपने कथन या व्यवहार में सुधार कर लेता है।

(ख) प्रारम्भ में व्यवस्थित रचना पर कम ध्यान—साक्षात्कार के प्रारम्भ में कोई भी व्यवस्थित रचना नहीं होनी चाहिए। प्रारम्भिक अवस्थाओं में साक्षात्कार स्वच्छन्द होना चाहिए। साक्षात्कारकर्ता को अपने उद्देश्य तक सीधे पहुँचने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

(ग) अनुमोदन (Permissiveness)—अनुमोदन से तात्पर्य है कि साक्षात्कार-कर्ता साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति को बातचीत की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। वह

कुछ कहेगा, वह स्वीकार किया जाएगा।

(घ) बातचीत का समान समय—साक्षात्कार में बातचीत के लिए दोनों को ही समान समय मिलना चाहिए। साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति को अगर बोलने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया जाएगा तो साक्षात्कार बहुत कम उपयोगी होगा।

(ब) साक्षात्कार का मध्य भाग (The Body of Interview)

साक्षात्कार का मध्य भाग महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसके द्वारा ही इच्छित सूचनाएँ एकत्रित की जाती हैं। मध्य भाग को अधिक उपयोगी बनाने के लिए अग्रलिखित सुझावों पर ध्यान देना चाहिए

(१) प्रेरक प्रश्नों का निर्माण—प्रश्न इस प्रकार के हों जो साक्षात्कार देने वाले को प्रेरणा दें। प्रश्नों द्वारा ही व्यक्ति को बात करने की प्रेरणा प्राप्त हो। बहुत से प्रश्न 'हाँ' या 'नहीं' उत्तर वाले होते हैं। ये प्रश्न साक्षात्कार देने वाले को बात करने की या अधिक बोलने की स्वतन्त्रता नहीं देते हैं। ऐसे प्रश्नों का उपयोग नहीं करना चाहिए।

(२) निस्तब्धता का रचनात्मक उपयोग—निस्तब्धता का प्रयोग सावधानी से करना चाहिए। अगर साक्षात्कार देने वाला चुप हो जाता है तो इसका अर्थ है कि उसके मस्तिष्क में विचार-द्वन्द्व चल रहा है। साक्षात्कारकर्ता की चुप्पी का कारण साक्षात्कार की प्रगति के बारे में चिन्तन हो सकता है।

(३) सीमित सूचनाएँ—साक्षात्कारकर्ता को एक बार के साक्षात्कार में ही छात्र के बारे में सब कुछ ज्ञात करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। सीमित सूचनाएँ ही एक बार के साक्षात्कार में संग्रह करनी चाहिए।

(४) साक्षात्कार देने वाले की भावना तथा अभिवृत्ति समझने का प्रयत्न—साक्षात्कार देते समय व्यक्ति अपनी प्रतिगामी या नकारात्मक भावनाओं को प्रदर्शित करता है। परामर्शदाता को चाहिए कि वह उनकी भावनाओं को समझे, उनको स्वीकार करे। स्वीकृति का आभास भाव-भङ्गिमा, हाँ, अच्छा आदि के द्वारा दे सकता है।

(५) साक्षात्कार पर नियन्त्रण—अगर साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति वार्तालाप पर नियन्त्रण नहीं रखता है तो वह निश्चित सूचनाओं के प्राप्त करने में असमर्थ रहेगा। नियन्त्रण से तात्पर्य है कि वार्तालाप के समय नाममात्र की स्वतन्त्रता दी जाती है और वार्तालाप के मध्य में ही प्रत्यक्ष प्रश्न पूछकर वह साक्षात्कार देने वाले को विषय पर लाता है।

(स) साक्षात्कार की समाप्ति (The Closing of Interview)

साक्षात्कार की समाप्ति करना भी एक कठिन कार्य है। साक्षात्कार की समाप्ति दो रूपों में होती है :

१. साक्षात्कार की समाप्ति इस प्रकार करना कि छात्र को सन्तोष हो।

उसको वार्तालाप के लिए तैयार किया जाए। उसमे यह भाव पैदा कर दिया जाए कि वह साक्षात्कार लेने वाले स्तर का है। अत वह साक्षात्कारकर्ता के विचारो का आदान-प्रदान कर सकता है।

(४) साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति की बातें धैर्यपूर्वक सुननी चाहिए। बहुत से व्यक्ति सुनने की कला मे प्रवीण नही होते हैं। साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि भले ही वह व्यक्ति इधर-उधर की बातें करे तो भी उसे सुने।

(५) साक्षात्कार को सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि साक्षात्कार के लिए अधिक समय दिया जाए।

(६) साक्षात्कार पर साक्षात्कारकर्ता का पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। साक्षात्कारकर्ता को स्वय के चातुर्य से बीच-बीच मे साक्षात्कार देने वाले को निश्चित उद्देश्य मे परिचित कराते रहना चाहिए।

**साक्षात्कार लेने वाले के गुण (Qualities of a Good Interviewer)**

साक्षात्कार मे सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि साक्षात्कार लेने वाले मे कुछ अच्छे गुण हो। कुछ गुण जो एक अच्छे साक्षात्कार लेने वाले मे होने चाहिए, निम्न प्रकार हैं

**(१) स्पष्ट वक्ता**—समालायक को कोई भी बात घुमा-फिराकर नही करनी चाहिए। साक्षात्कार देने वाले पर यह प्रभाव डाले कि वह उसमे अधिक रुचि रखता है।

**(२) अच्छे-बुरे पर आश्चर्य प्रकट न करना**—समालायक को छात्र की अच्छी या बुरी बातो पर आश्चर्य प्रकट नही करना चाहिए। छात्र की सभी त्रुटियो, कमियो को शान्तिपूर्वक सुनना चाहिए।

**(३) हास्य (Humorous)**—समालायक को हँसमुख होना चाहिए। तनाव-पूर्ण स्थिति को समाप्त करने के लिए इस गुण का होना आवश्यक है।

**(४) वार्तालाप पर एकमात्र अधिकार न करना**—साक्षात्कारकर्ता को केवल स्वय ही बोलते नही रहना चाहिए, अपितु साक्षात्कार देने वाले को भी बोलने का समान अवसर देना चाहिए।

**(५) विश्वास बनाए रखने का प्रयत्न**—साक्षात्कार द्वारा प्रकट किए गए विश्वास को अन्त तक बनाए रखने के लिए समालायक को प्रयत्न करना चाहिए। साक्षात्कार देने वाले की स्वीकृति लिये बिना समालायक को साक्षात्कार के विषय मे उसके किसी परिचित से वर्णन नही करना चाहिए।

**(६) अच्छा सुनने वाला हो**—समालायक को चाहिए कि वह साक्षात्कार देने वाले की बातो पर धैर्य न खो बैठे। अपनी अभिवृत्ति तथा कथन द्वारा उसको यह प्रदर्शित करना चाहिए कि वह साक्षात्कार देने वाले मे गहरी रुचि रखता है।

समालायक में दो गुण विशुद्धता (Genuineness) तथा सद्भाव (Sincerity) अवश्य होने चाहिए।

(७) **अभिवृत्ति तथा भावनाओं को स्वीकार करना**—समालायक को साक्षात्कार देने वाले की भावनाओं का आदर करना चाहिए जिससे वह व्यक्ति अपने सन्देह (doubts) व्यक्त कर सके। समालायक को किसी प्रकार का निर्णय नहीं देना चाहिए।

(८) **सीमित सूचनाओं का संग्रह**—एक ही साक्षात्कार में अनेक तथ्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। समालायक को चाहिए कि पूर्व निश्चित सूचनाएँ प्राप्त करने का प्रयत्न करे।

रथ स्ट्रेंग ने कहा है—"साक्षात्कार की सफलता समालायक के व्यक्तित्व पर निर्भर रहती है।" समालायक का व्यक्तित्व आकर्षक होना चाहिए जिससे वह साक्षात्कार देने वाले को प्रभावित कर सके।

### (vi) साक्षात्कार के लाभ (Advantages of Interview)

साक्षात्कार विधि के निम्नलिखित लाभ हैं :

१. इस विधि का प्रयोग अनेक समस्याओं तथा उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।
२. साक्षात्कार विधि को प्रयोग में लाना सरल है।
३. छात्रों की अन्तर्दृष्टि (insight) को विकसित करने में सहायक होती है।
४. निषेधात्मक भावनाओं (negative feelings) को स्वीकार करने तथा उनको स्पष्ट करने का अवसर साक्षात्कार में प्राप्त होता है।
५. सम्पूर्ण व्यक्ति को समझने की उत्तम विधि है। व्यक्ति की अभिवृत्ति, संवेग, विचार आदि सभी का अध्ययन होता है।
६. साक्षात्कार देने वाले को अपनी समस्याएँ प्रकट करने का साक्षात्कार अच्छा अवसर प्रदान करता है।
७. विभिन्न दशाओं तथा परिस्थितियों में साक्षात्कार का प्रयोग करने के लिए इसे लचकदार बनाया जा सकता है।
८. छात्र की समस्याओं के कारण ज्ञात करने में साक्षात्कार समालायक की सहायता करता है।

### (vii) साक्षात्कार की परिसीमाएँ (Limitations of Interview)

उपर्युक्त लाभ होने पर भी इस विधि में कुछ कमियाँ पाई जाती हैं

१. यह एक आत्मनिष्ठ विधि है।
२. एक साक्षात्कार के परिणामों की व्याख्या करना कभी कभी कठिन हो जाता है।

३ पृथक सामाजिक पृष्ठभूमि भी समालोचक को प्रभावित करती है। सभी व्यक्तियों पर समाज की मान्यताओं, धारणाओं और विश्वास का प्रभाव रहता है। समालोचक तथा साक्षात्कार देने वाले व्यक्तियों की सामाजिक पृष्ठभूमि में अन्तर होने पर समालोचक उस व्यक्ति द्वारा व्यक्त अनेक सूचनाओं पर ध्यान नहीं देगा।
४ व्यक्तिगत भावनाओं द्वारा साक्षात्कार प्रभावित हो सकता है।
५ यह तनाव दूर करने में सहायक होता है।
६ इस विधि में विश्वसनीयता तथा वैधता की कमी पायी जाती है।

### ✓ ■ संकलित आलेख-पत्र
### (Cumulative Record Cards)

छात्रों को उचित परामर्श तथा निर्देशन सहायता प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि उस छात्र से सम्बन्धित समस्त सूचनाएँ प्राप्त की जाएँ। व्यक्ति का विभिन्न विधियों द्वारा अध्ययन करने के उपरान्त जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं उनको संकलित रूप में रखना निर्देशन कार्यक्रम के लिए अधिक उपयोगी होता है। 'संकलित आलेख' शब्द का प्रयोग सन् १६३० से प्रारम्भ हुआ है।

**(i) संकलित आलेख-पत्र क्या है ?**

संकलित आलेख-पत्र की अनेक विद्वानों ने परिभाषाएँ दी हैं। डब्ल्यू० सी० एलिन ने संकलित आलेख-पत्र के सम्बन्ध में कहा है—"संकलित आलेख-पत्र में व्यक्तिगत छात्र के मूल्यांकन (Appraised) से सम्बन्धित सूचनाओं का आलेख होता है। सामान्यतः ये सूचनाएँ एक पत्र पर लिखकर एक स्थान पर ही रखी जाती हैं।"

जेन वार्टस के अनुसार—"परीक्षा, प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, व्यक्ति-वृत्त अध्ययन आदि विभिन्न विधियों के प्रयोग से प्राप्त छात्र से सम्बन्धित सभी महत्त्वपूर्ण सूचनाओं को सारांश रूप में संकलित आलेख-पत्र में संगृहीत करना चाहिए।"

मुरे थॉमस के अनुसार—"संकलित आलेख-पत्र में किसी छात्र के बारे में लम्बी अवधि में एकत्रित की सूचनाएँ होती हैं।"

उपर्युक्त परिभाषाएँ स्पष्ट करती हैं कि छात्र के जीवन से सम्बन्धित सभी प्रकार की सूचनाएँ, जैसे, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, चारित्रिक और मनोवैज्ञानिक आदि; संकलित आलेख-पत्र में लिखी जाती हैं। प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश प्राप्त करने के समय से ही बालक का संकलित आलेख-पत्र रखना प्रारम्भ होता है।

**(ii) संकलित आलेख-पत्र का महत्त्व (Importance of the Cumulative Record Card)**

संकलित आलेख-पत्र का महत्त्व शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन के क्षेत्र में अत्यधिक है। आलेख-पत्र में छात्र की प्रगति तथा उसके गुणों का विवरण होता

(३) सकलित आलेख-पत्र अध्यापक को यह ढूंढने मे सहायता करते हैं कि छात्र अपनी योग्यता के अनुसार साफल्य (Attainment) प्राप्त कर रहा है या नही। कुछ छात्रो मे योग्यता अधिक होती है परन्तु उनका साफल्य कम होता है। सकलित आलेख-पत्र से प्राप्त तथ्य कम साफल्य के कारणों को ज्ञात करने तथा उनका उपचार करने मे अध्यापक की सहायता करते हैं।

(४) आलेख-पत्र से छात्र के बारे मे वे सूचनाएँ प्राप्त होती हैं जो परीक्षा के द्वारा ज्ञात नही हो पाती हैं।

(५) छात्र के सावेगिक एव सामाजिक समायोजन का ज्ञान सकलित आलेख-पत्र से होता है।

(६) सकलित आलेख-पत्र छात्रों को शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन देने मे सहायक होता है।

(iv) संकलित आलेख-पत्र के प्रकार (Types of Cumulative Records)

सकलित आलेख-पत्र तीन प्रकार के होते हैं

(१) एक पत्र लेखा (Single Card Record)।

(२) पैकेट या परत (Packet or folder)।

(३) सकलित परत (Cumulative folder)।

(१) एक पत्र लेखा (Single Card Record)—इसमें एक ही पत्र होता है। इसके दोनो ओर ही तथ्य लिखे जाते हैं। अगर अधिक सूचनाएँ लिखनी हो तो एक अतिरिक्त परत का प्रबन्ध करना चाहिए।

(२) पैकेट या परत—प्रयोग मे लाये जाने वाले पैकेट अनेक आकार के होते हैं। इनका आकार ४×६ इचो से लेकर पूरे पत्र के आकार का हो सकता है। इन पैकेटो मे अनेक पत्र विभिन्न सूचनाएँ लिखकर रखे जा सकते हैं। रङ्गीन पत्र प्रयोग में लाये जा सकते हैं। इससे पत्र छाँटने मे सुविधा रहती है। इसी प्रकार शिक्षा काल मे छात्र के बारे मे सूचनाएँ लिखने के लिए किसी भी समय उनको निकाला जा सकता है।

(३) संकलित परत—इसमे अतिरिक्त सूचनाएँ लिखने का प्रबन्ध होता है। विशेष रूप से निश्चित रिक्त स्थानो को परत के दोनो ओर छात्र से सम्बन्धित तथ्यो से भरा जाता है।

(v) सकलित आलेख-पत्रों की विषय-वस्तु

यह अभी तक विवादास्पद है कि आलेख-पत्र की विषय-वस्तु क्या होनी चाहिए। बालक के कक्षा स्तर एव विद्यालय की व्यवस्था पर आलेख-पत्र मे अंकित की जाने वाली सूचना निर्भर होगी। यहाँ कुछ विवाद रहित तथ्यो का वर्णन किया जायगा जो सकलित आलेख-पत्र मे होने चाहिए :

**व्यक्तिगत (Personal)**—नाम, जन्म तिथि, जन्म-स्थान, लिंग, धर्म, निवास-स्थान, प्रवेश-तिथि, प्रवेश संख्या, स्थायी पता।

**परिवार और समुदाय (Home and Community)**—पिता का नाम, जन्म स्थान, व्यवसाय, जीविका या वृत्ति, घर की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति, भाई-बहनों की संख्या, पैतृक भाषा, धर्म, माता-पिता के वैवाहिक सम्बन्ध, पिता की मासिक आय, भाई-बहिनों में कौन-सी संख्या है, क्योंकि यह छात्र के विकास को प्रभावित करते हैं।

**उपस्थिति (Attendence)**—बालक कितने दिन उपस्थित रहा, लम्बी अनुपस्थिति का कारण।

**स्वास्थ्य (Health)**—ऊँचाई, भार, शारीरिक दोष, संवेगिक सन्तुलन, दाँत, आँख या नाक, रोग का वर्णन, वंश-परम्परा से प्राप्त रोग। डॉक्टर द्वारा समय-समय पर किए गए निरीक्षण का लेखा भी रखना चाहिए।

**योग्यताओं का मापन (Assesment of Abilities)**—योग्यताएँ दो वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं :

(अ) सामान्य योग्यता (General Ability)।

(आ) विशिष्ट योग्यता (Special Ability)।

सामान्य योग्यता से तात्पर्य मानसिक क्षमता से है। सभी प्रकार के काम करने में इस सामान्य योग्यता का प्रयोग किया जाता है। सामान्य योग्यता का मापन करने [illegible] लिए परीक्षाओं का निर्माण किया गया है।

**रुचियाँ (Interests)**—छात्र की रुचियों का आलेख भी रखना चाहिए। यह आलेख तभी करना चाहिए जबकि रुचि को क्रियात्मक रूप में देख लिया जाए। रुचियों का लेखन विभिन्न शीर्षकों (Headings) में करना चाहिए; जैसे—बौद्धिक, क्रियात्मक, रचनात्मक, सौन्दर्य के प्रति एवं सामाजिक।

**व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताएँ**—ईमानदारी (Honesty), उद्यम (Industry), विनय (Courtesy), आत्मविश्वास (Self-confidence), सामाजिक कुशलता (Sociability), स्वतःप्रेरणा (Initiative), सहयोगिता (Cooperativeness), संवेगिक स्थिरता (Emotional stability), नेतृत्व (Leadership), उत्तरदायित्व का भाव (Sense of responsibility) आदि गुणों का मापन करने के लिए पाँच बिन्दु पैमाने (Five-point scale) का प्रयोग करना चाहिए। इन गुणों का निर्धारण (Rating) उन अध्यापकों द्वारा करवाना चाहिए जो बालक के अधिक सम्पर्क में आते हैं।

[illegible] (Academic work)—पाठ्य विषयों में प्राप्त अंक, कक्षा में स्थान, विफलताओं का वर्णन, सीखने की गति, हस्त-

छात्र का विद्यालय के प्रति दृष्टिकोण—छात्र में सहयोग की भावना की उपस्थिति, छात्र विद्यालय के उत्सवों में भाग लेता है या नहीं।

जीविका एवं शिक्षा के क्षेत्र में योजना—छात्र अपने भविष्य के लिए जीविका या शिक्षा के क्षेत्र में क्या योजना बनाता है।

सह-पाठ्यक्रम क्रियाएँ (Co-Curricular Activities)—खेल-कूद, जिनमें छात्र भाग लेता है, साहित्यिक क्रियाएँ तथा समाज-सेवा आदि।

प्रधानाचार्य का मत—अन्त में प्रधानाध्यापक छात्र की वर्ष भर की प्रगति के आधार पर अपना मत प्रकट करता है। आवश्यकता होने पर प्रधानाचार्य अध्यापक की सहायता प्राप्त कर सकता है।

(vi) अच्छे संकलित पत्र की विशेषताएँ (Characteristics of a Good Cumulative Record Card)

आलेख-पत्र में संगृहीत तथ्यों के आधार पर ही छात्रों को परामर्श दिया जाता है।

संकलित आलेख-पत्र का एक नमूना

विद्यालय आलेख-पत्र

छात्र का नाम .... .... .... .... .... ....

जन्म-तिथि .... वर्ष माह दिन ....

पिता का नाम .... .... व्यवसाय .... ....

पता .... .... .... .... .... ....

विद्यालय में प्रवेश-तिथि .... .... प्रवेश-पंजी संख्या ....

(१) विद्यालय जिनमें अध्ययन किया

| क्रम-संख्या | विद्यालय का नाम | प्रवेश की तिथि | कक्षा जिसमें प्रवेश लिया | विद्यालय छोड़ने की तिथि | कक्षा जिसको छोड़ा | छोड़ने के कारण |
|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | | | | | | |
| २ | | | | | | |
| ३ | | | | | | |
| ४ | | | | | | |

### (२) उपस्थिति

| वर्ष | सम्भव | वास्तविक | दीर्घकालीन उपस्थिति कारण सहित |
|---|---|---|---|
| १९...... | | | |
| १९...... | | | |
| १९...... | | | |

### (३) पारिवारिक इतिहास

| वर्ष | १९...... | १९...... | १९...... |
|---|---|---|---|
| परिवार का प्रकार (सम्मिलित या पृथक) | | | |
| परिवार के सदस्यों की संख्या | | | |
| विद्यार्थी का परिवार में स्थान | | | |
| माता-पिता का व्यवसाय (व्यापार, कृषि, नौकरी) | | | |
| परिवार की आर्थिक व्यवस्था | | | |
| सम्बन्धी लोगों का व्यवसाय | | | |
| परिवार से सम्बन्धित अन्य कोई सूचना | | | |

### (४) विद्यालयों में उत्तरदायित्व का पद

| क्रियाएँ | वर्ष ...... | वर्ष ...... | वर्ष ...... |
|---|---|---|---|
| अध्ययन | | | |
| खेल-कूद | | | |
| बाल-सभा | | | |
| स्काउटिंग | | | |
| समाज-सेवा | | | |
| अन्य | | | |

### (५) स्वास्थ्य सम्बन्धी रिपोर्ट

स्वास्थ्य सम्बन्धी पूर्व इतिहास

| वर्ष और माह | ऊँचाई | भार | सीने की माप | | | कोई शारीरिक दोष | कोई भयंकर रोग | चिकित्सक की रिपोर्ट |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | सामान्य | सिकोड़ने पर | फैलने पर | | | |
| १९........ | | | | | | | | |
| १९........ | | | | | | | | |
| १९........ | | | | | | | | |

### (६) पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में भाग लेना

| क्रियाएँ | १९........ | १९........ | १९........ |
|---|---|---|---|
| खेल-कूद | | | |
| व्यक्तिगत स्वास्थ्य | | | |
| साहित्यिक क्रियाएँ | | | |
| सांस्कृतिक क्रियाएँ | | | |
| सामाजिक सेवा | | | |
| अन्य कोई | | | |

### (७) मुख्य रुचियाँ

| वर्ग या श्रेणी, | १९........ | १९........ | १९........ |
|---|---|---|---|
| बौद्धिक | | | |
| कलात्मक | | | |
| व्यावहारिक | | | |
| भौतिक | | | |
| सामाजिक | | | |

### (११) शैक्षिक सम्प्राप्ति

| विषय | कक्षा ··· ··· | | कक्षा ··· | | कक्षा ··· ··· | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | वर्ष ··· | | वर्ष ··· ··· | | वर्ष ··· ··· | |
| | अर्द्ध वार्षिक | वार्षिक | अर्द्ध वार्षिक | वार्षिक | अर्द्ध वार्षिक | वार्षिक |
| हिन्दी | | | | | | |
| अंग्रेजी | | | | | | |
| गणित | | | | | | |
| संस्कृत | | | | | | |
| गृह विज्ञान | | | | | | |
| भौतिक विज्ञान | | | | | | |
| रसायन विज्ञान | | | | | | |
| अर्थशास्त्र | | | | | | |
| भूगोल | | | | | | |
| इतिहास | | | | | | |
| कला | | | | | | |
| व्यापार प्रणाली | | | | | | |
| दस्तकारी | | | | | | |
| कृषि | | | | | | |
| ड्राइंग | | | | | | |
| शारीरिक शिक्षा | | | | | | |
| प्रयोग | | | | | | |
| योग | | | | | | |
| कक्षा में स्थान | | | | | | |
| प्रधानाचार्य का मत | | | | | | |

छात्रों का अध्ययन करने में ये आलेख-पत्र अधिक सहायक होते हैं। अतः आवश्यक है कि आलेख-पत्र में निम्नलिखित विशेषताएँ हों :

(१) पूर्ण सूचनाएँ (Complete information)—छात्र के विकास से सम्बन्धित पूर्ण तथ्य ही आलेख में लिखने चाहिए। यह कहावत कि 'न्यून सूचनाएँ'

खतरनाक होती है (A little information is a dangerous thing) वहाँ पूर्ण आवश्यक होती है। अपूर्ण सूचनाएँ छात्र का पूर्ण चित्र प्रस्तुत नहीं करतीं हैं। छात्र का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत करने के लिए छात्र जीवन की सभी परिस्थितियों का संक्षिप्त वर्णन लिखना चाहिए। इसके आधार पर ही ठीक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

(२) सत्य सूचनाएँ (True informations)—संचयित आलेख के पत्रों में वैधता (Validity) लाने के लिए आवश्यक है कि सत्य सूचनाएँ ही इसमें लिखी जाएँ। व्यक्तियों से प्राप्त तथ्य नहीं लिखने चाहिए। सूचनाएँ लिखने वाले व्यक्ति को वे ही सूचनाएँ तथा तथ्य लिखने चाहिए जिनका स्वयं उसने अवलोकन किया हो।

(३) सामूहिक मूल्यांकन का आलेख—संचयित आलेख-पत्र में वैधता तथा विश्वसनीयता लाने के लिए आवश्यक है कि विद्यालय के अध्यापकों के सामूहिक मूल्यांकन के आधार पर तथ्य इन पत्रों में अंकित किए जाएँ।

(४) स्वतन्त्र लेखन—आलेख-पत्र गुप्त रखने चाहिए। इनमें लिखी जाने वाली नवीन सूचना पूर्व-लिखित सूचना से प्रभावित नहीं होनी चाहिए।

(५) पुनः मूल्यांकन (Re-evaluation)—आलेख-पत्रों का समय-समय पर पुनः मूल्यांकन करना चाहिए। यह कार्य उनमें संगृहीत तथ्यों को व्यवस्थित कर देने में सहायक होता है।

(६) वैषयिक (Objective)—तथ्यों के लेखन में वैषयिकता का पालन करना चाहिए। आलेख-पत्र को प्राप्त करना सरल होना चाहिए। तथ्यों को इस प्रकार लिखा जाए कि उनकी व्याख्या सरलता से की जा सके।

(vii) संकलित आलेख-पत्र के उपयोग (Uses of the Cumulative Record Cards)

संकलित आलेख-पत्र के अनेक उपयोग हैं। शिक्षा तथा व्यवसाय दोनों ही क्षेत्रों में इनका उपयोग किया जा सकता है। इनके विशेष उपयोग निम्नलिखित हैं :

(१) छात्र का वर्गीकरण करने में सहायक—विद्यालय में जो छात्र प्रवेश प्राप्त करते हैं, उनको मानसिक योग्यता के आधार पर शिक्षा देने के लिए आवश्यक है कि उन छात्रों को वर्गों में बाँट दिया जाय। मन्द-बुद्धि या प्रतिभाशाली छात्रों को समस्यात्मक बालक बनाने से रोकने के लिए उनके बौद्धिक विकास के अनुसार शिक्षा देनी चाहिए। इस प्रकार छात्रों को ढूँढ़ने तथा उनका वर्ग बनाने में आलेख-पत्र में अंकित तथ्य अधिक सहायक हो सकते हैं।

(२) नवीन कक्षा से परिचय प्राप्त करने में सहायक—जब अध्यापक को ऐसी कक्षा मिलती है जिसके छात्रों से उसका कोई परिचय नहीं होता है तो उन छात्रों को समझने में ये आलेख-पत्र अध्यापक की सहायता करते हैं। आलेख-पत्र

प्रत्येक छात्र के साथ उस विद्यालय में जाना चाहिए जहाँ वह प्रवेश प्राप्त करता है। ऐसा होने पर अध्यापक छात्र के अतीत जीवन को समझने में सफल होते हैं।

**(३) निदान करने में सहायक**—आलेख-पत्र की सहायता से दो प्रकार की समस्याओं का निदान किया जा सकता है: (१) पिछड़े होने के कारण, और (२) व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ। कक्षा में अनेक छात्र साफल्य में पिछड़े हुए होते हैं। ये छात्र बुद्धि में सामान्य (normal) छात्रों से कुछ नीचे होते हैं। इन छात्रों की बुद्धि-लब्धि ७५ और ९० के मध्य होती है हमारे देश में इस प्रकार के छात्रों का पता लगाने के प्रयत्न नहीं किये जाते हैं। अतः ये छात्र कक्षा में शिक्षण से अधिक लाभ प्राप्त नहीं कर पाते हैं। आलेख-पत्र की सहायता से अध्यापक ऐसे छात्रों का पता लगा सकता है और अपना शिक्षण उनकी योग्यता के अनुसार कर सकता है। कुछ छात्रों का व्यवहार उचित प्रकार का नहीं होता है। ऐसे छात्र अपने को विद्यालय के वातावरण में समायोजित नहीं कर पाते हैं। अध्यापक को इन सभी समस्याओं के समझने तथा दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

**(४) प्रमाण-पत्र लिखने में सहायक**—प्रधानाध्यापक छात्रों को चरित्र, आचरण या खेल के प्रमाण-पत्र देते हैं। इन प्रमाण-पत्रों को बनाने में संकलित आलेख-पत्र में निहित सूचनाएँ प्रधानाध्यापक की सहायता कर सकती हैं।

**(५) बाल-न्यायालय (Juvenile courts) को सूचना प्रदान करना**—जो बालक बाल-अपचारी (Juvenile delinquent) होते हैं, उनको बाल-न्यायालयों में भेजने या उनको उसमें सम्बन्धित सूचनाएँ प्रदान करने में सहायक रहते हैं।

**(६) बालक की रिपोर्ट तैयार करने में सहायक**—बालक की प्रगति की रिपोर्ट माता-पिता को विद्यालय द्वारा प्रति वर्ष भेजी जाती है।

**(७) शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन में सहायक**—छात्रों को पाठ्यक्रम का चुनाव करने में निर्देशन सहायता की आवश्यकता होती है। शैक्षिक या व्यावसायिक निर्देशन का आधार छात्रों के अध्ययन से प्राप्त सूचनाएँ होती हैं। ये सभी सूचनाएँ आलेख-पत्र में सगृहीत रूप से प्राप्त होती हैं।

**(८) रोजगार कार्यालय (Employment Exchange) को सहायक**—इन कार्यालयों में परामर्श सेवा एवं युवक नियुक्ति (Youth Employment) सेवा आरम्भ हो गयी है। ये सेवाएँ तभी सफल हो सकती हैं जबकि इनको छात्रों की क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विद्यालय की रिपोर्ट प्राप्त हो। इन रिपोर्टों को तैयार करने में आलेख-पत्र की सहायता स्पष्ट ही है।

**(९) आत्म-परीक्षण में संकलित आलेख-पत्र छात्र की अधिक सहायता** करते हैं। इनके अध्ययन से छात्र अपनी दुर्बलताओं और क्षमताओं को समझने लगता है।

**(१०) अध्यापक द्वारा छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना**—आलेख-पत्र को तैयार करने का भार अध्यापकों पर आता है। आलेख-पत्र को तैयार करने के लिए

आवश्यक है कि अध्यापक सभी छात्रों में व्यक्तिगत रूप से रुचि रखें। इससे शिक्षा का आदर्श यह भी पूरा होगा कि अध्यापक अपनी कक्षा के छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दें।

जेन वार्टर्स ने संकलित आलेख-पत्र के उपयोग के सम्बन्ध में अपने विचार निम्न प्रकार से प्रकट किये हैं :

"संकलित आलेख-पत्र छात्र के वर्तमान को समझने के लिए भूत की व्याख्या करके, व्यावहारिक कठिनाइयों तथा असफलताओं के कारणों से उसकी क्षमताओं तथा कमियों को दर्शाकर, छात्र के अध्ययन में अध्यापक की सहायता करते हैं।"

**(viii) आलेख का अनुरक्षण (Maintenance of Records)**

संकलित आलेख-पत्र का महत्व तथा उपयोग स्पष्ट होने के उपरान्त अब विचार इस बात पर करना है कि आलेख किस प्रकार रखे जाएँ। संकलित आलेख-पत्र का रखना छात्र के विद्यालय में प्रवेश लेने के समय से ही आरम्भ किया जाए। एक कक्षा से दूसरी कक्षा में या एक विद्यालय से अन्य विद्यालय में प्रवेश लेने पर यह आलेख-पत्र भी उसके साथ जाए।

प्रश्न उठता है कि संकलित आलेख-पत्र कौन बनायेगा ? विद्वानों का मत है कि इन पत्रों को बनाने का उत्तरदायित्व कक्षाध्यापक का होना चाहिए। वह अपनी कक्षा के छात्रों के मध्य अधिक समय व्यतीत करता है, अत वह छात्रों का विभिन्न दृष्टिकोण से अवलोकन कर सकेगा। समय-समय पर अवलोकन-तथ्यों का लेखन वह एक डायरी में करेगा। वर्ष के अन्त में वह संकलित आलेख-पत्र में महत्वपूर्ण तथ्य लिख देगा। कक्षाध्यापक को चाहिए कि तथ्यों को लेखन करने से पहले अपने सहयोगी अध्यापकों से भी विचार-विनिमय कर ले, क्योंकि अन्य अध्यापक जो कक्षा में अपना विषय पढ़ाते हैं, छात्रों के सम्पर्क में आते हैं। माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने भी यही सुझाव दिया है कि कक्षाध्यापक ही इन आलेख-पत्रों को बनायेंगे।

**(ix) आलेख-पत्र को लोकप्रिय बनाने के प्रयत्न**

भारत में संकलित आलेख-पत्र का उपयोग बहुत कम होता है। यहाँ विद्यालयों में अभी तक आलेख-पत्र के महत्त्व को अध्यापक वर्ग नहीं समझता है। वे इनको विद्यालय के अतिरिक्त कार्य समझते हैं। इनको बनाने का कार्य उन पर थोपा नहीं जा सकता है। इस विधि के लाभों से अध्यापकों को परिचित कराने का प्रयत्न करना चाहिए। इस कार्य के लिए पुनश्चर्या (Refresher course) या वार्तालाप (Talks) संगठित करने चाहिए। विशेषज्ञों द्वारा वार्तालाप में भाग लेना चाहिए। प्रशासक वर्ग को भी आलेख-पत्र का महत्त्व स्पष्ट होना चाहिए। जब तक प्रधानाचार्य अपने यहाँ के अध्यापकों में इनके प्रति रुचि उत्पन्न नहीं करेंगे या उनको प्रोत्साहन नहीं देंगे, यह कार्य सफलतापूर्वक नहीं चल सकता है। माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने सुझाव दिया है कि अध्यापकों को आलेख-पत्र बनाने का प्रशिक्षण देने के लिए शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में व्यवस्था होनी चाहिए।

आलेख-पत्र निर्माण करते समय निम्नलिखित सिद्धांतो को ध्यान मे रखना चाहिए

१ संकलित आलेख-पत्र का रूप विद्यालय के उद्देश्यो के अनुरूप होना चाहिए।

२ *आलेख-पत्र का रूप निश्चित करने मे सभी अध्यापकों की सहमति* प्राप्त करनी चाहिए।

३ आलेख-पत्र के रूप की योजना इस प्रकार बनानी चाहिए कि इस पत्र को पढ़ने-लिखने मे अधिक सुविधा रहे। आलेख-पत्र अधिक जटिल नही बनाना चाहिए।

४ आलेख-पत्र मे विषय-सूची (Contents) व्यवस्थित रूप मे होनी चाहिए जो बालक के क्रमिक विकास को प्रदर्शित करे।

५ आलेख-पत्र ऐसे स्थान पर रखे जाएँ कि उनको प्राप्त करने मे असुविधा न हो।

६ आलेख-पत्रो को भरने तथा उपयोग करने के लिए एक नियमावली (Manual) भी तैयार करनी चाहिए।

७ संकलित आलेख-पत्र के रूप मे लचीलापन (Flexibility) होना चाहिए। जब जैसी आवश्यकता पड़े, उसमे वैसा ही परिवर्तन किया जा सके।

८ *आलेख-पत्र की कुछ सूचनाएँ गुप्त होनी हैं। प्रत्येक व्यक्ति उन तथ्यों* को नही देख सकता है। अत इनके प्रयोग पर कुछ नियन्त्रण भी रखना चाहिए।

९. अध्यापकों को आलेख-पत्र का उपयोग करना भी आना चाहिए। यह एक कठिन कार्य है।

**थार्नडाइक एवं हैगेन** ने कहा है—"आलेख-पत्रो मे जो कुछ लिखा जाता है वह महत्वपूर्ण नही है, परन्तु उनसे जो कुछ प्राप्त किया जाता है वह महत्त्वपूर्ण है।"

**(x) भारत में आलेख-पत्र बनाने में कठिनाइयाँ (Difficulties in India)**

भारत मे अभी अध्यापक, माता-पिता तथा प्रशासक वर्ग आलेख-पत्र के महत्व को नही समझते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के सभी विद्यालयो मे प्रत्येक छात्र का आलेख-पत्र रखना अनिवार्य सा हो गया है। अपने देश मे संकलित आलेख-पत्र रखने मे कुछ कठिनाइयाँ भी हैं, जो निम्नलिखित हैं

(१) आलेख-पत्र निर्माण के प्रशिक्षण की सुविधा का अभाव—भारत मे *अध्यापकों को आलेख-पत्र तैयार करने का प्रशिक्षण देने के लिए संस्थाओ का अभाव* है। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान मे भी इसके प्रशिक्षण की सुविधा नही है। कुछ प्रान्तो मे वृत्तिक अध्यापक (Carrier master) के प्रशिक्षण के लिए कुछ संस्थाएँ स्थापित की गयी हैं। उन संस्थाओं मे ही अन्य अध्यापकों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था होनी चाहिए।

(२) अधिक कार्य-भार—भारत में अध्यापकों पर कार्य-भार भी अधिक होता है। एक अध्यापक को प्रति सप्ताह लगभग ३६ घण्टे शिक्षण कार्य करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त छात्रों की उत्तर पुस्तिकाओं को देखना, विद्यालय की अन्य क्रियाओं में भाग लेना आवश्यक है। उपस्थिति रजिस्टर तैयार करना एवं छात्रों से शुल्क वसूल करना भी इनका कार्य है। हमारे देश में अभी अध्यापक तथा छात्रों का अनुपात भी उचित नहीं है। एक अध्यापक के पास छात्रों की संख्या अधिक होती है। अतः अध्यापक छात्रों के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क भी स्थापित नहीं कर पाता है। आलेख-पत्र बनाने के कार्य को अध्यापक अतिरिक्त कार्य-भार समझते हैं।

(३) विद्यालयों में बहुपरिस्थितियों का अभाव—छात्र के व्यवहार का सही रूप समझने के लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न परिस्थितियों में अध्ययन किया जाए। अपने देश के विद्यालयों में विभिन्न कार्य-क्षेत्रों का अभाव है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है।

(४) प्रमापीकृत परीक्षाएँ प्राप्त नहीं हैं—पश्चिमी देशों में मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं का निर्माण बड़े पैमाने पर हुआ है। भारत में प्रमापीकृत परीक्षाएँ सुलभ नहीं हैं, अतः छात्रों की मनोवैज्ञानिक जाँच नहीं हो पाती है। पश्चिमी देशों की परीक्षाओं का उपयोग अपने देश में सम्भव नहीं है, क्योंकि उन देशों की परिस्थितियाँ अपने देश से भिन्न हैं।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. छात्र-अध्ययन के लिए सूचनाएँ एकत्रित करने की अप्रमापीकृत विधियाँ कौन-कौनसी हैं ? संक्षिप्त परिचय दीजिए।

२. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए—

(i) आत्मकथा, (ii) समाजमिति, (iii) आकस्मिक निरीक्षण अभिलेख, (iv) निर्धारण-मान, (v) व्यक्ति-वृत्त।

३. साक्षात्कार किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार का होता है ? छात्र-अध्ययन में इसकी क्या उपयोगिता है ?

४. अवलोकन से आप क्या समझते हैं ? मूल्यांकन में इसका क्या महत्त्व है ?

५. 'संकलित आलेख-पत्र की मूल्यांकन में उपयोगिता' पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

६

# सूचनाएँ प्राप्त करने की प्रमापीकृत विधियाँ

## (STANDARDISED TECHNIQUES TO COLLECT INFORMATIONS)

### ✓१. बुद्धि—प्रकृति तथा परीक्षण

### (Intelligence—Its Nature and Measurement)

**परिभाषा**

यूनानी दार्शनिकों ने दर्शनशास्त्र में ही एक शाखा का विकास किया जिसे हम शक्ति-मनोविज्ञान (Faculty-Psychology) के नाम से पुकारते हैं। इसके विचारानुसार मनुष्य का मस्तिष्क अनेक शक्तियों (Faculties) में विभक्त है। ये शक्तियाँ विभिन्न कोष्ठों (Cells) में निहित हैं। इस प्रकार बुद्धि के लिए भी एक कोष्ठ (Cell) निर्धारित है, ऐसा कहकर शक्ति-मनोविज्ञान के अनुयायियों ने बुद्धि को सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप से परिभाषित करने का प्रयत्न किया। परन्तु वर्तमान युग में शक्ति-मनोविज्ञान की विचारधाराओं को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया गया है।

बुद्धि को परिभाषित करने में इसके उपरान्त स्टर्न (Stern) ने प्रयास किये तथा उन्होंने बुद्धि की परिभाषा देते हुए कहा—"बुद्धि एक व्यक्ति की सामान्य क्षमता है, जिसके द्वारा वह चेतनापूर्वक अपने विचारों को नवीन आवश्यकताओं से समायोजित करता है, यह नई समस्याओं तथा जीवन की परिस्थितियों के प्रति सामान्य मानसिक ग्रहणशीलता है।"

किन्तु स्टर्न की परिभाषा ने नई समस्याएँ उत्पन्न कर दीं। उदाहरण के लिए, ग्रहणशीलता (Adaptability) क्या है? यह एक प्रक्रिया है जिसे सूक्ष्मता से नहीं मापा जा सकता है। स्टर्न के उपरान्त अनेक मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि की परिभाषा विभिन्न प्रकार से दी। इस प्रकार बुद्धि की परिभाषा से सम्बन्धित तीन स्पष्ट विचारधाराएँ प्रकट हो गयीं—(१) कुछ इसे सीखने की क्षमता (Capacity to learn) मानते थे, (२) कुछ इसे भावात्मक सम्बोध (Abstract concepts) मानने लगे, तथा (३) कुछ इसे समस्या-समाधान की योग्यता मानने लगे।

इस विचारधारा के कारण 'जर्नल आफ एजुकेशनल साइकोलॉजी' (Journal of Educational Psychology) की ओर से एक वृहत् गोष्ठी (Symposium) की व्यवस्था करनी पड़ी। इसमें बुद्धि की विभिन्न परिभाषाएँ दी गईं। टर्मन (Terman) ने अपनी परिभाषा में कहा— 'साधारण विचारों के अनुरूप चिन्तन किया ही व्यक्ति की बुद्धि कहलाती है।' टर्मन ने आगे कहा—'दो मानसिक विभिन्नताएँ व्यक्तियों की सम्बोध (Concept) निर्माण-योग्यता तथा सम्बोधों के दुरूह स्थितियों में प्रयोग करने की क्षमता पर निर्भर करती है।' इस गोष्ठी में 14 मनोवैज्ञानिकों ने भाग लिया तथा सभी ने अपने विचार प्रकट किये। बुद्धि सीखने की क्षमता है—ऐसे विचार बकिंघम (Buckingum), डियरबोर्न (Dearborne) इत्यादि ने प्रकट किये। 'बुद्धि समायोजन क्षमता है', इस प्रकार के विचार कॉल्विन (Colvin), पैटर्सन (Paterson) इत्यादि ने दिये, तथा हैगर्टी (Haggarthy) व थर्स्टन (Thurstone) ने कहा कि 'बुद्धि अनेक तत्वों का समन्वय है।' किन्तु सब ने एकमत होकर यह स्वीकार किया कि बुद्धि एक अत्यन्त जटिल घटना क्रिया (Phenomenon) है।'

वुड्रो (Woodrow) ने बुद्धि की परिभाषा अन्य रूप से हमारे सम्मुख प्रस्तुत की है। उन्होंने कहा—"बुद्धि क्षमताएँ ग्रहण करने की क्षमता है।" इस प्रकार वर्तमान क्षमता मनुष्य के पूर्वज्ञान पर निर्भर है तथा इसकी जाँच समायोजन की योग्यता के आधार पर की जाती है। समायोजन से वुड्रो का अर्थ उपयुक्त उद्देश्य प्राप्त करने के साधनों से है। इसी विचारधारा को स्वीकार करते हुए पिटनर (Pitner) ने कहा है—"बुद्धि नई स्थितियों के साथ समायोजन करने की योग्यता है।"

कुछ अन्य विद्वानों ने बुद्धि की परिभाषा जन्मजात मानसिक प्रवृत्ति (Innate Disposition) के आधार पर की है। ऐसी ही एक परिभाषा ब्लैक (Black) ने दी है। वे कहते हैं—"बुद्धि जन्मजात मानसिक प्रवृत्तियों (Innate disposition) पर निर्भर है।" प्रत्येक जन्मजात मानसिक प्रवृति के दो पहलू होते हैं—(१) पर्यवेक्षण क्षमता (Efficiency of Perception), तथा (ii) प्रतिक्रिया की क्षमता (Efficiency of Reactions)। इस प्रकार की परिभाषा के अनुसार बुद्धि के कई रूप (Phases) हो सकते है क्योंकि व्यक्ति में कई जन्मजात मानसिक प्रवृत्तियाँ हुआ करती हैं।

अभी एक प्रकाशन में स्टॉडर्ड (Stoddard) ने बुद्धि की एक अत्यन्त व्यापक परिभाषा देते हुए कहा—"बुद्धि उन कार्यों को सम्पन्न करने की क्षमता है जिनमें कठिनाई, विषमता, अमूर्तता, मितव्ययता, उद्देश्य के साथ समायोजनशीलता, सामाजिक मूल्य तथा मौलिकता के गुणों का प्रयोग हो तथा जिन्हें सम्पादित करने में शक्ति की एकाग्रता तथा प्रत्यावर्त संवेगात्मक शक्तियों का सामना करना पड़े।" स्टॉडर्ड यहाँ पर स्पष्ट कर देते हैं कि जटिलता से उनका तात्पर्य क्रमशः वर्द्धित समस्याओं का समाधान करने की योग्यता से है।

इसके विपरीत, पीटरसन (Peterson) ने बुद्धि के दैहिक पहलू पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। पीटरसन के अनुसार—बुद्धि दैहिक प्रक्रिया है जिसकी यन्त्र क्रिया (Mechansim) उद्दीपक तथा गृहीत व्यवहार को मिश्रित करती है।

बिने (Binet) ने बुद्धि की परिभाषा उसकी मुख्य क्रियाओं के आधार पर की। बिने ने बुद्धि में तीन तत्त्व सम्मिलित किये—(i) निश्चित निर्देशन लेने तथा उन्हें कायम रखने की प्रवृति, (ii) उपयुक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निश्चित निर्णय लेना, तथा (iii) आत्म-विवेचन की शक्ति।"

थर्स्टन (Thurstone) ने बुद्धि को आठ योग्यताओं का एक पुंज कहा है। उनके अनुसार निम्नांकित आठ योग्यताओं द्वारा बुद्धि का गठन होता है :

| | |
|---|---|
| (१) प्रेक्षण शक्ति (Spatial ability) | (S) |
| (२) सख्या गणना शक्ति (Number ability) | (N) |
| (३) शाब्दिक शक्ति (Verbal ability) | (V) |
| (४) वाक् शक्ति (Word Fluency) | (W) |
| (५) स्मरण शक्ति (Memory) | (M) |
| (६) आगमन तर्क शक्ति (Induction-Reasoning) | (I) |
| (७) निगमन तर्क शक्ति (Deduction-Reasoning) | (D) |
| (८) पर्यवेक्षण गति (Perceptual Speed) | (P) |

इस प्रकार थर्स्टन सामान्य योग्यता में विश्वास नहीं करते हैं। स्पीयरमैन ने बुद्धि को 'सम्बन्धित चिन्तन' की व्याख्या दी तथा इसमें तीन बातों का समावेश किया—(i) अनुभव बोध (Apprehension of experience), (ii) सम्बन्ध शिक्षण (Education of relations), (iii) समन्वय शिक्षण (Education of correlations)।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि बुद्धि एक अत्यन्त जटिल घटना क्रिया (Phenomon) है। बुद्धि वास्तव में क्या है, इस पर कोई भी विद्वान एकमत नहीं हैं। प्राचीन भारत में भी बुद्धि की विवेचना की गई थी। भारतीय दर्शन के अनुसार बुद्धि आध्यात्मवाद के लिए अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय दर्शन के अनुसार उपयुक्त समय पर तथा उपयुक्त स्थान पर उपयुक्त वस्तु का पर्यवेक्षण करने की शक्ति ही बुद्धि है।" जीवन परिस्थितियों एवं समस्याओं की शृंखला है तथा इनमें समायोजन करना अत्यन्त आवश्यक है। समायोजन उपयुक्त वस्तु के पर्यवेक्षण के अभाव में असम्भव है। वस्तु की प्रकृति उसके उद्देश्य पर निर्भर है। प्रत्येक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उचित साधनों का होना भी आवश्यक है। उद्देश्य प्राप्ति की सफलता का सार ही बुद्धि का सार कहा जा सकता है। तकनीकी भाषा में हम कह सकते हैं कि "बुद्धि उपयुक्त सम्बोधों का जो जीवन के अनुरूप होते हैं और समय तथा व्यक्ति के अनुसार अलग-अलग होते हैं, पर्यवेक्षण है"। यह तो एक ही योग्यता है जो विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न समय पर अलग-अलग रूपों में पायी जाती है। अब इस योग्यता को चाहे

जो कह सकते हैं। चाहे इसे प्रयोगात्मक बुद्धिमत्ता (Practial Wisdom) कहिए सामान्य ज्ञान (Common Sense) या बुद्धि-तीव्रता (Genius) या और कुछ, सब ए ही है। परन्तु तब भी इस योग्यता को हम चार भागों में विभक्त कर सकते हैं :

(i) नई परिस्थितियों में समायोजन रखने की योग्यता, (ii) सम्बन्ध ए सह-सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता, (iii) उच्च विचारधारा निर्माण करने योग्यता, (iv) पूर्वानुभवों से ज्ञानार्जन की योग्यता।

२ बुद्धि की प्रकृति (Nature of Intelligence)

बुद्धि की प्रकृति के सम्बन्ध में निम्न दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से दृष्टिगोच होते हैं :

स्पीयरमैन का दृष्टिकोण—स्पीयरमैन के दृष्टिकोण को हम 'Monarchi viewpoints' कह सकते हैं। इनके अनुसार "बुद्धि एक सर्वशक्तिमान, सामान्य मान सिक शक्ति है जो समस्या में हमारी सहायता करती है एवं परिस्थितियों से समा योजन करने में सहायक होती है।" स्पीयरमैन कहते हैं कि सामान्य (G) बुद्धि तत्व समस्त मानसिक क्रियाओं को प्रभावित करता है। सामान्य (G) बुद्धि तत्व स्थायी होत है। परन्तु मनुष्य के अन्य विशिष्ट तत्व (Specific factors अर्थात् Ss) अस्थिर होते हैं तथा एक ही व्यक्ति में ये तत्व विभिन्न मात्रा में पाये जाते हैं। इस प्रकार एव व्यक्ति में बहुत से Ss तत्व होते हैं। पर G तत्व एक ही होता है और यह (G) तत्व समस्त Ss को प्रभावित करता है। इस सिद्धान्त को निम्न चित्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :
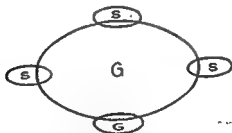
इस प्रकार 'G' तत्व सर्वशक्तिमान तत्व है जो समस्त Ss तत्वों को पूरी तरह से प्रभावित करता है।

थॉर्नडाइक का दृष्टिकोण—थॉर्नडाइक के दृष्टिकोण को अराजकवादी दृष्टिकोण (Anarchic viewpoint) कह सकते हैं। थॉर्नडाइक बुद्धि को एक विशिष्ट सामान्य शक्ति नहीं मानता है, न कुछ शक्तियों का समन्वय या योग ही वरन् थॉर्नडाइक के अनुसार "बुद्धि अनेक जन्मजात योग्यताओं का मिश्रण है।" इस प्रकार बुद्धि अनेक योग्यताओं का औसत है परन्तु ये अनेक योग्यताएँ एक दूसरे से

पूर्णतया स्वतन्त्र हैं। इस प्रकार अनेक योग्यताओं के परीक्षण प्राप्तांक में अनुबन्ध दिखाई देता है और बुद्धि-परीक्षा बुद्धि का माप नहीं करती है, बरन् सामान्य योग्यताओं को मापती है। थॉर्नडाइक स्पीयरमैन के सामान्य तत्त्व (G) को नहीं मानता है, पर कहता है कि सभी कार्यों में कुछ समान तत्त्व होते हैं इसी कारण उनके परीक्षण प्राप्तांक में अनुबन्ध होता है। अनुबन्ध की मात्रा दो कार्यों की समानता का आधार प्रकट करती है। इस प्रकार थॉर्नडाइक ने कहा कि बुद्धि दो तत्त्वों से निर्मित नहीं बरन् बहुतत्त्वों से निर्मित है। अत थॉर्नडाइक के सिद्धान्त को 'बहुतत्त्व सिद्धान्त' (Multi-factor theory) के नाम से भी पुकारा जाता है।

**थर्स्टन का दृष्टिकोण**—थर्स्टन ने जिस विधि को अपनाया उसे 'तत्त्व विश्लेषण' (Factor analysis) भी कहते हैं। इन्होंने बुद्धि की प्रकृति ज्ञात करने हेतु अनेक प्रयोग किये तथा अन्त में कहा कि बुद्धि विभिन्न आठ अवयवों (Factors) से संगठित है। इन आठ अवयवों के नाम इन्होंने इस प्रकार दिये—प्रेक्षण शक्ति (Spatial ability), संख्या गणना शक्ति (Number ability), शाब्दिक शक्ति (Verbal ability), वाक् शक्ति (Word fluency), स्मरण शक्ति (Memory), आगमन तर्क शक्ति (Inductive reasoning), निगमन तर्क शक्ति (Deductive reasoning), तथा पर्यवेक्षण गति (Perceptual speed)। इस प्रकार बुद्धि एक इकाई नहीं, वरन् एक ऐसी योग्यता है जिसे अनेक भागों में बाँटा जा सकता है। इस सिद्धान्त का समर्थन केली (Kelly) तथा सिरिल बर्ट (Cyril Burt) ने भी किया।

### ३. बुद्धि परीक्षण (Intelligence Tests)

सर्वप्रथम १७६५ में व्यक्तिगत भेद को मान्यता दी गई थी। इसके पश्चात् व्यक्तिगत भेद के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग हुए। इनमें कैटिल तथा गाल्टन के नाम प्रमुख हैं। इन्होंने व्यक्तिगत भेदों के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग किए। परन्तु बुद्धि-मापन का कार्य प्रमुख रूप से बिने द्वारा प्रारम्भ किया गया।

बिने ने यह देखा कि कुछ छात्र कक्षा में बताई गई बातों को अत्यन्त शीघ्रता से एवं सफलता से सीख लेते हैं तथा कुछ छात्र अत्यन्त कुशलतापूर्वक समझाने पर भी पाठ्य-वस्तु को नहीं समझ पाते हैं। अतः बिने यह जानना चाहते थे कि वह कौनसी मानसिक शक्ति है जो इस सफलता एवं असफलता का कारण है, अतएव उन्होंने अपने मित्र साइमन की सहायता से ऐसी परीक्षाओं के निर्माण का काम शुरू कर दिया जिनसे वे इस मानसिक शक्ति (बुद्धि) को माप सकें। इस प्रकार १९०५ में सर्वप्रथम एक बुद्धि-परीक्षण निकाला जिसमें कुल मिलाकर ३० प्रश्न थे जो कठिनाई के क्रम में रखे गए थे। इसका प्रयोग ५० छात्रों पर किया गया। १९०८ तथा १९११ में इस परीक्षण का संशोधन हुआ और 'मानसिक आयु' (Mental Age) शब्द का प्रथम बार इसमें प्रयोग किया गया। अब १९११ में प्रश्नों की संख्या ५४ कर दी गई। इसके उपरान्त १९१६ में बिने ने स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में अपने सहयोगियों

के साथ मिलकर बुद्धि-माप का संशोधन किया और इसे 'स्टेनफोर्ड बिने टेस्ट' का नाम दिया। इसमें कुल मिलाकर ९० प्रश्न थे। इस परीक्षण का प्रमापीकरण १००० बालकों पर किया गया। स्टर्न (Stern) ने इस सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया उन्होंने बुद्धि मापदण्ड के स्थान पर बुद्धि लब्धि (I Q—Intelligence Quotient) का एक मौलिक सुझाव पेश किया। वे बुद्धि-माप हेतु बुद्धि-लब्धि (I. Q) का प्रयोग करने लगे। इसके लिए उन्होंने निम्नलिखित सूत्र प्रस्तुत किया :

$$\text{बु० ल० (I Q)} = \frac{\text{मानसिक आयु (M A)}}{\text{वास्तविक आयु (C A)}} \times १००$$

इस सूत्र के अनुसार मानसिक आयु में वास्तविक आयु का भाग देकर १०० से गुणा कर देते हैं। १०० का गुणा करने से दशमलव नहीं आ पाता यही लाभ है। यदि किसी छात्र की बुद्धि-लब्धि १०० है तो उसे सामान्य बुद्धि वाला छात्र कहेंगे तथा इससे अधिक होने पर उसे तीव्र बुद्धि वाला एवं कम होने पर मन्द बुद्धि वाला बालक कहेंगे। कुछ व्यक्तियों ने बुद्धि-लब्धि के आधार पर भी बालकों का श्रेणी-विभाजन कर दिया है। इस प्रकार के कई श्रेणी विभाजन इस समय देखने को प्राप्त होते हैं। अलग-अलग देशों में अलग-अलग श्रेणी-विभाजन किया गया है। नीचे इसी प्रकार का एक श्रेणी-विभाजन प्रस्तुत है

| | |
|---|---|
| जड़ (Idiots) | ०—२५ बु० ल० |
| मूढ़ (Imbeciles) | २५—५० बु० ल० |
| मूर्ख (Morones) | ५०—७० बु० ल० |
| मन्द बुद्धि (Dull) | ७०—९० बु० ल० |
| सामान्य (Average) | ९०—११० बु० ल० |
| उच्च बुद्धि (Superior) | ११०—१२५ बु० ल० |
| अति उच्च बुद्धि (Very Superior) | १२५—१४० बु० ल० |
| मेधावी या प्रतिभाशाली (Genius) | १४० से ऊपर बु० ल० |

इस प्रकार और भी अनेक वर्गीकरण के आधार बनाए गए परन्तु सबसे एक ही बात की धारणा होती है कि जिसकी बुद्धि-लब्धि अधिक होगी, वही अधिक सभ्य होगा।

धीरे-धीरे बिने के टेस्ट का अनुवाद विभिन्न देशों में हुआ एवं अनेक देशों में इसको अपनाया गया या इसका अनुवाद किया गया या इसी को आधार मानकर दूसरे टेस्ट बनाए गए। उदाहरण के लिए, टरमन ने १९१३—१६ के मध्य संशोधित टेस्ट बनाया, १९२२ में प्रो० बर्ट ने बिने टेस्ट का संशोधन किया। १९१३ में जर्मनी में ऐसे ही टेस्ट बने एवं भारत में भी इसी प्रकार के टेस्ट इलाहाबाद में बनाए गए।

### भारत में बुद्धि परीक्षण का इतिहास (History of Intelligence Tests in India)

(१) भारत में सर्वप्रथम १९२२ में डॉ० हरबर्ट राइस (Dr C Harbert Rice) ने बिने टेस्ट का भारतीय वातावरण के अनुसार प्रमापीकरण किया। यह पंजाबी तथा उर्दू में था एवं इनका नाम 'Hindustani Binet Performance Point Scale' रखा।

(२) प० लज्जाशंकर झा ने १९३३ में 'Simple Mental Test' का प्रमापीकरण भारतीय वातावरण के अनुसार किया।

(३) बेलगाम ट्रेनिंग कॉलिज में डा० वी० वी० कामथ (Dr V V Kamat) ने बिने परीक्षण का भारतीय प्रमापीकृत रूप १९३९ में प्रस्तुत किया। यह कन्नड़ तथा मराठी भाषा में था।

(४) १९४२ में 'Union Christian Training College Non-Verbal Group Tests' का निर्माण डॉ० टी० सी० तिवारी ने किया।

(५) पटना ट्रेनिंग कॉलेज ने स्टेनफोर्ड बुद्धि-परीक्षण को भारतीय रूप दिया।

(६) १९४२ में डॉ० मोहनलाल ने ११+ आयु के बच्चों हेतु हिन्दी तथा उर्दू में सामूहिक परीक्षण को प्रमापीकृत किया।

(७) १९५३ में श्री उदयशंकर ने 'C I E Test of Intelligence' बनाया।

(८) इसके अलावा भारत में निम्नलिखित परीक्षणों का भी निर्माण हुआ है .

(i) The Passur Group Intelligence Test (Urdu), by Prof R R Kumaria

(ii) Group Intelligence Test, by Bureau of Psychology, Allahabad

(iii) 'बुद्धि-मापक परीक्षा'—श्री बी० जी० भौगरल, धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़।

परन्तु ये सभी पाश्चात्य परीक्षणों के आधार पर ही निर्मित हैं।

### ५ बुद्धि-परीक्षाओं का वर्गीकरण (Classification of Intelligence Tests)

निर्देशन में परीक्षाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं अतः निर्देशक को मापन एवं मूल्यांकन के सिद्धान्तों का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। हम यहाँ संक्षेप में बुद्धि-परीक्षाओं का वर्गीकरण करेंगे। इस सम्बन्ध में विस्तृत ज्ञान किसी भी मापन एवं मूल्यांकन की पुस्तक से प्राप्त किया जा सकता है। अपनी सुविधा एवं सरलता हेतु वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :

१—(अ) व्यक्तिगत परीक्षा (Individual Test), तथा

(आ) समूह परीक्षा (Group Test)।

२—(अ) शक्ति-परीक्षा (Power Test), तथा

(आ) गति परीक्षा (Speed Test)।

३—(अ) शाब्दिक परीक्षा (Verbal Test), तथा

(आ) क्रियात्मक परीक्षा (Performance Test)।

१—(आ) व्यक्तिगत परीक्षा—इस प्रकार की परीक्षाएँ एक समय पर एक ही व्यक्ति पर प्रशासित की जा सकती हैं। बिने की परीक्षा तथा उसके समस्त संशोधन व्यक्तिगत परीक्षाएँ थीं। इसी प्रकार जितनी भी क्रियात्मक परीक्षाएँ (Performance Tests) हैं, वे सभी व्यक्तिगत परीक्षाएँ हैं। इनके अलावा वेक्सलर-बैलेव्यू बुद्धि-परीक्षण भी व्यक्तिगत परीक्षा है। प्रमुख शाब्दिक तथा क्रियात्मक व्यक्तिगत परीक्षाएँ निम्नलिखित हैं

१ बिने-स्टेनफोर्ड परीक्षण,

२ वेक्सलर-बैलेव्यू परीक्षण,

३ घर्ट के तर्क-शक्ति परीक्षण,

४ मिनेसोटा पूर्व विद्यालय परीक्षण,

५ मैरिल-पामर मानसिक परीक्षण,

६ जैसिल विकास अनुसूची,

७ कोहेज ब्लाक्स डिजाइन टेस्ट, तथा इसी प्रकार के अन्य क्रियात्मक टेस्ट जिनकी सूची आगे दी जाएगी।

(अ) समूह परीक्षा—समूह परीक्षा वह है जो एक ही समय में पूरे समूह पर दी जा सकती है। जहाँ एक साथ अनेक व्यक्तियों का परीक्षण लेना आवश्यक होता है, वहाँ ये परीक्षण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। यदि नियमपूर्वक लिये जाएँ तो इनकी विश्वसनीयता भी कम नहीं है। ये परीक्षाएँ सेना, अनुसन्धान, विद्यालय, उद्योग इत्यादि में अति उपयोगी हैं। इनमें सबसे अधिक सुविधा इस बात की है कि इनके प्रयोगों के लिए अति कुशल व्यक्तियों की जरूरत नहीं पड़ती है। सामूहिक परीक्षण प्रमुखतया शाब्दिक होते हैं। ये केवल शाब्दिक होने के कारण भाषा-ज्ञान पर आधारित होते हैं। इस कारण इनका प्रयोग उन व्यक्तियों पर नहीं किया जा सकता जो भाषा का ज्ञान किन्हीं कारणों से नहीं रखते हों। कुछ प्रमुख सामूहिक परीक्षणों के नाम नीचे दिए जाते हैं :

१. आर्मी-अल्फा परीक्षण,

२. आर्मी-बीटा परीक्षण,

३. आर्मी जनरल क्लासीफिकेशन परीक्षण,

४. कुहलमैन-एण्डरसन बुद्धि परीक्षण,

५. टरमन ग्रुप टेस्ट ऑफ मेन्टल मैच्युरिटी,

६. टरमन-मैक्नीमर टेस्ट ऑफ मैन्टल एबिलिटी,

७. नार्थम्बरलैंड टे—

८ डॉ० मोहनलाल की सामूहिक बुद्धि-परीक्षा,
९ प्रयाग मेहता का सामान्य बुद्धि-परीक्षण।

२—(अ) शक्ति परीक्षा—शक्ति परीक्षा द्वारा किसी व्यक्ति की एक विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित शक्ति की परीक्षा ली जाती है। इस प्रकार की परीक्षाओं में सर्वप्रथम सरल प्रश्न दिये जाते हैं, तदुपरान्त प्रश्न क्रमशः जटिल होते चले जाते हैं। इस प्रकार के प्रश्न छात्र समयानुसार हल नहीं करते, अर्थात् इनको हल करने हेतु कोई समय निर्धारित नहीं किया जाता है।

(आ) गति परीक्षा—इसमें शक्ति परीक्षा के विपरीत समस्त प्रश्न जटिलता की दृष्टि से समान होते हैं परन्तु समस्त प्रश्न एक निर्धारित समय में करने पड़ते हैं। दिए समय में जो सबसे अधिक प्रश्न कर सकता है वही सबसे अधिक अङ्क प्राप्त करता है। इस प्रकार ये परीक्षाएँ मानसिक गति का मापन करती हैं।

३—(अ) शाब्दिक परीक्षा—वे बुद्धि-परीक्षाएँ जिनके हल करने में शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है, शाब्दिक परीक्षाएँ कहलाती हैं। शब्दों से हमारा तात्पर्य वर्णमाला के कुछ अक्षरों के योग से नहीं है, शब्दों से हम संख्याओं को भी सम्मिलित करते हैं। इस प्रकार इनसे शाब्दिक योग्यता का ज्ञान होता है।

(आ) क्रियात्मक परीक्षण—इस प्रकार की परीक्षाओं में समस्या का समाधान शब्दों द्वारा प्रकट नहीं करना पड़ता है, वरन् उसे कार्य करके हल करना पड़ता है। इन क्रियाओं में मनुष्य को कुछ क्रियाएँ करनी पड़ती हैं, यथा चित्र-विधान (Picture arrangement), चित्र-पूर्ति (Picture completion), चित्र में गलती निकालना, मनुष्य की आकृति खोचना, वर्ग-निर्माण इत्यादि। नीचे इस प्रकार की परीक्षाओं के नाम दिए जाते हैं :

१. फार्म बोर्ड टेस्ट (Form Board Test),
२ पोर्टस मेज टेस्ट (Porteus Maze Test),
३. क्यूब कन्स्ट्रक्शन टेस्ट (Cube Construction Test),
४. अलेक्जेंडर्स पास-एलाग टेस्ट (Alexanders Pass-along Test),
५. पील्स ब्लाक्स टेस्ट (Peels Blocks Test),
६ भाटियाज बैटरी आफ परफॉरमेन्स टेस्ट्स आफ इन्टेलिजेन्स (Bhatias Battery of Performance Tests of Intelligence)।

६. बुद्धि परीक्षा का निर्माण (Construction of Intelligence Tests)

परीक्षा निर्माण में निम्नांकित चार चरण (Steps) निहित हैं -

(अ) परीक्षा की योजना (Planning the Test),
(ब) परीक्षा निर्माण (Preparing the Test),
(स) परीक्षा की परीक्षा (Try out the Test),
(द) परीक्षा का मूल्यांकन (Evaluating the Test)।

**(अ) परीक्षा की योजना**—परीक्षा निर्माण अत्यन्त जटिल क्रिया है। यह सामान्य बुद्धि वाले व्यक्तियों का कार्य नहीं है, और न यह कार्य शीघ्र ही समाप्त होता है। 'परीक्षा की योजना' परीक्षा-निर्माण का प्रथम चरण है। परीक्षा की योजना करते समय विभिन्न दिशाओं की तरफ पहले से ही सोच लेना चाहिए। सर्वप्रथम परीक्षा निर्माण का उद्देश्य निर्धारित करना चाहिए अर्थात् परीक्षा किस उद्देश्य से बनायी जायगी, इस बात को पहले से ही निर्धारित कर लेना चाहिए। परीक्षा किन दशाओं में छात्रों को दी जाएगी, इसका विचार भी पहले से ही कर लेना चाहिए। जिस योग्यता के मापन हेतु परीक्षा-निर्माण हो रहा है, इसका पूरी तरह से ध्यान रखना चाहिए।

**(ब) परीक्षा-निर्माण**—परीक्षा-निर्माण में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए

१ परीक्षा की रूपरेखा बनाना।
२ परीक्षा में कई प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित करना।
३ ५०% कठिनाई के प्रश्न ही अन्तिम परीक्षा में रखना। इसलिए प्रथम रूपरेखा में अधिक प्रश्न रखे जाएँ जो अन्तिम तक कम हो जाएँगे।
४ प्रथम रूपरेखा का आलोचनात्मक अध्ययन किया जाए।
५ प्रश्न में विषय-वस्तु प्रथम हो, उसकी बनावट नहीं।
६ समस्त एक प्रश्न का एक ही उत्तर हो, इस प्रकार के प्रश्न बनें।
७ प्रश्नों के उत्तर का लेखा रखने की उचित व्यवस्था की जाए।
८ प्रश्न कठिनाई के अनुसार रखे जाएँ। यदि गति-परीक्षा है तो समस्त प्रश्न एक कठिनाई के ही हों, परन्तु इसमें समय तथा परीक्षा की लम्बाई में तारतम्य रखा जाए।
९ स्पष्ट निर्देशन तैयार किया जाए।
१० समय यदि निर्धारित करना हो तो स्पष्ट रूप से बताया जाए।

**(स) परीक्षा की परीक्षा**—परीक्षा की रूपरेखा बनाने के उपरान्त उसकी जाँच करनी चाहिए। इसके लिए परीक्षा को सर्वप्रथम छात्रों को हल करने को दिया जाए। इस प्रथम जाँच में कुछ सावधानी रखनी चाहिए

१ परीक्षा सामान्य दशाओं में ली जाए।
२ परीक्षार्थियों को उचित समय प्रदान किया जाए।
३. अंक-प्रदान पद्धति सरल तथा सुगम हो। अंक-प्रदान पद्धति अपनाते समय निम्न सूत्र का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाए-

$$S = R \frac{W}{O-1}$$

जिसमें, S=अंक प्रदान W=गलत उत्तर
R=सही उत्तर O=इच्छा में दिए गए

सत्यासत्य प्रश्नों में अंक प्रदान करने हेतु निम्न सूत्र अपनाना चाहिए (जबकि दो ही शब्दों में उत्तर देना हो)—

$$S = R - W$$

जब प्रश्नों में तीन बातें दी हों और उनमें सत्यासत्य बताना हो तो निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाय—

$$S = R - \frac{1}{2} W$$

चार बातें (Items) दी हों तो सूत्र इस प्रकार रहेगा—

$$S = R - \frac{1}{3} W$$

४ अंक प्रदान करने हेतु कुञ्जी का निर्माण कीजिए।

५ पद विश्लेषण (Item Analysis) कीजिए।

पद विश्लेषण कई प्रकार से किया जा सकता है। प्रथम पद्धति तो यह है कि परीक्षा के उपरान्त जिसने सबसे अधिक अङ्क प्राप्त किए हैं, उस पुस्तिका को सबसे ऊपर रखा जाए एवं उसके बाद उससे कम प्राप्तांक वाली पुस्तिका तथा इसी क्रम में सबसे अन्त में उस पुस्तिका को रखा जाए जिस पर सबसे कम अङ्क दिए गए हैं। अब ऊपर की एक तिहाई तथा नीचे की एक तिहाई पुस्तिकाओं को छोड़ दीजिए एवं बीच की एक तिहाई ले लीजिए एवं इसका विश्लेषण कीजिए। दूसरी पद्धति के अनुसार ऊपर की २७% एवं नीचे की २७% पुस्तिका छोड़ दीजिए तथा मध्य की ४६% पुस्तिका ले लीजिए। ऊपर की २७% पुस्तिका योग्यतम छात्रों की है तथा नीचे की २७% दुर्बलतम छात्रों की हैं। अब ज्ञात हो सकता है कि एक प्रश्न कितने छात्रों ने किया है और प्रत्येक प्रश्न का कठिनता मूल्य ज्ञात किया जा सकता है। कठिनता मूल्य (Difficulty Value) निकालने हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग करना चाहिए

$$\text{क० मू०} = \frac{\text{सही प्रश्नों की संख्या}}{\text{कुल प्रश्न}}$$

नीचे इसी को एक उदाहरण से दिखाया गया है

| प्रश्न सं० | सही संख्या | गलत संख्या | कुल संख्या | क० मू० |
|---|---|---|---|---|
| १ | १६ | ४ | २० | ८ |
| २ | ८ | १२ | २० | ४ |
| ३ | ४ | १६ | २० | २ |
| ४ | १० | १० | २० | ५ |
| ५ | १५ | ५ | २० | ७५ |

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कौनसे प्रश्न कठिन हैं तथा कौनसे सरल, और इस प्रकार के प्रश्नों को हम परीक्षा से निकाल सकते हैं।

प्रत्येक पद का प्रतिशत ज्ञात करने के बाद यह देखा जाता है कि परीक्षा योग्यतम व दुर्बलतम छात्रों में अन्तर करती है या नहीं, अर्थात् परीक्षा में विभेदकारी गुण (Discriminating Value) है अथवा नहीं। इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है

$$\text{वि० गु०} = \frac{P_1 - P_2}{\sqrt{\frac{P_1Q_1}{N_1} + \frac{P_2Q_2}{N_2}}}$$

अर्थात्, $P_1$ = सही उत्तर देने वाले योग्यतम छात्रों का प्रतिशत

$P_2$ = सही उत्तर देने वाले दुर्बलतम छात्रों का प्रतिशत

$Q_1$ = गलत उत्तर देने वाले दुर्बलतम छात्रों का प्रतिशत

$Q_2$ = योग्यतम छात्रों की कुल संख्या

$N_2$ = दुर्बलतम छात्रों की कुल संख्या।

उपर्युक्त सूत्रानुसार यदि मूल्य १.९६ से अधिक आये तो हम कह सकते हैं कि पद योग्यतम एवं दुर्बलतम छात्रों में विभेद करता है। यदि पद विभेद नहीं करता है तो ऐसे पद को परीक्षा से निकाल देना चाहिए।

(ब) परीक्षा का मूल्यांकन—परीक्षा की जाँच करने के उपरान्त परीक्षा की विश्वसनीयता तथा वैधता एवं प्रमाणात्मक पहलू पर विचार करना चाहिए। उचित निर्देशन तैयार करने चाहिए। परीक्षा-प्रशासन एवं अङ्क-प्रदान सम्बन्धी निर्देश देने चाहिए। परीक्षार्थियों से परीक्षण की आलोचना मौखिक या लिखित रूप से करवानी चाहिए। गुणक कितना हो, यह परीक्षा की प्रकृति पर निर्भर है। साधारण रूप से गुणक ५ से अधिक होना ही उचित है। वैधता एवं विश्वसनीयता का गुणक अलग ज्ञात किया जाता है।

परीक्षा का चुनाव (Selection of the Test)—यदि किन्हीं कारणों से हम अपनी परीक्षा स्वयं नहीं बना सकते हैं तो बाजार से निर्मित परीक्षा का प्रयोग करना चाहिए। बाजार से परीक्षा क्रय करते समय यह प्रश्न उठता है कि कौनसी परीक्षा क्रय की जाए। परीक्षा का चयन करते समय निम्नांकित तथ्यों को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए :

(अ) सामान्य तथ्य—१. देखना चाहिए कि परीक्षा हमारे उद्देश्य की पूर्ति करती है या नहीं, अर्थात् जिस योग्यता को हम मापना चाहते हैं, उसे मापेगी या नहीं ?

२. परीक्षा का मूल्य हमारे बजट से अधिक तो नहीं ?

३. प्रशासनीय सुगमता एवं सरलता है या नहीं ?

४. प्रशासन में कितना समय लगेगा ?

५. उसमें अङ्क प्रदान करने हेतु निर्देशन दिए हैं या नहीं ?

(ब) तकनीकी तथ्य—१ परीक्षा में वैधता है या नहीं ?
२ परीक्षा में विश्वसनीयता (Reliability) है या नहीं ?
३. परीक्षा में वैयक्तिकता (Objectivity) है या नहीं ?
४ परीक्षा में व्यापकता (Comprehensiveness) है या नहीं ?
५ परीक्षा में व्यावहारिकता (Usability) है या नहीं ?
६ परीक्षा के साथ मानक (Norms) हैं या नहीं ?

इन प्रश्नों पर विचार करने के उपरान्त ही हमें निर्देशन कार्य के लिए किसी परीक्षा का चयन करना चाहिए।

## २ रुचि-परीक्षण
## (Interest Measurement)

एक मनुष्य की मानसिक क्रियाएँ अत्यन्त गिनी-चुनी होती हैं। इन गिनी-चुनी (Selective) क्रियाओं के आधार पर ही मनुष्य की शारीरिक एवं बाह्य क्रियाएँ निर्भर करती हैं। मनुष्य क्या काम करना पसन्द करता है, यह मनुष्य की मानसिक क्रियाओं पर निर्भर है। कहा गया है कि तीन मित्र किसी रमणीक पहाड़ी स्थान का भ्रमण करने हेतु गए। इन तीनों मित्रों में एक भू-गर्भवेत्ता, एक वनस्पति-शास्त्री (Botanist) एवं एक कवि था। रमणीक स्थान पर जाकर भू-गर्भवेत्ता ने वहाँ की मिट्टी तथा चट्टानों का अध्ययन आरम्भ कर दिया तथा कवि महोदय ने वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन किया। इस प्रकार इन व्यक्तियों ने पृथक रूप में वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन किया और पृथक रूप से वहाँ की विभिन्न वस्तुओं से अपना सम्बन्ध स्थापित किया। यह सम्बन्धकारिता उन व्यक्तियों की रुचि द्वारा निर्धारित होती है। अब प्रश्न है कि रुचि क्या है जिसके कारण तीनों मित्रों की अवलोकन सामग्री पृथक-पृथक हो गयी।

परिभाषा—हम रुचि को शाब्दिक रूप में (Actymologically) 'सम्बन्ध की भावना' (Feeling of concern कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में हम इसे 'इससे सम्बन्धित हैं' (It matters or it concerns) भी कह सकते हैं। जिस वस्तु से हम सम्बन्धित हैं या जो वस्तु हमसे सम्बन्धित है, वही हमारी रुचि है। उदाहरण के लिए, मैं संगीत में रुचि रखता हूँ, अर्थात् संगीत एक ऐसा विषय है जो मुझसे सम्बन्धित है। यह सम्बन्ध वर्तमान में हो सकता है, संगीत एवं मेरी रुचि दोनों ही आत्मनिष्ठ (subjective) हो जाते हैं। स्टाउट (Stout) ने रुचि को आत्मनिष्ठ के रूप में ही प्रयोग किया है। मेरी रुचि संगीत में है इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि कोई दूसरा काम न कर सकूँ। संगीत में रुचि रखने हुए भी मैं अपना कोई दूसरा काम संगीत के अलावा कर सकता हूँ। संगीत के प्रति मेरी जो रुचि है उस पर दूसरे कामों का असर नहीं पड़ता है, क्योंकि यह मस्तिष्क का एक स्थायी भाव है। इस प्रकार रुचि को हम 'पसन्द' (Likes) कह सकते हैं।

रुचि के सम्बन्ध में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपनी अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं।

बिंघम (Bingham) ने रुचि की परिभाषा देते हुए कहा है—"रुचि किसी अनुभव में लिप्त हो जाने तथा उस अनुभव में रहने की प्रवृत्ति है।"

स्ट्रांग (Strong) ने रुचि की व्याख्या करते समय इसकी तुलना एक भोजन से की है। अपने उदाहरण में स्ट्रांग कहते हैं कि मानव-जीवन की रुचि एक प्रकार भोजन की दिशा निर्धारित करती है, अतः भोजन एवं व्यवहार दोनों ही पूर्ण रूप एक से होते हैं। यदि हम भोजन को मनुष्य की आवश्यकता मान लें तो यह कहते हैं कि मानव जीवन में प्रत्येक क्रियाविधि मनुष्य की आवश्यकता एवं रुचि पर निर्भर है, और इस प्रकार रुचि कोई पृथक इकाई न होकर सम्पूर्ण मानव व्यवहार का एक पहलू है। इससे यह स्पष्ट होता है कि रुचि-मापन के माध्यम से हम समस्त मानव व्यवहार को नहीं माप सकते, वरन् उसके एक अंग (रुचि) को ही माप सकते हैं। यहीं से रुचि के सम्बन्ध में कहा है कि रुचि तथा योग्यता निष्पत्ति के सहसम्बन्धित है और समस्त व्यवहार तथा मानसिक रुचियाँ व्यक्तित्व से सम्बन्ध रखती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से रुचि में निम्नांकित विशेषताएँ निहित हैं

१ रुचियाँ व्यक्तित्व का एक अंग हैं।

२ रुचि वंशानुक्रम तथा वातावरण से प्रभावित होती है।

३ रुचि आवश्यक रूप से अभियोग्यता एवं योग्यताओं से सम्बन्धित हो, ऐसी बात नहीं है।

४ व्यावसायिक एवं अव्यावसायिक रुचियाँ साथ-साथ चलती हैं।

५ आयु बढ़ने के साथ-साथ रुचियों की विभिन्नता समाप्त हो जाती है।

**रुचि-मापन (Interest Measurement)**—उपयुक्त व्यवसाय निर्धारित करने तथा उपयुक्त निर्देशन देने के लिए रुचि-मापन अत्यन्त आवश्यक है। रुचि-मापन द्वारा यह देखा जाता है कि किसी व्यक्ति में किसी कार्य को करने की रुचि है या नहीं। यह देखने के लिए रुचि तालिका (Interest Inventory) का सर्वप्रथम निर्माण १९१९ में 'कार्नीगे इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (Cornegie Institute of Technology) में आरम्भ हुआ। इसके उपरान्त मूर (Moor) ने १९२१ में इन्जीनियर्स की यान्त्रिक एवं सामाजिक रुचियों का पता लगाने हेतु एक रुचि-तालिका बनायी। १९२४—२५ में क्रेग (Crage) ने विभिन्न प्रकार की रुचियों के मापन हेतु तालिकाएँ बनायीं। १९२७ में कार्नेहासर (Karnhauser) ने 'सामान्य रुचि तालिका' (General Interest Inventory) का निर्माण किया। इसके बाद अनेक रुचि-तालिकाओं का निर्माण हुआ, जिनमें से प्रमुख रुचि-तालिकाओं का अब हम विस्तृत अध्ययन करेंगे।

**२. स्ट्रांग की व्यावसायिक रुचि-परिसूची (Strong's Vocational Interest Blanks)**

स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के ई० के० स्ट्रांग ने व्यावसायिक रुचि-परिसूची का निर्माण तथा प्रमापीकरण किया। इसके द्वारा व्यक्ति की रुचियों तथा विरक्तियाँ (Likings and Dislikings) इत्यादि का पता लगाया जाता है। इसमें अनेक प्रकार के ४२० पद हैं। ये पद विभिन्न व्यवसायों, मनोरंजन क्रियाओं, विद्यालय-विषय एवं व्यक्तिगत विशेषताओं से सम्बन्धित हैं। इस परिसूची को कई हजार लोगों, जो अनेक व्यवसाय में कार्य करते हैं, यथा वकील, इंजीनियर, डॉक्टर, शिक्षक, बीमा कर्मचारी, विक्रेता, किसान, दन्त चिकित्सक इत्यादि ने भरा है। इसके आधार पर स्ट्रांग ने पता लगाया कि इनमें से किसी भी व्यवसाय में कार्य करने वाले व्यक्तियों की रुचियाँ अन्य व्यक्तियों की रुचियों से पृथक होती हैं। जब कोई व्यक्ति परिसूची भर लेता है तो उसका विश्लेषण किया जाता है एवं फलांकन निकाला जाता है। फिर यह ज्ञात कर लिया जाता है कि उसकी रुचियाँ उन व्यक्तियों के समरूप हैं या नहीं जो उस व्यवसाय में सफलतापूर्वक काम कर रहे हैं। इस प्रकार परिसूची योग्यता का मापन नहीं करती है, केवल तुलनात्मक अध्ययन करती है।

इस परिसूची के पाँच प्रारूप हैं—प्रथम पुरुषों की, द्वितीय स्त्रियों की (ये उन स्त्री-पुरुषों के लिए हैं जो अपना अध्ययन समाप्त कर चुके हैं), तृतीय पुरुषों के लिए, चतुर्थ स्त्रियों के लिए (ये उन स्त्री-पुरुषों के लिए हैं जो अध्ययन कर रहे हैं) एवं अन्तिम तथा पंचम पुरुषों के लिए चाहे वे अध्ययन कर रहे हैं या नहीं।

यह परिसूची १७ वर्ष के लड़कों के लिए अति उत्तम है। १५ एवं १६ वर्ष के लड़कों पर इसका प्रयोग सम्भव है एवं १५ वर्ष से कम आयु के लड़कों की रुचि का मापन संभव नहीं है, क्योंकि उनकी रुचि अस्थायी होती है।

स्ट्रांग ने निम्नलिखित व्यवसायों की कुंजियों (Keys) का निर्माण किया—गणितज्ञ, वकील, भौतिक शास्त्री, मनोवैज्ञानिक, वास्तुकार, पत्रकार, रसायनशास्त्री, दन्त चिकित्सक, कलाकार, अध्यापक, वाई० एम० सी० ए० सचिव, सुपरिन्टेन्डेन्ट इत्यादि।

इसके प्रशासन हेतु सम्पूर्ण निर्देशन परिसूची पर छपे हैं। परीक्षार्थियों को परिसूची देते समय इसका महत्त्व बता देना चाहिए, जिससे वे समस्त पदों का उत्तर सत्यता से दें। इससे उनकी पसन्द एवं नापसन्द का ठीक-ठीक पता चल जायगा। इसमें निरीक्षण की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती है, क्योंकि यहाँ सत्यासत्य उत्तरों का प्रश्न ही नहीं है। अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए परीक्षार्थियों से शीघ्रता करने को कहा जाना चाहिए। इसको भरने में करीब आधा घण्टा लगता है। ६० प्रतिशत छात्र इसे ४० मिनट में पूरा कर लेते हैं। ४२० पदों का फलांकन करना (Scoring) सरल काम नहीं है, परन्तु फलांकन-मशीन के माध्यम से यह कार्य १५-२० मिनट में हो जाता है।

२. हेपनर की व्यावसायिक रुचि लब्धि (Hepner's Vocational Quotient)

हेपनर ने व्यावसायिक रुचि मापन के हेतु एक 'महत्व कार्ड' (Hepner's Blank) दिया। परन्तु उस 'महत्व कार्ड' की विषय में तीव्र आलोचना की है। हेपनर ने चार प्रमुख कार्य क्षेत्रों की चेक लिस्ट (Check list) बनायी है। इन चार क्षेत्रों में प्रोफेशन (२४), व्यावसायिक आकुपेशन (Business occupation) (२४), कुशल व्यापार (Skilled trade) (२०), स्त्रियों के व्यवसाय (२४) सम्मिलित हैं। एक व्यक्ति एक या अधिक क्षेत्रों से सम्बन्धित परीक्षा दे सकता है। इन चारों सूचियों की जांच करने को प्रत्येक में १६० पद हैं, जबकि स्ट्रांग की रुचि-तालिका में, जैसा कि हम अध्ययन कर चुके हैं, यह पूछा जाता है कि वह प्रत्येक पद को पसन्द करता है, या घृणा, या उसके प्रति उदासीन है।

३. क्लीटन की व्यावसायिक रुचि तालिका (Cleeton's Vocational Interest Inventory)

इसमें स्त्री एवं पुरुषों के लिए अलग-अलग प्रतिरूप हैं। इसके लेखक इन्हें विद्यालय छात्रों—नवीं श्रेणी, वरिष्ठ छात्र एवं युवक—सभी के लिए उपयुक्त समझते हैं।

इस तालिका में भी उन्हीं सिद्धान्तों को अपनाया गया है जिन्हें ऊपर वर्णित तालिकाओं में अपनाया गया है। परन्तु यह तालिका उन पदों को महत्व नहीं देती है जिनके प्रति परीक्षार्थी उदासीन रहता है। पुरुषों के प्रतिरूप में ६३० पद हैं जिनकी जांच करनी पड़ती है तथा ४० प्रश्न हैं जिनका उत्तर हां/नहीं में देना पड़ता है। स्त्रियों के लिए भी यही प्रणाली है। जांच के पद कुल मिलाकर ६ वर्गों में विभक्त हैं।

किसी विषय में अधिक प्राप्तांक प्राप्त करना उस व्यवसाय में रुचि का होना इंगित करता है। पुरुषों के लिए इन्जीनियर, मिनिस्टर, अध्यापक, सामाजिक कार्यकर्ता, जीवन बीमा विक्रेता, जीवशास्त्रीय वैज्ञानिक आदि की सूचियां दी गयी हैं। इनका अलग से श्रेणी-विभाजन भी किया गया है।

४. कूडर अधिमान लेखा (Kudder's Preference Record)

इस लेख में कई प्रतिरूप हैं, यथा—औद्योगिक, व्यावसायिक, व्यक्तिगत आदि। व्यावसायिक प्रतिरूप में १६८ पद हैं। प्रत्येक पद में तीन क्रियाओं का उल्लेख है। परीक्षार्थी को इन क्रियाओं को अपने अधिमान के हिसाब से चुनना पड़ता है। पूरे लेखे में कुल मिलाकर १० रुचि-मापदण्ड हैं एवं सत्यासत्य मापदण्ड हैं जिससे

लिए। बच्चो एव लडकियों की तालिकाएँ १० से १६ वर्ष तक के लिए हैं। प्रत्येक प्रतिरूप मे ५ प्रश्नो के २० समूह हैं। प्रश्नो का उत्तर दिया जा सकता है या जाँच की जा सकती है। यह काम पाँच प्रकार से किया जा सकता है क्योकि प्रत्येक समूह मे पाँच विभिन्न प्रश्न होते हैं। इस प्रकार मनुष्य की पाँच ही प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। ये २० समूह विभिन्न २० प्रकार की रुचियो से सम्बन्धित हैं और प्रत्येक रुचि को पाँच भागो मे बाँटा गया है। उदाहरणार्थ—यान्त्रिक रुचि के समूह को निम्न पाँच भागो मे विभक्त किया गया है

(i) निर्माण (Construction), (ii) प्रतिस्थापन (Installation), (iii) मरम्मत (Repair), (iv) डिजायनिंग (Designing), और क्रिया (v), (Operation)।

६. अन्य रुचि तालिकाएँ (Other Interest Inventories)

इनके अलावा भी अनेक रुचि तालिकाएँ उपलब्ध हैं जिनके नाम नीचे दिये गये हैं :

(i) Manson's Occupational Interest Blank
(ii) Oberlen Vocational Interest Inquiry
(iii) Gorretson and Symond's Interest Questionnaire
(iv) Lee Thrope Inventory
(v) Guilford Shneedman-Zimmerman Interest Survey
(vi) Thurston Interest Schedule

ध्यान रखने योग्य बातें (Factors to be kept in Mind)—रुचि तालिका-ओं का चयन करते समय निम्न बातें ध्यान मे रखनी चाहिए

(i) रुचि तालिका बच्चों की आयु के अनुरूप हो।
(ii) रुचि तालिका हमारे उद्देश्यों के अनुरूप हो।
(iii) इसकी वैधता एव विश्वसनीयता का ध्यान रखा जाए।
(iv) वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अच्छी तालिका का चयन किया जाए जिससे स्थायी रुचि का पता लग सके।

## ✓३. निष्पत्ति परीक्षण
## (Achievement Test)

जैसा कि बताया जा चुका है, व्यक्ति से सम्बन्धित सूचनाएँ सगृहीत करने के दो साधन हैं—(१) प्रमापीकृत, एव (२) अप्रमापीकृत। अप्रमापीकृत साधनो की अन्यत्र विवेचना की जा चुकी है। प्रमापीकृत साधनों मे से गत अध्याय मे हमने बुद्धि परीक्षण का अध्ययन किया। अब हम निष्पत्ति परीक्षण का अध्ययन करेंगे।

परिभाषा—निष्पत्ति परीक्षा विद्यालय मे विषय सम्बन्धी ज्ञान की परीक्षा ... से अध्यापक यह ज्ञात कर सकता है कि छात्र ने कक्षा मे बैठकर एक

विषय में कितनी उन्नति की है। उसने विषय सम्बन्धी ज्ञान पूर्ण रूप से प्राप्त कर लिया है या नहीं। इस तरह निष्पत्ति परीक्षा सीखने के उत्पादन (Product of Learning) का मापन करती है। सुपर (Super) ने निष्पत्ति परीक्षा तथा दक्षता को एक ही कहकर पुकारा है। वे निष्पत्ति-परीक्षा की परिभाषा देते हुए कहते हैं—"एक निष्पत्ति या दक्षता-परीक्षा यह निश्चित करने को प्रयोग की जाती है कि क्या तथा कितना सीखा गया है। या किस दक्षता से कार्य सम्पन्न किया गया है। इसमें मुख्य ध्यान भूत या भविष्य का न रखते हुए मूल्यांकन किया जाता है। भविष्य का तो केवल इतना ध्यान रखा जाता है कि प्राप्त ज्ञान तथा दक्षता भविष्य में उन्हीं के पक्ष में हितकारी सिद्ध होंगे। बिंघम (Bingham) के शब्दों में "निष्पत्ति-परीक्षा वह माप है जिसके द्वारा विद्यालय के अन्दर तथा बाहर प्राप्त ज्ञान को प्रशिक्षण के समय तथा प्रकृति के अनुसार देखा जाता है। इस प्रकार निष्पत्ति परीक्षा जिसे कुछ व्यक्ति साफल्य परीक्षा भी कहते हैं, पर ऐसा कहा नहीं जाना चाहिए, छात्रों के विषय सम्बन्धी ज्ञान का बोध कराती है।

इसके अलावा निष्पत्ति-परीक्षा में सम्बन्धित सफलता या आपेक्षिक सफलता (Relative Achievement) पर ही ध्यान देते हैं, न कि निरपेक्ष सफलता (*Absolute Achievement*) पर। निष्पत्ति परीक्षा में सफलता-प्राप्ति हेतु किसी निर्धारित स्तर को उतना महत्त्व नहीं दिया जाता है। छात्र के ७०% प्राप्तांक हैं। यहाँ ७०% प्राप्तांक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, महत्त्वपूर्ण तो यह है कि वह कितने छात्रों से अच्छा है। यदि एक छात्र ४० प्राप्तांक लाता है तथा दूसरा ६० लाता है तो यहाँ पर ४० तथा ६० प्राप्तांक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, महत्त्वपूर्ण तो यह है कि द्वितीय छात्र प्रथम छात्र से २० प्राप्तांक अधिक लाया। इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन को हम आपेक्षिक सफलता का आधार कहते हैं। निरपेक्ष सफलता (Absolute Achievement) को तो महत्त्व निबन्धात्मक परीक्षा में ही दिया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षा में सफलता प्राप्त करने हेतु एक स्तर निर्धारित कर दिया जाता है और सफलता प्राप्त करने हेतु निर्धारित प्रतिशत प्राप्तांक लाना आवश्यक होता है। उदाहरण हेतु सफल होने के लिए ३३% प्राप्तांक लाना आवश्यक होता है। यदि कोई छात्र ३३% प्राप्तांक नहीं ला पाता है तो सफलता भी प्राप्त नहीं होती है। परन्तु निष्पत्ति-परीक्षा में इस प्रकार की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जाती है। क्योंकि हो सकता है कि हमारी निष्पत्ति-परीक्षा इतनी जटिल हो कि अधिकांश छात्र उच्च मेधाबुद्धि के होते हुए भी ३३% या ४८% प्राप्तांक या जो कोई अन्य सीमा निर्धारित है, उतने अङ्क नहीं ला पाते हैं। निष्पत्ति-परीक्षा में सफलता प्राप्त करने हेतु दूसरी ही नीति अपनायी जाती है। सर्वप्रथम छात्र को अङ्क प्रदान किए जाते हैं, फिर प्राप्तांकों का औसत ज्ञात किया जाता है। जिन छात्रों के प्राप्तांक औसत से कम होते हैं उन्हें सफलता में सम्मिलित नहीं किया जाता है।

कुछ व्यक्ति निष्पत्ति-परीक्षा तथा अभियोग्यता परीक्षा में भेद नहीं मानते

हैं। परन्तु उनकी यह विचारधारा गलत है, क्योंकि निष्पत्ति-परीक्षा एवं अभियोग्यता परीक्षा में पर्याप्त अन्तर है। इन दोनों में सम्बन्धित पूर्वज्ञान की मात्रा की समरूपता का अन्तर है। निष्पत्ति-परीक्षा आपेक्षिक प्रमापीकृत अनुभवों को, जो विद्यालय पाठ्यक्रम द्वारा अर्जित किए जाते हैं, मापती है। इसके विपरीत, अभियोग्यता परीक्षा दैनिक जीवन में प्राप्त संचयी अनुभवों (Cummulative Experiences) का माप करती है। इसके अलावा अभियोग्यता परीक्षा पश्चादवर्ती क्रियाओं (Subsequent Performances) की पूर्ववाणी या पूर्वकथन (Prediction) करती है जबकि निष्पत्ति-परीक्षा प्रशिक्षण सम्बन्धी तकनीकी मूल्यांकन है। इस प्रकार अभियोग्यता परीक्षाएँ सीखने अथवा प्रशिक्षण के प्रभाव का मापती हैं, जबकि निष्पत्ति-परीक्षा जन्मजात क्षमताओं (Innate Capacities) को जो प्रशिक्षण एवं सीखने से प्रभावहीन होती हैं, मापती है।

२ निष्पत्ति परीक्षा के प्रकार (Types of Achievement Test)

निष्पत्ति-परीक्षाएँ जो निर्देशन एवं परामर्श प्रक्रियाओं में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, दो प्रकार की हो सकती हैं—(१) वे परीक्षाएँ जो किसी व्यवसायगत दक्षता को मापने हेतु बनायी जाती हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं को 'व्यवसाय-परीक्षा' (Trade Test) कहते हैं। (२) वे निष्पत्ति-परीक्षाएँ जो विद्यालय के पाठ्यक्रम में किसी एक विषय के अर्जित ज्ञान को मापने हेतु बनायी जाती हैं। व्यवसाय परीक्षा के माध्यम से यह देखा जाता है कि एक व्यक्ति ने व्यवसायगत प्रशिक्षण के फलस्वरूप कितनी दक्षता प्राप्त की है, एक व्यवसाय के सम्बन्ध में उसका अनुभव कितना है तथा व्यवसाय के लिए वर्तमान में क्या कर सकता है, जबकि दूसरे प्रकार की परीक्षा विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषय के सम्बन्ध में बताती है कि एक विषय में छात्र ने कितना सीखा है।

३. निष्पत्ति परीक्षा निर्माण (Construction of Achievement Test)

निष्पत्ति-परीक्षा क्या है, इस प्रश्न पर विचार करने के उपरान्त अब हम इस बात का अध्ययन करेंगे कि एक निष्पत्ति-परीक्षा कैसे बनायी जाती है अर्थात् एक निष्पत्ति-परीक्षा के निर्माण में कौन-कौनसी क्रियाएँ निहित हैं? परीक्षा निर्माण में सबसे पहले यह निश्चित कर लेना पड़ता है कि हमारी परीक्षा का उद्देश्य क्या है। हम किसका मापन करने को परीक्षा बना रहे हैं? अर्थात् परीक्षा निर्माण में सर्वप्रथम उद्देश्य निर्धारित कर लेने चाहिए। एक परीक्षा द्वारा अधिक से अधिक तीन या चार उद्देश्यों की प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए।

उद्देश्य निर्धारित करने के पश्चात् यह निर्धारित करना चाहिए कि परीक्षा किस स्तर के लिए बनायी जा रही है। परीक्षा जूनियर हाईस्कूल स्तर, हाईस्कूल, हायर सेकेण्डरी स्कूल या अन्य किसी स्तर के लिए बनायी जा सकती है। स्तर निर्धारित करने के उपरान्त उस स्तर के पाठ्यक्रम का विस्तृत विश्लेषण करना

चाहिए जिससे प्रश्न निर्माण में सुविधा रहती है। पाठ्यक्रम का कोई भी अंग अछूता नहीं छूटता है, सभी अंगों पर प्रश्न बन जाते हैं।

इसके उपरान्त प्रश्न बनाए जाते हैं। प्रश्न बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रश्न वस्तुनिष्ठ तथा वैकल्पिक (Objective Type) होने चाहिए। प्रश्न कई प्रकार से बनाए जा सकते हैं जैसे—एकान्तर प्रत्युत्तर वाले प्रश्न, रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न, प्रश्न का सही उत्तर से मिलान करने वाले प्रश्न, बहुविकल्प प्रश्न इत्यादि। नीचे विभिन्न प्रश्नों के नमूने दिए जाते हैं :

१. प्रश्न को सही उत्तर से मिलाना (Matching Type)—इस प्रकार के प्रश्नों में कुछ तथ्य दो भागों में रख दिया जाता है। एक भाग को ज्यों का त्यों रख दिया जाता है तथा दूसरे भाग को अव्यवस्थित रूप में रखा जाता है। छात्रों से प्रथम व्यवस्थित भाग के अनुरूप ही द्वितीय अव्यवस्थित भाग को व्यवस्थित करके रखने को कहा जाता है। इस प्रकार के प्रश्न उस समय अत्यन्त उपयोगी होते हैं जब हम किसी विशिष्ट सूचना का परीक्षा लेना चाहते हैं, अर्थात् जहाँ पूर्ण पुनःस्मरण की आशा नहीं की जाती है वहाँ इस प्रकार के प्रश्न सर्वोत्तम सिद्ध हुए हैं। इसके अलावा दो तथ्यों में सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता, तथ्यों का वर्गीकरण करने की योग्यता इत्यादि का परीक्षण करने के लिए भी इस प्रकार की परीक्षा अत्यन्त उपयोगी है। इस प्रकार के प्रश्न सरल होते हैं तथा उनमें अंक प्रदान करने की क्रिया भी अत्यन्त सरल एवं सुगम है। पर इस प्रकार की प्रश्न-रचना के समय कुछ सावधानी रखनी चाहिए।

(i) दोनों श्रेणी में समान तथा बराबर तथ्य हों।
(ii) दोनों श्रेणी में तथ्यों की संख्या अधिक से अधिक ७ रखी जाए।
(iii) प्रथम तथ्यों को किसी व्यवस्थित रूप में रखा जाए।
(iv) पृथक तथ्यों (Isolated Facts) के लिए इन्हें न चुनिए।

नीचे इस प्रकार के कुछ प्रश्न दिए जाते हैं .

निर्देश—नीचे श्रेणी 'क' में कुछ देशों की राजधानियों के नाम लिखे हैं, श्रेणी 'ख' में विभिन्न देशों के नाम अव्यवस्थित रूप में रखे हैं। श्रेणी 'ग' के नीचे उन देशों के नाम लिखिए जिनकी राजधानी श्रेणी 'क' में है।

| श्रेणी 'क' | श्रेणी 'ख' | श्रेणी 'ग' |
|---|---|---|
| काबुल | इंगलैंड | .... |
| दिल्ली | श्रीलंका | .... |
| पीकिंग | भारत | .... |
| रावलपिंडी | अफगानिस्तान | .... |
| लन्दन | पाकिस्तान | .... |
| कोलम्बो | चीन | .... |

इनके उत्तर में छात्रों को श्रेणी 'ब' के नीचे राजधानी के क्रम में अफगानिस्तान, भारत, चीन, पाकिस्तान, इगलैंड तथा श्रीलंका मात्र लिख देना है।

२ रिक्त स्थान-पूर्ति प्रश्न (Completion Type)—रिक्त स्थान-पूर्ति प्रश्न एक विशिष्ट सूचना सम्बन्धी योग्यता की जाँच करते हैं और प्रमुख रूप से किसी विशिष्ट नाम, तारीख या संख्या या स्थान का नाम इन प्रश्नों द्वारा पूछा जाता है। इन प्रश्नों द्वारा किसी शब्द की परिभाषा इत्यादि कभी न पूछनी चाहिए। यदि ऐसा किया जाता है तो अङ्क प्रदान किया में अत्यन्त कठिनाई होगी। दूसरे जिस जगह रिक्त स्थान की पूर्ति की जाए वह एक या दो शब्दों से अधिक का न हो। रिक्त स्थान ऐसा न हो जहाँ छात्र का पूरा वाक्य ही लिखना पड़े। इस प्रश्नों को आसानी से बनाया जा सकता है तथा सुगमतापूर्वक अङ्क प्रदान किए जा सकते हैं। इनमें अन्दाज (Guessing) को भी स्थान प्राप्त नहीं है। इस प्रकार के प्रश्नों की रचना करते समय निम्नांकित पहलुओं पर ध्यान देना जरूरी है

(i) जहाँ एक ही सही उत्तर हो, वहाँ इनका प्रयोग किया जाए।

(ii) प्रश्न प्रत्यक्ष (direct) हो।

(iii) भाषा स्पष्ट हो जिससे समझ में आ जाए कि पद, नाम या स्थान पूछा गया है।

(iv) कोई समस्या पैदा न करो। जैसे—"अशोक" ...." "बुगे" ...." आदि।

(v) वाक्य में आने वाली जगह भी पूरी न करवायें। जैसे—"एक दिन ........पर.........सरक..........—और ..... उसने.......देखा और........ने उस........ डाला।"

नीचे इस प्रकार के प्रश्नों के कुछ नमूने दिए गए हैं

निर्देश—नीचे कुछ स्थान रिक्त हैं, तुम्हें उनकी पूर्ति करनी है

(i) वाटरलू के युद्ध में इङ्गलैंड के कमाण्डर का नाम........था।

(ii) अकबर सन् .....ई० में गद्दी पर बैठा।

(iii) नीचे कुछ नेताओं के नाम दिए हैं। उनके सामने खाली दिए स्थान पर लिखो कि वे किससे सम्बन्धित हैं

१ श्री लालबहादुर शास्त्री .......

२ श्री राम मनोहर लोहिया .......

३ श्री प्रतापवीर शास्त्री .......

४. श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य .......

(iv) भारत के प्रधानमन्त्री ...... है।

इस प्रकार के प्रश्न सबसे अधिक प्रयोग किए जाते हैं। वस्तुनिष्ठ दृष्टि से भी ये प्रश्न सर्वोत्तम माने जाते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों से कुछ लाभ तथा कुछ त्रुटी

रखने चाहिए। उत्तर स्पष्ट एवं प्रश्न के अनुरूप सरल तथा सुगम भाषा में होने चाहिए। नीचे इस प्रकार के प्रश्नों के उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं :

१. सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म अपनाया, क्योंकि—
   (अ) महात्मा बुद्ध ने उन्हें प्रभावित किया था।
   (ब) कलिंग युद्ध से वे प्रभावित हुए।
   (स) जनता ने उन्हें ऐसा करने को बाध्य किया।

२. राष्ट्रपति देश का सबसे बड़ा शासक होता है, क्योंकि—
   (अ) वह सबसे अधिक शक्तिशाली होता है।
   (ब) जनता उसे सबसे बड़ा शासक मानती है।
   (स) वह सबसे अधिक योग्य होता है।

३. दिल्ली भारत की राजधानी है, क्योंकि—
   (अ) राष्ट्रपति यहाँ रहते हैं।
   (ब) यह सबसे बड़ा शहर है।
   (स) भारत के सब शहरों से अधिक सुरक्षित है।
   (द) यह बहुत सालों से भारत की राजधानी रही है।

१. अपवर्त्य चयन प्रश्न (Multiple Choice Test)—इस प्रकार की परीक्षाओं में कुछ प्रश्न दिए जाते हैं तथा उनके सम्मुख ही कई उत्तर दिए जाते हैं। इन उत्तरों में एक उत्तर सही होता है, बाकी सभी गलत। सर्वोत्तम उत्तर परीक्षाओं में सभी उत्तर सही हो सकते हैं, परन्तु उनमें एक उत्तर सर्वोत्तम होता है या सभी उत्तर सही न होकर कुछ उत्तर सही के निकट होते हैं और एक उत्तर बिलकुल सही होता है। इस प्रकार की परीक्षा में केवल एक प्रश्न ही सही होता है, बाकी सब प्रश्न बिलकुल गलत होते हैं। इस प्रकार के कुछ उदाहरण आगे दिये जाते हैं:

निर्देश—नीचे कुछ प्रश्न दिए जाते हैं। इनके सामने कुछ उत्तर हैं जिनमें एक सही उत्तर है, बाकी सब गलत हैं। तुम्हें सही उत्तर को छोड़कर बाकी गलत उत्तरों को काट देना है।

(i) श्री जवाहर लाल नेहरू कौन थे? — सेनापति, राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री
(ii) 'रामचरितमानस' किसने लिखी? — तुलसीदास, केशव, सूरदास
(iii) शेक्सपीयर ने कौनसा नाटक लिखा? — एडवर्ड द्वितीय, हैमलेट, लायन्डी
(iv) भारत में सबसे ज्यादा वर्षा कहाँ होती है? — उटकमण्ड, दार्जलिंग, चेरापूँजी
(v) भारत में चाय सबसे ज्यादा कहाँ पैदा होती है? — उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, असम
(vi) गवर्नर को कौन मनोनीत करता है? — मंत्रिमण्डल, राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री

(vii) ताजमहल किसने बनवाया ? बाबर, मानसिंह, शाह
अ

(viii) अजमेर किस प्रान्त में है ? राजस्थान, उत्तर
f

६ वर्गीकरण परीक्षा (Classification Type Test)—इस प्रका
परीक्षाओं में कुछ शब्द विभिन्न समूहों में रखे जाते हैं। प्रत्येक समूह में
वस्तु, व्यक्ति, स्थान, घटना एवं तथ्यों के नाम लिखे जाते हैं, केवल पूरे
में से उस शब्द के नीचे चिन्ह लगा दें जो उस समूह में भिन्न है। उदाहरण के
नीचे के प्रश्न देखिए।

निर्देश—नीचे कुछ समूहों में कुछ शब्द दिए हैं। प्रत्येक समूह में एक
अन्य शब्दों के अनुरूप नहीं है। इस पृथक शब्द के नीचे रेखा खींचिए।

(i) सूरदास, कबीर, मैथिलीशरण, राजा राममोहनराय, दिनकर।
(ii) भारत, इंगलैंड, हिमालय, फ्रांस, रूस।
(iii) कबूतर, तोता, दवात, कौवा, चील।'
(iv) तोप, बन्दूक, स्टेनगन, कलम।
(v) जूते, मोजे, पैन्ट, हवाई जहाज, कमीज, टाई।
(vi) लाठी, गुलाब, कमल, गेंद, लिली।
' (vii) राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री, उप-राष्ट्रपति, गवर्नर।

इस प्रकार विभिन्न प्रकार के वैषयिक प्रश्नों द्वारा प्रथम परीक्षा तैयार
की जाती है। प्रथम परीक्षा में कितने प्रश्न होने चाहिए, यह कोई निश्चित नि
बना लेना चाहिए। पाठ्यक्रम विश्लेषण स्वयं बता देगा कि कुल कितने प्रश्न हो
जरूरी है। इस प्रथम परीक्षा का सबसे पहले विश्लेषण हेतु अनेक विशेषज्ञों के प
भेजा जाता है। विशेषज्ञ प्रत्येक प्रश्न पर विचार प्रकट करके कुछ अनुपयुक्त प्र
को अस्वीकार कर देते हैं। परीक्षा में इस प्रकार के प्रश्नों को निकाल देना चाहिए
ऐसा करने के उपरान्त परीक्षा को छपवाना चाहिए। फिर उसे ५०० विद्यार्थियों
देना चाहिए। देते समय यह ध्यान रहे कि इन ५०० विद्यार्थियों में उच्च योग्यता
सामान्य योग्यता तथा निम्न योग्यता वाले सभी छात्र हों। यह भी देखना चाहिए कि
अधिकांश छात्र कितने समय में परीक्षा पूरी कर लेते हैं, क्योंकि अन्तिम परीक्षा
इसी के अनुसार समय निर्धारित किया जायगा। इसके बाद इनकी जाँच की जाती
एवं अंक प्रदान किए जाते हैं। अंकों का औसत (Average) तथा मापन विचल
(Standard Deviation) ज्ञात किए जाते हैं। औसत ५०% के करीब होन
चाहिए। यदि ५०% से काफी कम या ज्यादा है तो परीक्षा को त्रुटिपूर्ण समझन
चाहिए। इसके अलावा प्रथम परीक्षा की वैधता एवं विश्वसनीयता ज्ञात करनी
चाहिए। वैधता ज्ञात करने की परीक्षा जिस कक्षा के लिए बनायी गई है, उस कक्षा
से एक निम्न कक्षा तथा एक उच्च कक्षा को भी परीक्षा देनी चाहिए। नियमानुसार

परीक्षा का निम्न कक्षा का औसत ५०% से कम होगा तथा उच्च कक्षा का ५०% बहुत ज्यादा। इसके बाद प्रत्येक प्रश्न की विभेदकारी शक्ति (Discriminating wer) ज्ञात करनी चाहिए।

इतना करने के उपरान्त अंतिम परीक्षा का निर्माण करना चाहिए। आवश्यकता एवं उपयुक्त प्रश्नों के ही रखने के कारण प्रथम परीक्षा की तुलना में इसमें री कम प्रश्न रह जाते हैं। प्रथम परीक्षा में कोई समय निर्धारित नहीं किया जाता पर अन्तिम परीक्षा में समय दिया जाता है तथा छात्रों को निर्धारित समय के अन्दर ही प्रश्न करने दिये जाते हैं। अन्तिम परीक्षा काफी बड़े नमूने (sam-e) को दी जाती है। इस प्रकार अंतिम परीक्षा पर अङ्क प्रदान किए जाते हैं, औसत निकाला जाता है, वैधता एवं विश्वसनीयता ज्ञात की जाती है तथा प्रश्नों का विभेदकारी मान देखा जाता है। यदि परीक्षा में वैधता, विश्वसनीयता, या विभेदकारी मान है तो फिर परीक्षा को प्रमापीकृत किया जाता है। प्रमापीकृत परीक्षा केवल उसी समय कहलाई जा सकती है, जबकि उसका मानक (Norm) ज्ञात कर लें। मानक कई प्रकार के हो सकते हैं, यथा—श्रेणी मानक, आयु मानक, लिंग मानक इत्यादि। एक कक्षा के छात्रों के प्राप्तांकों का माध्यम ही उस कक्षा के लिए श्रेणी मानक कहलायेगा। यदि परीक्षार्थियों को आयु के हिसाब से विभाजित कर दिया गया है तो प्रत्येक आयु के छात्रों के प्राप्तांकों का मध्यमान निकाला जायगा। यही आयु मानक होगा। लड़कियों तथा लड़कों के प्राप्तांकों का मध्यमान लिङ्ग मानक कहलायेगा।

इस प्रकार जब तक सामान्य मानक ज्ञात नहीं कर लिये जाते तब तक परीक्षा प्रमापीकृत नहीं समझी जा सकती है। हम अपने उद्देश्य-पूर्ति के लिए अनेक विषयों की परीक्षाएँ बना सकते हैं। यदि किसी कारणवश परीक्षा-निर्माण में असमर्थ हो तो निर्मित परीक्षाएँ बाजार से क्रय करके भी काम चला सकते हैं। बाजार में देशी तथा विदेशी अनेक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। बहुत से व्यक्तियों ने निष्पत्ति-परीक्षाओं का निर्माण किया है तथा अनेक एम० एड० के छात्रों ने भी निष्पत्ति परीक्षा का प्रमापीकरण किया है। वैसे इस दिशा में मनोविज्ञान विभाग, बड़ौदा विश्वविद्यालय, बड़ौदा ने अच्छा कार्य किया है। उत्तर प्रदेश सरकार के इलाहाबाद स्थित ब्यूरो ने भी इस कार्य में काफी सफलता प्राप्त की है। विदेशों में निर्मित निष्पत्ति-परीक्षाएँ भी भारत में उपलब्ध हैं। इस प्रकार की परीक्षाएँ दिल्ली स्थित 'मानसायन' में अथवा साइकोलॉजिकल कारपोरेशन, वाराणसी से उपलब्ध हो सकती हैं। इनके अलावा और भी अनेक स्थानों से इस प्रकार की निष्पत्ति-परीक्षाएँ उपलब्ध हो सकती हैं।

### ४ व्यक्तित्व-परीक्षण
### (Personality Tests)

वर्तमान मनोविज्ञान शास्त्री व्यक्तित्व को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं, क्योंकि व्यक्तित्व के अध्ययन द्वारा हम समग्र व्यक्ति का अध्ययन करते हैं। मनुष्य की कार्य

भी मानसिक क्रिया व्यक्तित्व से पृथक नहीं। व्यक्तित्व तो वह समग्रता या योग (Totality) है जिसमें व्यक्ति के सम्पूर्ण बाह्य एवं आन्तरिक गुण-अवगुणों का प्रतावेशित दिग्दर्शन होता है। व्यक्तित्व में वे सभी मानसिक प्रक्रियाएँ (Mental activities) सम्मिलित हैं जो चलायमान सगठन में व्यक्तित्व पर प्रभाव डालती हैं तथा इनका वातावरण से सम्बन्ध होता है। जहाँ तक निर्देशन तथा परामर्श प्रक्रिया में व्यक्तित्व के अध्ययन का प्रश्न है, निर्देशन एवं परामर्श क्रियाओं का बड़ा महत्त्व है क्योंकि हम निर्देशन द्वारा व्यक्ति के किसी एक पहलू जैसे बुद्धि, अभियोग्यता, रुचि इत्यादि का निर्देशन नहीं करते; हम तो समग्र व्यक्तित्व का ही निर्देशन देते हैं। इसके अलावा बुद्धि, अभिरुचि, अभियोग्यता, रुचि इत्यादि एक-दूसरे से स्वतन्त्र नहीं हैं, एक दूसरे पर आश्रित हैं अतः इनको अलग-अलग मापना अधिक वैज्ञानिक नहीं मालूम पड़ता है। अच्छा तो यह है कि इन सबको एक साथ मापें। इनको एक साथ मापने के साथ-साथ व्यक्ति का शारीरिक अध्ययन करना भी आवश्यक हो जाता है, क्योंकि शारीरिक कारण भी निर्देशन पर प्रभाव डालता है। इस प्रकार सम्पूर्ण व्यक्ति का अध्ययन ही व्यक्तित्व का अध्ययन कहलाता है। व्यक्तित्व का मापन कैसे होता है, इसको जानने से पूर्व यह आवश्यक है कि पहले यह जान करें कि व्यक्तित्व क्या है।

**परिभाषा**

व्यक्तित्व मापन की विधियों पर प्रकाश डालने से पूर्व यह आवश्यक है कि व्यक्तित्व का अर्थ समझा जाए। व्यक्तित्व' शब्द अनेक अर्थों में प्रयोग किया जाता है परन्तु हम यहाँ पर व्यक्तित्व का संक्षिप्त अध्ययन ही करेंगे। जैसे जिन-जिन अर्थों में यह प्रयोग किया जाता है उन सब अर्थों की विवेचना करेंगे तो एक पृथक पुस्तक की रचना ही हो जाएगी, क्योंकि आलपोर्ट (Allport) ने ही ५० अर्थ दिए हैं। इस शब्द की व्याख्या कानून, दर्शन, धर्मशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, रहस्यवाद, दर्शन तथा शिक्षाशास्त्र में अलग-अलग अर्थों में हुई है, और इन सब अर्थों की विवेचना भी एक अध्याय में सम्भव नहीं है।

'व्यक्तित्व' शब्द की व्याख्या में सबसे पहले हमें यह देखना चाहिए कि इसकी उत्पत्ति कब और कहाँ से हुई। ऐतिहासिक दृष्टि से 'व्यक्तित्व' (Personality) शब्द की उत्पत्ति लेटिन शब्द 'परसोना' (Persona) से हुई है। परसोना शब्द उस नाटकीय पोशाक एवं चेहरे के लिए प्रयुक्त होता है जिसे पात्र नाटक खेलते समय धारण करते हैं। इस पोशाक तथा चेहरे से ही रोमन नाटककारों के पार्ट के चरित्र का बोध होता था, पोशाक एवं चेहरे की भिन्नता चरित्र की विभिन्नता का बोध कराती थी। इस प्रकार यदि उत्पत्ति के हिसाब से लें तो 'व्यक्तित्व' का अर्थ मनुष्य की बाह्य रूपरेखा से है। इस विचार के अनुसार मनुष्य का बाहरी शरीर ही व्यक्तित्व का दिग्दर्शन कराता है। परन्तु व्यक्तित्व की इस व्याख्या को हम पूर्ण एवं सन्तोषप्रद नहीं मान सकते हैं, क्योंकि मनुष्य की आकृति ही मनुष्य के व्यक्तित्व का बोध नहीं कराती। यदि ऐसा मान भी लें तो अनेक उदाहरण [illegible] व्यक्तियों का बाह्य

आकर्षण बिलकुल नहीं है, परन्तु उनका व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक रहा है। उदाहरणार्थ—टैगोर, गांधी, विनोबा आदि। इस प्रकार के उदाहरणों से प्रकट होता है कि व्यक्तित्व बाह्य बनावट से निर्धारित नहीं होता है, उसके लिए कुछ आन्तरिक गुणों का होना अत्यन्त आवश्यक है। बिना आन्तरिक गुणों के व्यक्तित्व असम्भव है।

कुछ व्यक्ति व्यक्तित्व को दूसरे अर्थ में प्रयोग करते हैं। दूसरों को प्रभावित करना ही इनके विचार से अच्छा व्यक्तित्व है। इसे हम 'सामाजिक उद्दीपक मूल्य' (Social Stimulas Value) कह सकते हैं। एक व्यक्ति बड़ा प्यारा आकर्षक व्यक्तित्व रख सकता है। इस प्रकार के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी एकतरफा (one-sided) है, क्योंकि हम इसमें मनुष्य के आन्तरिक गुणों की अवहेलना करते हैं। दूसरे 'सामाजिक उद्दीपक मूल्य' तथा 'दूसरों को आकर्षित करना' ये दोनों ही तथ्य अस्पष्ट हैं। इस विचार के अनुसार 'व्यक्ति' माँस-हड्डियों के अलावा और कुछ भी नहीं है।

इसके अलावा व्यक्तित्व के अनेक अर्थ दर्शन, समाजशास्त्र, एवं अन्य इसी प्रकार के शास्त्रों में दिए गए हैं परन्तु सबका अध्ययन यहाँ सम्भव नहीं है। इसलिए इनको यहीं छोड़कर अब हम विभिन्न व्यक्तियों के विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे जिसमें व्यक्तित्व क्या है, इस बात का बोध हो जाएगा।

इस शृंखला में हम सबसे पहले व्यवहारवादियों (Babaviourists) की विचारधारा का अध्ययन करेंगे। एक प्रमुख व्यवहारवादी केम्प (Kemp) ने व्यक्तित्व पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि "व्यक्तित्व आदतों की उन अवस्थाओं का समन्वय है जो वातावरण के साथ व्यक्ति के विशिष्ट अभियोजन का प्रतिनिधित्व करती हैं। परन्तु इस विचारधारा में त्रुटियाँ हैं। क्या व्यक्तित्व आदतों में ही निहित है? क्या इसका कोई सामाजिक मूल्य नहीं है? इसने समन्वय तथा व्यवस्था पर ही अधिक बल दिया गया है, व्यक्ति के अन्य पहलुओं पर नहीं। ठीक यही विचारधारा वारेन (Warren), कारमीकल (Carmichall) ने व्यक्त की है। वे कहते हैं कि "मनुष्य की विकासावस्था के किसी भी स्तर पर मनुष्य की समस्त व्यवस्था ही व्यक्तित्व है।" विलियम हीली (William Healy) ने इसी विचारधारा में प्रवाहित होते हुए कहा कि "व्यक्तित्व वातावरण के साथ, विशेषकर सामाजिक वातावरण के साथ आदतों सम्बन्धी समायोजन की समन्वित व्यवस्था है। इसी प्रकार इन विचारधाराओं को व्यक्त करने वाली अनेक परिभाषाओं की एक लम्बी सूची बनायी जा सकती है, पर इन सबमें वही दोष है जिनका ऊपर विवरण दिया गया है।

मोर्टन प्रिन्स (Morton Prince) ने व्यक्तित्व के अर्थ से सम्बन्धित अपनी विचारधारा प्रकट करते हुए कहा है "व्यक्तित्व सभी जैविक, जन्मजात प्रवृत्तियों, इच्छाओं, भूख एवं मूल प्रवृत्तियों का योग है, तथा इसमें अनुभव से प्राप्त अर्जित प्रवृत्तियाँ भी निहित हैं। किन्तु विभिन्न तत्वों (Elements) को गिना देने से ही व्यक्तित्व का अर्थ पूरा नहीं होता है, क्योंकि इसमें योगता (Totality) का बोध

नहीं होता है और न इससे मानव की मान्यता का ही बोध होता है। यह भी एक प्रकार का चित्र नहीं है परन्तु प्रकार की हुई बात दिखता है।

गत्यात्मक (Dynamic) पक्ष पर विचार करते हुए लेविन (Lewin) ने अपनी पुस्तक 'ए डायनामिक थ्योरी ऑफ पर्सनैलिटी' (A Dynamic Theory of Personality) में कहा है कि व्यक्ति "व्यवस्थाओं का एक गत्यात्मक क्षेत्र है।" पर इस विचारधारा की तीव्र आलोचना मर्फी (Murphy) ने की है। मर्फी कहते हैं कि व्यक्तित्व कई गुणों का योग अथवा समन्वय नहीं है। इसके विपरीत, यह तो एकात्मक का एक अकेला (Unitary) संगठन है।

इसी प्रकार व्यक्तित्व की और भी अनेक परिभाषाएँ दी गयी हैं, पर वे किसी न किसी प्रकार त्रुटिपूर्ण हैं। कुछ परिभाषाएँ नीचे दी जा रही हैं :

वुडवर्थ—"व्यक्तित्व से उस व्यवहार का बोध होता है जो किसी को प्रिय लगता है और किसी को अप्रिय।"

वुडवर्थ—"व्यक्तित्व प्रमुख रूप से परिभाषित किया जा सकता है, जैसे वह मनुष्य के व्यवहार का यौगिक गुण है।"

गेट्स—"व्यक्तित्व से हमारा तात्पर्य है—गुणों का प्रकार, न कि कुछ विशेषताओं की सूची।"

बोरिंग—"वातावरण के साथ सामान्य एवं स्थायी समायोजन ही व्यक्तित्व है।"

वैलनटाइन—"व्यक्तित्व जन्मजात एवं अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।"

इस प्रकार व्यक्तित्व की परिभाषाओं की एक बड़ी सूची तैयार की जा सकती है। परन्तु ये परिभाषाएँ, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, किसी न किसी प्रकार त्रुटिपूर्ण हैं।

व्यक्तित्व की परिभाषाओं में आलपोर्ट की परिभाषा सर्वोत्तम समझी जाती है। वे कहते हैं—"व्यक्तित्व से मनोदैहिक व्यवस्थाओं का वह गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसके अपूर्व अभियोजन का निर्धारण करता है।" इस परिभाषा की उसमें प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें व्यक्ति तथा वातावरण के गत्यात्मक समायोजन पर बल दिया गया है, यह व्यक्तित्व के परिवर्तित रूप को स्वीकार करती है, इसमें आन्तरिक गुणों का महत्त्व प्रदर्शित किया गया है।

परन्तु आलपोर्ट अपनी परिभाषा में एक पहलू पर विचार नहीं करते हैं। आलपोर्ट ने इस इस बात का उल्लेख अपनी परिभाषा में नहीं किया है कि मनुष्य समाज में पैदा होता है, समाज में पलता है, उस पर समाज का प्रभाव पड़ता है। दूसरे व्यक्तियों और समाज का उसमें क्या सम्बन्ध है तथा इस सम्बन्ध का उसके व्यक्तित्व के साथ क्या सम्बन्ध है, इस प्रश्न को आलपोर्ट ने हल नहीं किया है। व्यक्ति कभी भी अपना विकास समाज से अलग रहकर नहीं कर सकता है। वह त

समाज में ठीक उसी प्रकार है जैसे शरीर में कोष्ठ (cells)। व्यक्ति में व्यक्तिगतता (eachness) तथा सर्वता (allness) दोनों का ही समावेश है।

इस प्रकार आलपोर्ट की परिभाषा त्याग कर हम कह सकते हैं कि व्यक्तित्व व्यवस्थाओं का मेला है जिसमें सामाजिकत्व तथा दूसरे वे तथ्य भी सम्मिलित हैं जो मनुष्य को Super individual में बाँधते हैं। व्यक्तित्व व्यक्तिगतता से पृथक एवं अलग है क्योंकि इसके माध्यम से ही वह उन सम्बन्धों का स्थापित करता है जिसके द्वारा परिवार तथा सामाजिक समूहों में एक प्रमुख क्रियात्मक भाग लेता है। इस प्रकार श्री उदयशंकर जी ने निष्कर्ष निकालते हुए कहा है कि "व्यक्तित्व मनोदैहिक व्यवस्थाओं का गत्यात्मक संगठन है जो सम्पूर्ण वातावरण से सम्पर्क स्थापित करता हुआ 'आत्मा' से उदय होता है।

**व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)**

किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व कैसा है, इस बात का बोध परीक्षणों से ही सम्भव है, परन्तु किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझने के हेतु उन तथ्यों को भी ध्यान रखना चाहिए जो व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। वे तथ्य जो व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करते हैं, व्यक्तित्व के निर्धारक कहलाते हैं। इनको प्रमुख रूप से दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—वंशानुक्रम (Heredity), तथा वातावरण (Environment)। *वंशानुक्रम व्यक्तित्व को अधिक प्रभावित करता है या वातावरण,* यह एक प्रतिपादित विषय है। इसमें एक स्थान पर निष्कर्ष रूप में केवल इतना ही कहा जा सकता है कि मनुष्य के व्यक्तित्व पर दोनों का ही प्रभाव पड़ता है तथा पड़ना आवश्यक है। कहा भी है कि मनुष्य जैविक वंशानुक्रम के साथ सामाजिक वंशानुक्रम में जन्म लेता है। इस प्रकार मनुष्य के व्यक्तित्व पर जैविक तथ्य तथा वातावरण तथ्यों का प्रभाव पड़ता है। इन दोनों ही तथ्यों को उप-विभाजित किया जा सकता है। इन सबकी विस्तृत व्याख्या स्थानाभाव के कारण सम्भव न होने के कारण उनका केवल उल्लेख मात्र नीचे किया जा रहा है

**जैविक तथ्य (Biological Factors)—**

(i) शारीरिक बनावट
(ii) स्वास्थ्य
(iii) बुद्धि
(iv) मेधा
(v) स्नायुमण्डल
(vi) ग्रन्थियाँ—
  (अ) कंठ ग्रन्थि (Thyroid glands)
  (आ) उपकंठ ग्रन्थि (Parathyroid glands)
  (इ) मूत्रस्थ (Adrenal glands)
  (ई) यौन ग्रन्थि (Sex glands)

वातावरण तत्व (Environment Factors)—
(i) परिवार
(ii) शिक्षा—परिवार एवं व्यक्ति दोनों की
(iii) पड़ोस, मित्र मण्डली आदि
(iv) आर्थिक स्थिति
(v) विद्यालय
(vi) समाज एवं संस्कृति
(vii) अवसर।

**व्यक्तित्व का मापन (Measurement of Personality)**

व्यक्तित्व-मापन की अनेक विधियाँ प्राचीन काल से चली आ रही हैं। हाँ, यह बात दूसरी है कि वे अवैज्ञानिक सिद्ध हो चुकी हैं। व्यक्तित्व अध्ययन की अवैज्ञानिक विधियों में सर्वप्रथम वह विधि सम्मिलित है जिसके अनुसार चेहरा व्यक्तित्व का मापन करता है।

इस विधि के अलावा कुछ व्यक्ति मनुष्य की लिखावट देखकर उसके व्यक्तित्व को ज्ञात करते थे। इस विधि को अंग्रेजी में 'ग्राफोलॉजी' (Graphology) के नाम से पुकारते हैं। इसके अलावा कुछ व्यक्ति मनुष्य के मस्तिष्क की आकृति को देखकर उसके व्यक्तित्व का ज्ञान प्राप्त करते थे, तो कुछ व्यक्ति मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर को ध्यान में रखकर व्यक्तित्व को मापते थे। (अन्त में) कुछ व्यक्ति ज्योतिष पद्धति से नक्षत्रों तथा ग्रहों के प्रभाव से तथा भविष्य से मनुष्य का व्यक्तित्व मापते हैं। ज्योतिष शास्त्र काल्पनिक है या सत्य विज्ञान है, यह हमारा विषय नहीं है। यहाँ तो केवल हम उन विधियों को गिना रहे हैं जिनके माध्यम से व्यक्तित्व का माप होता है। यह बात दूसरी है कि विधि वैज्ञानिक है या अवैज्ञानिक।

वैज्ञानिक विधियों के द्वारा भी व्यक्तित्व का मापन होता है। इस प्रकार की विधियों की सूची नीचे दी जाती है

१ प्रश्नावली (Questionnaire)
२ निर्धारण मापदण्ड (Rating Scale)
३ समाजमिति (Sociogram)
४ प्रक्षेपण विधियाँ (Project Techniques)—
(i) व्यक्ति इतिहास विधि (Case Study Method)
(ii) साक्षात्कार (Interview)
(iii) निरीक्षण (Observation)
(iv) रोशार्क परीक्षण विधि (Rorschach Test).
(v) टी० ए० टी० विधि (T. A T. Method)
(vi) स्थिति परीक्षण (Situation Test)
(vii) शब्द-साहचर्य विधि (Word Association Method)
(viii) मनोविश्लेषण विधि (Psycho-analytic Method)

इन विधियों में से प्रश्नावली विधि, निर्णय, मापदण्ड, समाजमिति, व्यक्ति इतिहास विधि, साक्षात्कार विधि, एवं निरीक्षण विधि का अन्यत्र वर्णन कर दिया गया है। यहाँ केवल रोशार्क परीक्षण विधि, टी० ए० टी० विधि, स्थिति परीक्षण, शब्द-साहचर्य विधि एवं मनोविश्लेषण विधि का ही वर्णन किया जाएगा।

## १. रोशार्क परीक्षण (Rorschach Test)

इस प्रकार की परीक्षण विधि का आविष्कार स्विट्जरलैंड निवासी हरमन रोशार्क (Harman Rorschach) ने किया। इस परीक्षा के लिए रोशार्क ने १० कार्ड इस प्रकार के बनाए हैं जिन पर विभिन्न आकार के स्याही के धब्बे अत्यन्त सावधानी से एवं मनोवैज्ञानिक तरीके से बनाए गये हैं। इन १० कार्डों में ५ कार्ड पर पूरी तरह काले, २ पर काले तथा लाल एवं बाकी ३ कार्डों पर रंग-बिरंगे धब्बे हैं। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन १६११ में हुआ। तब से अब तक इससे सम्बन्धित पर्याप्त संशोधन कार्य हो चुका है। फलांकन विधि का भी सुधार किया जा चुका है।

इनका रूप निर्धारित होता है इस कारण इनकी व्याख्या परीक्षार्थी अलग-अलग करते हैं। ये कार्ड परीक्षार्थी को एक-एक करके कार्यक्रम के अनुसार दिये जाते हैं, फिर उनसे पूछा जाता है कि वे इसमें क्या देखते हैं। धब्बों से विभिन्न चीजों का बोध होता है, यथा—पुरुष लिंग, बिगुल बजाती बालिकाएँ, चिड़ियाँ, जानवर, दैत्य आदि। इस प्रकार की परीक्षा में समय का कोई बन्धन नहीं होता है। हाँ, उत्तर देने में जितना समय लगता है वह लिख लिया जाता है। समय के साथ-साथ उत्तर देने की क्रिया, ढंग, व्यवहार इत्यादि बातें भी लिख ली जाती हैं। इस प्रकार परीक्षार्थी पर होने वाली प्रतिक्रियाओं को ध्यानपूर्वक देखा जाता है। सुविधा के लिए ये प्रतिक्रियाएँ तीन भागों में बाँटी गयी हैं, इसको ही फलांकन विधि कहते हैं

(i) क्षेत्र (Location)—इसमें देखा जाता है कि परीक्षार्थी धब्बे के समग्र हिस्से को प्रकाशित करता है या किसी एक विशेष अंग को, अर्थात् सम्पूर्ण धब्बा या उसका कोई विशेष अंग परीक्षार्थी को प्रतिक्रिया करने को प्रोत्साहित करता है।

(ii) निर्धारक गुण (Determinates)—इसमें देखा जाता है कि परीक्षार्थी पर प्रतिक्रिया किस कारण हुई। धब्बे की बनावट के कारण, धब्बे के रंगों के कारण या धब्बे की गति के कारण।

(iii) विषय-वस्तु (Contents)—इसमें देखा जाता है कि परीक्षार्थी को धब्बे में क्या चीज दिखाई दी—मनुष्य, पौधे, पशु, निर्जीव या सजीव इत्यादि।

फलांकन प्राप्त करने के उपरान्त उसकी व्याख्या की जाती है। इससे विद्यार्थी की संवेगात्मक प्रवृत्ति, उसकी पर्यवेक्षण शक्ति, मन की भावना, एवं बौद्धिक स्तर इत्यादि का पूरा-पूरा ज्ञान हो जाता है। साथ प्रतिक्रियाओं के द्वारा उसकी कल्पना शक्ति का बोध होता है किन्तु व्याख्या करते समय परीक्षार्थी की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखा जाता है।

इस विधि का प्रयोग व्यक्तिगत रूप से होता है, अर्थात् यह व्यक्तिगत परीक्षण है। मानसिक रोगों (Mental Diseases) का पता लगाया जा सकता है। चिकित्सा शास्त्र में इस प्रकार इस विधि का अच्छा उपयोग है। परन्तु निर्देशन कार्य के लिए भी यह विधि कम उपयोगी नहीं, क्योंकि इसके द्वारा व्यक्ति के अनेक गुणों का ज्ञान हो सकता है। उसकी सामान्य प्रवृत्तियों का पता लगाया जा सकता है एवं उसके आधार पर व्यक्ति की क्षमता, योग्यता एवं शक्ति का बोध हो सकता है।

२ टी० ए० टी० विधि (Thematic Apperception Test)

इस विधि को हिन्दी में 'प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण' भी कहते हैं। इस परीक्षण विधि का निर्माण भी मुरे (Murray) ने किया तथा इसका सर्वप्रथम रूप सन् १९३८ में देखने को मिला। इसके अन्तर्गत परीक्षार्थी के सम्मुख कुछ प्रश्न प्रस्तुत किये जाते हैं जिनका निर्माण श्री मुरे ने मनुष्य की विभिन्न मानसिक अवस्थाओं, भावों प्रवृत्तियों एवं अनुभूतियों को मालूम करने हेतु किया। परीक्षार्थी चित्र का वर्णन करता है, यथा—चित्र में एक घटना घट रही है, चित्र क्या दिखा रहा है, इत्यादि। समस्त चित्र द्विअर्थी हैं। चित्र एक ही है पर मनुष्य अपनी परिवर्तित मानसिक स्थिति के कारण उसकी व्याख्या अलग-अलग रूप में करता है और इस व्याख्या से ही मनुष्य की अभिरुचि, प्रवृत्तियाँ, आदत इत्यादि का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि इन्हीं के अनुरूप वह चित्र का वर्णन करता है।

इस चित्र-शृंखला में कुल मिलाकर २० चित्र हैं। ये समस्त चित्र जीवन की सामान्य घटनाओं से सम्बन्धित हैं। रार्शाक परीक्षण की भाँति इसमें भी समय का कोई बन्धन नहीं होता है। पर यदि परीक्षार्थी पाँच मिनट से ज्यादा एक चित्र में लगाता है तो उससे चित्र का निष्कर्ष पूछ लिया जाता है, फिर कुछ दिन पश्चात् परीक्षार्थी से पुनः चित्रों का कथानक बताने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार पहले एवं दूसरे कथानक—दोनों का विश्लेषण किया जाता है। विश्लेषण करने हेतु परीक्षार्थी द्वारा लिया गया समय, उसका व्यवहार, उस पर प्रतिक्रिया, उसका ढंग, सम्बद्धता इत्यादि बातों का उल्लेख भी विस्तृत रूप में कर लिया जाता है। फिर सबको ध्यान में रखते हुए परीक्षार्थी की कल्पना शक्ति का बोध होता है। वह आशावादी है या निराशावादी, सामाजिक है या एकाकी, कर्मठ है या अकर्मण्य आदि बातों का ज्ञान भी हो जाता है।

इसके विश्लेषण की भी कई विधियाँ हैं। मुरे, बैल (Bell) तथा टामकिन्स (Tomkins) ने व्याख्या विश्लेषण की अलग-अलग विधियाँ बतायी हैं पर सभी का विश्लेषण गुणात्मक है। परन्तु इन विश्लेषणों के आधार पर निकाले गए निष्कर्ष अन्तिम नहीं होते हैं। अतः आवश्यक यह होता है कि अन्य विधियों द्वारा भी निष्कर्ष निकाल कर तुलनात्मक अध्ययन किया जाए।

जहाँ तक इसकी वैधता एवं विश्वसनीयता का प्रश्न है, टी० ए० टी० परीक्षणों में अच्छी विश्वसनीयता मालूम पड़ती है, कम से कम रोर्शाक परीक्षा में तो

इसमे अधिक ही विश्वसनीयता है। जब एक ही व्यक्ति को एक चित्र बार-बार दिखाया जाता है तो उस व्यक्ति पर करीब-करीब एकसी ही प्रतिक्रिया हुई। प्रथम बार वह एक कहानी कहता है तो दूसरी बार दूसरी, पर दोनो ही कहानियाँ एक ही प्रसग (Theme) का वर्णन करती हैं। कुछ परीक्षकों ने इसकी वैधता को भी अच्छा बताया है। परन्तु फिर भी यह केवल एक प्रारम्भ ही है।

३. शब्द साहचर्य विधि (Word Association Method)

इस विधि का सर्वप्रथम प्रयोग गाल्टन ने अपनी मनोविज्ञान प्रयोगशाला मे १८७९ मे किया। गाल्टन का साथ वुण्ट (Wundt) दे रहे थे। गाल्टन ने सर्वप्रथम ७५ शब्दो की एक सूची बनायी एव इसका प्रयोग अपने पर ही किया। उसने देखा कि साहचर्य शब्दों के स्मरण से कुछ मानसिक चित्र एव प्रतिमाएँ मस्तिष्क मे अकित हो जाती हैं। इन चित्रो एव प्रतिमाओ की सख्या तथा उनकी स्पष्टता साहचर्य की शक्ति पर निर्भर था। साहचर्य भी शीघ्र तथा देर से स्थापित हो पाता था। साहचर्य काल (Association Period) की माप हेतु उसने क्रॉनोमीटर का प्रयोग किया। फिर इसका विश्लेषण किया तथा निष्कर्ष प्रतिपादित किए।

गाल्टन के पश्चात् युग (Yung) ने भी इसी विधि को अपनाया एव १०० शब्दों की एक सूची तैयार की। युग का मुख्य उद्देश्य संवेगात्मक ग्रन्थियो का पता लगाना था। इसने प्रतिक्रिया-काल एव प्रतिक्रिया शब्द दोनो के आधार पर विश्लेषण विधि अपनायी। युग ने प्रतिक्रिया-शब्दों को निम्नांकित श्रेणियो मे विभाजित किया .

(i) अह केन्द्रित (Ego-Centric)
(ii) वर्गोपरि (Super Ordiates)
(iii) विरोधी शब्द (Opposite Words)
(iv) अन्यान्य (Miscellaneous)
(v) स्पीच हैबिट (Speech Habit)

युग के उपरान्त इस विधि का सशोधन केन्ट-रोज़ानोफ (Kent-Rosanoff), रैपापोर्ट तथा ओरबीसन (Orbisn) इत्यादि ने किया।

यद्यपि वर्तमान युग मे शब्द साहचर्य की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं, परन्तु उनकी आन्तरिक प्रकृति में कोई खास भेद नहीं है। इनमे जो भी भेद है वह निर्माण भेद है, पर सबकी प्रकृति एक ही है। इनकी प्रकृति का ज्ञान रैपापोर्ट तथा शाफर (Schofer) की शब्द-साहचर्य विधि से ज्ञात हो सकता है। इस विधि के अनुसार परीक्षक परीक्षार्थी से कहता है कि उसे शब्द दिए जाएँगे। प्रत्येक शब्द के उत्तर मे उसके दिमाग मे जो सर्वप्रथम शब्द आए, उसे वह बता दे। परीक्षार्थी इसी प्रकार ६० शब्दो के उत्तर मे अपने शब्द बोलता है। इन ६० शब्दों की सूची मे गृह से सम्बन्धित, स्वास्थ्य, स्वाभाव आदि से सम्बन्धित शब्द हैं। परीक्षक द्वारा कहे गए शब्द एवं परीक्षार्थी द्वारा दिए गए प्रति उत्तर का समय उल्लिखित कर लिया जाता है एव

परीक्षार्थी का प्रत्युत्तर भी लिखा ही जाता है। परीक्षक द्वारा कहा गया शब्द 'उद्दीपक-शब्द' (Stimulus Word) कहलाता है तथा परीक्षार्थी द्वारा कहा गया शब्द 'प्रतिक्रिया-शब्द' (Reaction Word)। उदाहरण के लिए, मान लिया जाए कि उद्दीपक शब्द प्यार (Love) है एवं प्रतिक्रिया शब्द 'माँ' है। इन दोनों शब्दों का एक अर्थ है, यह परीक्षार्थी की माँ के प्रति प्रतिक्रिया बताता है। रैपापोर्ट ने प्रतिक्रिया शब्दों को पाँच श्रेणियों में विभक्त किया

(i) समीपस्थ प्रतिक्रिया (Close Reactions)
(ii) दूरस्थ प्रतिक्रिया (Distant Reactions)
(iii) विषय विश्लेषण (Content Analysis)
(iv) पुनरोत्पादक वेदना (*Reproductive Disturbances*)
(v) परम्परागत ग्रन्थियों के सकेत (Traditional Complex Indicators)

इस विधि में वैधता के कुछ चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। टेण्डलर (Tendler) ने इस विधि को पर्याप्त मात्रा में विश्वसनीय पाया है। परन्तु इस विधि की वैधता अभी सन्तोषजनक रूप में स्थापित नहीं हो पायी है।

## ४. वाक्य-पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test)

वाक्य-पूर्ति परीक्षण विधि का सर्वप्रथम प्रयोग पाइन (Pyne) तथा टेण्डलर ने १९३० में किया। इसमें २० वाक्य थे, यथा—मैं सुख अनुभव करता हूँ क्योंकि—इसके उपरान्त ह्वीलर (Wheeler), कैमरोन, सार्जं, थार्नडाइक, सेनफोर्ड ने इस विधि का संशोधन किया। रोड (Rhode) ने अपनी सूची में अत्यन्त छोटे तथा सरल पद रखे, यथा—मेरे स्कूल का काम।

इस विधि में कुछ वाक्यों को शीघ्रताशीघ्र पूरा करना पड़ता है। इसमें यह माना जाता है कि वाक्य-पूर्ति में परीक्षार्थी उन्हीं शब्दों का प्रयोग करता है जो उसकी इच्छा, भय, डर आदि को व्यक्त करते हों। इसमें अभिव्यक्ति प्रभावित उद्दीपक के निर्वाचन पर निर्भर है। इस प्रकार यह व्यक्तित्व के गुणों का बोध करता है। इस दृष्टि से यह विधि टी० ए० टी० के समकक्ष है।

इस विधि में विश्वसनीयता करीब ८३ पायी गयी है। विभेदकारी शक्ति इसमें पर्याप्त है। इस कारण निर्देशन में इस विधि का अच्छा महत्त्व है।

## ५. खेल तथा ड्रामा विधि (Play and Drama Method)

'खेल तथा ड्रामा' व्यक्तित्व मापन की अच्छी विधि मानी जाती है, क्योंकि इसमें परीक्षार्थी अपनी भावनाओं का स्वतन्त्र प्रदर्शन कर सकता है। इसका नैदानिक महत्त्व परीक्षक या पर्यवेक्षक की पर्यवेक्षण दक्षता तथा परीक्षार्थी की भावना-प्रदर्शन कला के विश्लेषण पर निर्भर है। इसमें वे कथानक भी सम्मिलित हैं, जिन्हें परीक्षार्थी खेलते समय उच्चारित करता है।

इस विधि के निर्माता प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जे० एल० मोरेनो थे जिन्होंने े प्रयोग वियना (Viena) में किए। इनके द्वारा अपनायी विधि अनेक प्रकाशनों काशित हो चुकी है। इसमें रोगग्रस्त व्यक्ति को प्रमुख नायक की भूमिका दी जाती निर्देशक या परीक्षार्थी दृश्यों (scenes) का सुझाव देते हैं। सुझाव उसकी नाओं एवं संवेगों को प्रदर्शित करते हैं। नायक की सहायता दूसरे व्यक्तियों द्वारा की जाती है। ये अन्य व्यक्ति भी नाटक में भाग लेते हैं, पर इनको मुख्य भाग दिया जाता है।

इस प्रकार की विधि में परीक्षार्थी जब नाटक खेलता है तो अपनी भावनाओं प्रदर्शित करता है, अपनी समस्याओं को दिखाता है जिससे वह उनके समाधान हेतु ई रास्ता पा सके।

इस विधि की विश्वसनीयता एवं वैधता जानने के कोई खास प्रयत्न नहीं ए गए। इस विधि में पर्यवेक्षण विधि का सहारा लेना पड़ता है और पर्यवेक्षण धि स्वयं अप्रमापीकृत है। इसके अलावा यह विधि मितव्ययी भी नहीं है। इसमें य एवं श्रम भी अधिक व्यय होता है।

वर्णन गति विधि (Expressive Movement Method)

यह बात बहुत दिनों से स्वीकार की जा चुकी है कि मनुष्य के ढंग Manners), प्रतिरूप (Gestures), मुखाकृति (Facial expressions) इत्यादि एक क्ति से भेद बताते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने मस्तिष्क में अपनी विचारधाराएँ ना लेता है जिनके आधार पर वह अनेक व्यक्तियों को अलग-अलग श्रेणी में माजित करता है। इन विचारधाराओं को वह कई प्रकार से व्यक्त करता है, था—'Sweet lady who has a kind face', 'The nurveous child who ites his finger nales' इत्यादि।

इस कथन को कि व्यक्ति के हावभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रदर्शित करते , आलपोर्ट (Allport) तथा वर्नन (Vernon) ने पूरी तरह से स्वीकार किया है।

हाव-भावों का अध्ययन करने हेतु अनेक व्यक्तियों ने कई प्रकार से प्रयत्न किए हैं। कुछ व्यक्तियों ने फोटो, चलचित्र, हस्तलेख, चित्रों की प्रतिलिपि, कथा, इत्यादि द्वारा हाव-भावों के अध्ययन की चेष्टा की है। परन्तु इस प्रकार के अध्ययन की अभी तक कोई विश्वसनीयता तथा वैधता स्थापित नहीं हो पायी है। इसलिए हम इसे अकेले ही प्रयोग नहीं कर सकते हैं।

## ४. अभियोग्यता-परीक्षण
## (Aptitude Test)

अभियोग्यता के विषय में विद्वान् एकमत नहीं हैं। यहाँ कुछ विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का वर्णन करना आवश्यक है :

परीक्षार्थी का प्रत्युत्तर भी लिखा ही जाता है। परीक्षक द्वारा कहा गया शब्द 'उद्दीपक शब्द' (Stimulus Word) कहलाता है तथा परीक्षार्थी द्वारा कहा गया शब्द 'प्रतिक्रिया-शब्द' (Reaction Word)। उदाहरण के लिए, मान लिया जाए कि उद्दीपक शब्द प्यार (Love) है एवं प्रतिक्रिया शब्द 'माँ' है। इन दोनों शब्दों का एक अर्थ है, यह परीक्षार्थी की माँ के प्रति प्रतिक्रिया बनाता है। रैपापोर्ट ने प्रतिक्रिया शब्दों को पाँच श्रेणियों में विभक्त किया

(i) समीपस्थ प्रतिक्रिया (Close Reactions)
(ii) दूरस्थ प्रतिक्रिया (Distant Reactions)
(iii) विषय विश्लेषण (Content Analysis)
(iv) पुनरोत्पादक वेदना (Reproductive Disturbances)
(v) परम्परागत ग्रन्थियों के संकेत (Traditional Complex Indicators)

इस विधि में वैधता के कुछ चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। टेण्डलर (Tendler) ने इस विधि को पर्याप्त मात्रा में विश्वसनीय पाया है। परन्तु इस विधि की वैधता अभी सन्तोषजनक रूप में स्थापित नहीं हो पाई है।

### ४. वाक्य-पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test)

वाक्य-पूर्ति परीक्षण विधि का सर्वप्रथम प्रयोग पाइन (Pyne) तथा टेण्डलर ने १९३० में किया। इसमें २० वाक्य थे, यथा—मैं सुख अनुभव करता हूँ क्योंकि— इसके उपरान्त ह्वीलर (Wheeler), कैमरोन, सार्जे, थार्नडाइक, सेनफोर्ड ने इस विधि का संशोधन किया। रोहडे (Rhode) ने अपनी सूची में अत्यन्त छोटे तथा सरल पद रखे, यथा—मेरे स्कूल का काम।

इस विधि में कुछ वाक्यों को शीघ्रातिशीघ्र पूरा करना पड़ता है। इसमें यह माना जाता है कि वाक्य-पूर्ति में परीक्षार्थी उन्हीं शब्दों का प्रयोग ... उसकी इच्छा, भय, डर आदि को व्यक्त करते हों। इसमें अर्थ ... के निर्वाचन पर निर्भर है। इस प्रकार यह व्यक्तित्व के गुणों का ... इस दृष्टि से यह विधि टी० ए० टी० के समकक्ष है।

इस विधि में विश्वसनीयता करीब ८३ पायी गयी है ... इसमें पर्याप्त है। इस कारण निर्देशन में इस विधि का अच्छा ...

### ५. खेल तथा ड्रामा विधि (Play and Drama Method)

'खेल तथा ड्रामा' व्यक्तित्व मापन की अच्छी विधि ... इसमें परीक्षार्थी अपनी भावनाओं का स्वतन्त्र प्रदर्शन कर ... महत्व परीक्षक या पर्यवेक्षक की पर्यवेक्षण क्षमता तथा प... कला के विश्लेषण पर निर्भर है। इसमें वे कथानक भी ... क्षार्थी खेलते समय उच्चारित करता है।

इस विधि के निर्माता प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जे० एल० मोरेनो थे जिन्होंने इसके प्रयोग वियना (Viena) में किए। इनके द्वारा अपनायी विधि अनेक प्रकाशनों में प्रकाशित हो चुकी है। इसमें रोगग्रस्त व्यक्ति को प्रमुख नायक की भूमिका दी जाती है। निर्देशक या परीक्षार्थी दृश्यों (scenes) का सुझाव देते हैं। सुझाव उसकी भावनाओं एवं संवेगों को प्रदर्शित करते हैं। नायक की सहायता दूसरे व्यक्तियों द्वारा की जाती है। ये अन्य व्यक्ति भी नाटक में भाग लेते हैं, पर इनको मुख्य भाग नहीं दिया जाता है।

इस प्रकार की विधि में परीक्षार्थी जब नाटक खेलता है तो अपनी भावनाओं को प्रदर्शित करता है, अपनी समस्याओं को दिखाता है जिससे वह उनके समाधान हेतु कोई रास्ता पा सके।

इस विधि की विश्वसनीयता एवं वैधता जानने के कोई खास प्रयत्न नहीं किए गए। इस विधि में पर्यवेक्षण विधि का सहारा लेना पड़ता है और पर्यवेक्षण विधि स्वयं अप्रमापीकृत है। इसके अलावा यह विधि मितव्ययी भी नहीं है। इसमें समय एवं श्रम भी अधिक व्यय होता है।

. वर्णन गति विधि (Expressive Movement Method)

यह बात बहुत दिनों से स्वीकार की जा चुकी है कि मनुष्य के ढंग (Manners), प्रतिरूप (Gestures), मुखाकृति (Facial expressions) इत्यादि एक व्यक्ति में भेद बताते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने मस्तिष्क में अपनी विचारधाराएँ बना लेता है जिनके आधार पर वह अनेक व्यक्तियों को अलग-अलग श्रेणी में समाविष्ट करता है। इन विचारधाराओं को वह कई प्रकार से व्यक्त करता है, यथा—'Sweet lady who has a kind face', 'The nurveous child who bites his finger nales' इत्यादि।

इस कथन को कि व्यक्ति के हावभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रदर्शित करते हैं, आलपोर्ट (Allport) तथा वर्नन (Vernon) ने पूरी तरह से स्वीकार किया है।

हाव-भावों का अध्ययन करने हेतु अनेक व्यक्तियों ने कई प्रकार से प्रयत्न किए हैं। कुछ व्यक्तियों ने फोटो, चलचित्र, हस्तलेख, चित्रों की प्रतिलिपि, कला, इत्यादि द्वारा हाव-भावों के अध्ययन की चेष्टा की है। परन्तु इस प्रकार के अध्ययन की अभी तक कोई विश्वसनीयता तथा वैधता स्थापित नहीं हो पायी है। इसलिए हम इसे अकेले ही प्रयोग नहीं कर सकते हैं।

## ४. अभियोग्यता-परीक्षण
## (Aptitude Test)

अभियोग्यता के विषय में विद्वान एकमत नहीं हैं। यहाँ कुछ विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का वर्णन करना आवश्यक है :

१. वारेन ने अपने कोष में अभियोग्यता के सम्बन्ध में कहा है—

"अभियोग्यता वह दशा या गुणों का रूप है जो व्यक्ति की उस योग्यता की ओर संकेत करती है जो प्रशिक्षण के बाद ज्ञान, दक्षता या प्रतिक्रियाओं को सीखना है, जैसे—भाषा बोलने या संगीतोत्पादन की योग्यता।

अभियोग्यता एक वर्तमान स्थिति है जो भविष्य की ओर संकेत करती है। अध्यापकों या माता-पिता को यह कहते हुए सुना जाता है कि 'वह तो जन्मजात कवि है' या 'उसमें चित्रांकन की प्रतिभा है।' इस कथन से स्पष्ट है कि ये व्यक्ति कुछ विशेष गुण या प्रतिभा रखते हैं जो अन्य में नहीं है। यही गुण (Talent) या योग्यता 'अभियोग्यता' के नाम से जाने जाते हैं। वारेन द्वारा दी गई परिभाषा इस बात पर कोई प्रकाश नहीं डालती कि यह अभियोग्यता जन्मजात है या अर्जित।

२. ट्रेक्सलर ने अभियोग्यता की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है—

"अभियोग्यता व्यक्ति की दशा, गुण या गुणों का समूह (Set) है जो सम्भावित विस्तार की ओर संकेत करती है जिसे व्यक्ति कुछ ज्ञान, दक्षता या ज्ञान और दक्षता के निश्चित प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त करेगा, जैसे—कला या संगीत में योगदान (Contribute) करने की योग्यता, यान्त्रिक योग्यता, गणित योग्यता या विदेशी भाषा को बोलने या पढ़ने की योग्यता।"

ट्रेक्सलर ने अपनी उपर्युक्त परिभाषा में स्पष्ट किया है कि "अभियोग्यता वर्तमान दशा है जो व्यक्ति की भविष्य की क्षमताओं की ओर संकेत करती है।"

ट्रेक्सलर ने अभियोग्यता को केवल जन्मजात नहीं माना है। उसने स्पष्ट किया है कि अभियोग्यता परीक्षा स्वाभाविक प्रवृत्ति (Innate tendencies) और प्रशिक्षण के प्रभाव का प्रतिशिक्षण करती है। अतः परीक्षा फलों में वंशानुक्रम एवं परिवेश के प्रभाव को पृथक नहीं किया जा सकता है।

३. सुपर के अनुसार अभियोग्यता में चार विशेषताएँ होती हैं—

(१) विशिष्टता (Specificity), (२) एकात्म रचना (Unitary composition), (३) सीखने की सुविधा (Facilitation of learning), (४) स्थिरता (Constancy)।

४. बिंघम ने अभियोग्यता की निम्नलिखित विशेषताएँ बताई हैं—

(१) किसी व्यक्ति की अभियोग्यता वर्तमान दशा या गुणों का समुच्चय है जो उसकी क्षमताओं की ओर संकेत करती है। यह क्षमता जन्मजात तथा वातावरण जन्य दोनों प्रकार की परिस्थितियों की अन्तःक्रिया पर निर्भर है।

(२) अभियोग्यता किसी कार्य में सम्भाव्य योग्यता से भी अधिक है। इसमें किसी क्रिया को पूर्ण करने में समुपयुक्तता का भाव भी निहित है। एक व्यक्ति किसी व्यवसाय को यदि पसन्द नहीं करता है और न उसमें प्रवीणता ही पाता है तो कहा जा सकता है कि उस व्यवसाय में उसकी अभियोग्यता नहीं है।

(३) अभियोग्यता किसी वस्तु का नाम नहीं है। यह एक अमूर्त (Abstract) [illegible] है। यह व्यक्ति के गुणों की ओर संकेत करती है। अभियोग्यता व्यक्तित्व का [illegible] है।

(४) अभियोगता वर्तमान वस्तुस्थिति होने पर भी भविष्य की ओर निर्देश करती है। यह गुणों का समुच्चय है जो क्षमताओं की ओर संकेत करते हैं। ये परीक्षाएँ सीधे भविष्य की सफलता का मापन नहीं करती हैं। इन परीक्षाओं के आँकड़े इन क्षमताओं के अनुमानात्मक (Estimating) करने का साधन प्रस्तुत करते हैं।

(५) किसी व्यवसाय में प्रवीणता करने की तत्परता में ही अभियोग्यता का पता नहीं चलता। अभियोग्यता के साथ उस व्यवसाय में उस व्यक्ति की रुचि भी होनी चाहिए। जोन्स ने अभियोग्यता के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं—

"अभियोग्यता एक योग्यता नहीं है परन्तु यह निश्चित योग्यताओं की सम्भावित विकास की भविष्यवाणी करने में सहायता करती है। अभियोग्यता परीक्षा योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट कर सकती है परन्तु सामर्थिक (Potential) योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट करने में ही परीक्षा का महत्व है।"

जोन्स ने साफल्य, योग्यता एवं अभियोग्यता में अन्तर स्पष्ट किया है—

साफल्य (Achievement)—यह भूत का वर्णन करता है। जो कुछ किया जा चुका है, उसकी ओर संकेत करता है।

योग्यता—इसका सम्बन्ध वर्तमान से है। यह दक्षताओं, आदतों और शक्तियों की ओर जो व्यक्ति में अभी हैं और जो व्यक्ति को कुछ करने योग्य बनाती हैं, संकेत करती है।

अभियोग्यता—यह भविष्य की ओर संकेत करती है। व्यक्ति की वर्तमान आदतों, दक्षताओं और योग्यताओं के आधार पर यह भविष्यवाणी करती है कि वह व्यक्ति प्रशिक्षण द्वारा व्यवसाय में क्या सफलता प्राप्त करेगा।

अभियोग्यता तथा अन्य शब्दों का अन्तर

१. सामर्थ्य (Capacity)—एक सम्भावित योग्यता होती है।

२ प्रवीणता (Proficiency)—अर्जित योग्यता की मात्रा की ओर संकेत करती है।

३. क्षमता (Capability)—विशेष प्रशिक्षण से प्राप्त होने वाली अधिक से अधिक योग्यता।

४. दक्षता (Skill)—सुसमायोजित कार्यों का रूप, जो जटिलता समन्वय और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप बदलने की योग्यता आदि विशेषताओं से विभूषित होते हैं।

५ प्रतिभावान (Genius)—यह एक सर्वोत्तम (Superlative) योग्यता है जो कोई आविष्कार करती है।

१. वारेन ने अपने कोष में अभियोग्यता के सम्बन्ध में कहा है—

"अभियोग्यता वह दशा या गुणों का रूप है जो व्यक्ति की उस योग्यता की ओर संकेत करती है जो प्रशिक्षण के बाद ज्ञान, दक्षता या प्रतिक्रियाओं की योग्यता है, जैसे—भाषा बोलने या संगीतोत्पादन की योग्यता।

अभियोग्यता एक वर्तमान स्थिति है जो भविष्य की ओर संकेत करती है। अध्यापकों या माता-पिता को यह कहते हुए सुना जाता है कि 'वह तो जन्मजात कवि है' या 'उसमें चित्राकन की प्रतिभा है।' इस कथन से स्पष्ट है कि ये व्यक्ति कुछ विशेष गुण या प्रतिभा रखते हैं जो अन्य में नहीं हैं। यही गुण (Talent) व योग्यता 'अभियोग्यता' के नाम से जाने जाते हैं। वारेन द्वारा दी गई परिभाषा इस बात पर कोई प्रकाश नहीं डालती कि यह अभियोग्यता जन्मजात है या अर्जित।

२. ट्रेक्सलर ने अभियोग्यता की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है—

"अभियोग्यता व्यक्ति की दशा, गुण या गुणों का संग्रह (Set) है जो सम्भावित विस्तार की ओर संकेत करती है जिसे व्यक्ति कुछ ज्ञान, दक्षता या ज्ञान और दक्षता के मिश्रित प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त करेगा, जैसे—कला या संगीत में योगदान (Contribute) करने की योग्यता, यान्त्रिक योग्यता गणित योग्यता या विदेशी भाषा को बोलने या पढ़ने की योग्यता।"

ट्रेक्सलर ने अपनी उपर्युक्त परिभाषा में स्पष्ट किया है कि "अभियोग्यता वर्तमान दशा है जो व्यक्ति की भविष्य की क्षमताओं की ओर संकेत करती है।"

ट्रेक्सलर ने अभियोग्यता को केवल जन्मजात नहीं माना है। उसने स्पष्ट किया है कि अभियोग्यता परीक्षा स्वाभाविक प्रवृत्ति (Innate tendencies) और प्रशिक्षण के प्रभाव का प्रतिशत करती है। अतः परीक्षा फलों में वंशानुक्रम एवं परिवेश के प्रभाव को पृथक नहीं किया जा सकता है।

३. सुपर के अनुसार अभियोग्यता में चार विशेषताएँ होती हैं—

(१) विशिष्टता (Specificity), (२) एकात्म रचना (Unitary composition, (३) सीखने की सुविधा (Facilitation of learning), (४) स्थिरता (Constancy)।

४. बिंघम ने अभियोग्यता की निम्नलिखित विशेषताएँ बतायी हैं—

(१) किसी व्यक्ति की अभियोग्यता वर्तमान दशा या गुणों का समुच्चय है जो उसकी क्षमताओं की ओर संकेत करती है। यह क्षमता जन्मजात तथा वातावरण-जन्य दोनों प्रकार की परिस्थितियों की अन्तःप्रक्रिया पर निर्भर है।

(२) अभियोग्यता किसी कार्य में सम्भाव्य योग्यता से भी अधिक है। इसमें किसी क्रिया को पूर्ण करने में समुपयुक्तता का भाव भी निहित है। एक व्यक्ति किसी व्यवसाय को यदि पसन्द नहीं करता है और न उसमें प्रवीणता ही पाता है तो कहा जा सकता है कि उस व्यवसाय में उसकी अभियोग्यता नहीं है।

(३) अभियोग्यता किसी वस्तु का नाम नही है। यह एक अमूर्त (Abstract) संज्ञा है। यह व्यक्ति के गुणो की ओर संकेत करती है। अभियोग्यता व्यक्तित्व का अङ्ग है।

(४) अभियोग्यता वर्तमान अवस्थिति होने पर भी भविष्य की ओर निर्देश करती है। यह गुणो का समुच्चय है जो क्षमताओ की ओर संकेत करते हैं। ये परीक्षाएँ सीधे भविष्य की सफलता का मापन नहीं करती हैं। इन परीक्षाओं के आँकड़े इन क्षमताओं के अनुमानांकन (Estimating) करने का साधन प्रस्तुत करते हैं।

(५) किसी व्यवसाय में प्रवीणता करने की तत्परता से ही अभियोग्यता का पता नहीं चलता। अभियोग्यता के साथ उस व्यवसाय में उस व्यक्ति की रुचि भी होनी चाहिए। जोन्स ने अभियोग्यता के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं—

"अभियोग्यता एक योग्यता नहीं है परन्तु यह निश्चित योग्यताओं को सम्भावित विकास की भविष्यवाणी करने में सहायता करती है। अभियोग्यता परीक्षा योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट कर सकती है परन्तु सामर्थ्य (Potential) योग्यताओं एवं दक्षताओं को प्रकट करने में ही परीक्षा का महत्त्व है।"

जोन्स ने साफल्य, योग्यता एवं अभियोग्यता में अन्तर स्पष्ट किया है—

साफल्य (Achievement)—यह भूत का वर्णन करता है। जो कुछ किया जा चुका है, उसकी ओर संकेत करता है।

योग्यता—इसका सम्बन्ध वर्तमान से है। यह दक्षताओं, आदतों और शक्तियों की ओर जो व्यक्ति में अभी हैं और जो व्यक्ति को कुछ करने योग्य बनाती हैं, संकेत करती है।

अभियोग्यता—यह भविष्य की ओर संकेत करती है। व्यक्ति की वर्तमान आदतों, दक्षताओं और योग्यताओं के आधार पर यह भविष्यवाणी करती है कि वह व्यक्ति प्रशिक्षण द्वारा व्यवसाय में क्या सफलता प्राप्त करेगा।

अभियोग्यता तथा अन्य शब्दों का अन्तर

१ सामर्थ्य (Capacity)—एक सम्भावित योग्यता होती है।

२ प्रवीणता (Proficiency)—अर्जित योग्यता की मात्रा की ओर संकेत करती है।

३. क्षमता (Capability)—विशेष प्रशिक्षण से प्राप्त होने वाली अधिक से अधिक योग्यता।

४ ... कार्यों का रूप, जो जटिलता समन्वय ... विशेषताओं से

(Superlative) योग्यता

## अभियोग्यता की प्रकृति (Nature of Aptitude)

अभियोग्यता की प्रकृति निम्नांकित तीन मान्यताओं पर निर्भर रहती है :

(१) किसी व्यक्ति की प्रत्येक कार्य के लिए क्षमता समान रूप से हो नहीं हो सकती है। एक व्यक्ति कुछ कार्यों को अन्य कार्यों की अपेक्षा कुशलता एवं सरलता से कर लेता है। उसे एक कार्य को करने में रुचि होती है, सन्तोष प्राप्त होता है जबकि अन्य कार्यों में वह व्यक्ति रुचि तथा सन्तोष प्राप्त नहीं करता है। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति दक्ष वकील है तो आवश्यक नहीं कि वह एक कुशल चिकित्सक भी बन सकता हो। व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न मात्रा में क्षमता होती है।

(२) एक ही कार्य के लिए व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न मात्रा में क्षमता होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि कार्य को करने के लिए दो व्यक्तियों में समान रूप से क्षमता की मात्रा नहीं होती। यहाँ पर व्यक्तिगत विभिन्नता का सिद्धान्त लागू होता है। इसका प्रमुख कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति में जन्मजात गुण समान रूप से नहीं पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति में दक्ष अध्यापक बनने की योग्यता है तो दूसरे व्यक्ति में इस योग्यता का अभाव हो सकता है।

(३) किसी व्यक्ति की क्षमताएँ सापेक्ष रूप से स्थाई होती हैं। इन क्षमताओं में शीघ्रता से परिवर्तन नहीं होता है। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति में अध्ययन के लिए अभिरुचि हो तथा चिकित्सा में अभिरुचि का अभाव हो तो यह सम्भव नहीं है कि वह कुछ दिनों बाद एक दक्ष चिकित्सक बन जाए।

## अभियोग्यता-परीक्षाएँ

विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की अभियोग्यता-परीक्षाओं का निर्माण किया है। इन अभियोग्यता-परीक्षाओं का प्रयोग अधिकांश भिन्न-भिन्न व्यवसायों के सम्बन्ध में किया जाता है। कुछ अभियोग्यता-परीक्षाओं का उपयोग विद्यार्थियों में भी किया जाता है। श्री डी० एम० रावत ने अपनी पुस्तक 'विद्यालयों में मापन तथा मूल्यांकन' में कहा है कि "भिन्न-भिन्न प्रकार की अभिरुचि-परीक्षाएँ विशिष्ट योग्यताओं के रूप में व्यक्ति की उन क्षमताओं जाँच करती हैं जो उसे पैतृक सम्पत्ति और सर्व-साधारण अनुभवों से प्राप्त होती हैं परन्तु जिनको प्रशिक्षण अथवा शिक्षा द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है।" यह कथन स्पष्ट करता है कि कुछ हद तक अभियोग्यता-परीक्षाएँ बुद्धि-परीक्षा के समान होती हैं।

अब यहाँ पर विभिन्न अभियोग्यता-परीक्षाओं का वर्णन किया जायगा।

## क्लर्क व्यवसाय के लिए अभियोग्यता-परीक्षा (Clerical Aptitude Test)

राजकीय तथा व्यापारिक कार्यालयों में कार्य को सुचारु रूप से चलाने

बिल (Bill) के अनुसार—लिपिक के कार्यों के अन्तर्गत सभी प्रकार के रिकॉर्डों को एकत्रित करना, वर्गीकरण करना एवं प्रस्तुत करना तथा किसी कार्य की योजना बनाने और आरम्भ करने में इन आँकड़ों का उपयोग करना है।

सुपर (Super) ने लिपिक के लिए दो मुख्य गुणों का वर्णन किया है—(i) गति (Speed), (ii) शुद्धता (Accuracy)। कार्यालय में जो व्यक्ति शाब्दिक और गणित चिह्नों की गणना तीव्र गति तथा शुद्धता के साथ कर सकता है वही एक दक्ष लिपिक बनने की अभियोग्यता रखता है।

बिघम (Bigham) के अनुसार चार प्रकार की योग्यताओं द्वारा लिपिक के कार्य की अभियोग्यता प्रकट होती है

(१) पर्यवेक्षण 'Perceptual)—कागज पर लिखे शब्दों एवं संख्याओं को शीघ्रता एवं शुद्धता से देखने की योग्यता।

(२) बौद्धिक (Intellectual)—शब्दों एवं चिह्नों के अर्थ को समझने की योग्यता।

(३) मानसिक दक्षता (Mental skill)—संख्याओं को शीघ्रता एवं शुद्धतापूर्वक जोड़ने तथा गुणा करने की दक्षता।

(४) यांत्रिक योग्यता (Motor ability)—उँगलियों तथा हाथों द्वारा कागज, पेंसिल, टाइपराइटर आदि को सम्भालना।

लिपिक जीविका की अभियोग्यता का मापन करने के लिए अनेक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया जाएगा, यथा—

(१) Minnesota Vocational Test for Clerical Workers—इस परीक्षा का प्रयोग व्यक्तिगत एवं सामूहिक—दोनों रूपों से किया जाता है। इसका प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाता है। इसके प्रशासन में ३५ से ४० मिनट तक लगते हैं। इस परीक्षा द्वारा टाइपिंग, पत्रों का छाँटना, फाइलों का कार्य, बुक कीपिंग आदि अभियोग्यताओं का मापन होता है।

(२) National Institute of Industrial Psychology Clerical Test—इस परीक्षा का निर्माण 'ब्रिटिश नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इन्डस्ट्रियल साइकोलॉजी' ने किया है। इस परीक्षा को सात भागों में बाँटा गया है जिनसे लिपिक व्यवसाय सम्बन्धी सात प्रकार की योग्यताओं को ज्ञात किया जाता है।

(३) Thurstone Examination in Clerical Works.

(४) Detroit Clerical Aptitude Examination

यांत्रिक अभियोग्यता (Mechanical Aptitude)

विभिन्न अवयवों का मिश्रण ही 'यान्त्रिक अभियोग्यता' है। इसके अन्तर्गत मुख्य तीन गुण आते हैं :

(१) यांत्रिक रूप (Motor Aspect)—किसी वाद्ययंत्र को बजाने के लिए आवश्यक समस्त कार्य-कलापों का ज्ञान होना।

(२) चित्रांकन का रूप (Perspective Aspect)—विभिन्न प्रकार की ज्ञानेन्द्रिय विभिन्नताओं का ज्ञान होना।

(३) व्याख्यात्मक रूप (Interpretive Aspect)—मधुर स्वर के बारे में सौन्दर्यानुभूतिक निर्णय। संगीत अभियोग्यता ज्ञात करने के लिए कुछ परीक्षाओं का निर्माण हुआ है

Seashore Musical Tests—आयोवा विश्वविद्यालय में संगीत क्षमता के परीक्षण करने के लिए एक विभाग की स्थापना सीशोर ने की थी। सीशोर संगीत परीक्षाओं का निर्माण संगीत के विभिन्न अवयवों का मापन करने के लिए किया गया है। निम्नलिखित आधारों पर मूल्यांकन किया जाता है :

(i) संगीत अनुभूति (Musical Sensitivity)—इसमें निम्नलिखित बातें सम्मिलित हैं

(अ) प्रभाव का साधारण रूप जिसमें निम्नांकित सम्मिलित हैं—

(१) स्वर की ऊँचाई का ज्ञान, (२) तीव्रता का ज्ञान, (३) समय का ज्ञान, तथा (४) विस्तार का ज्ञान।

(ब) प्रभाव का मिश्रित रूप जिसमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं :

(१) लय का ज्ञान, (२) ध्वनि का ज्ञान, (३) व्यंजन का ज्ञान, तथा (४) स्वर की मात्रा का ज्ञान।

(ii) संगीतात्मक क्रियाएँ—जिनमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं

(१) स्वर की ऊँचाई पर नियन्त्रण, (२) समय का नियन्त्रण (३) ध्वनि की मात्रा पर नियन्त्रण।

(iii) संगीतात्मक स्मृति—(१) यांत्रिक कल्पना, (२) रचनात्मक कल्पना, (३) सीखने की शक्ति, (४) स्मृति का विस्तार।

(iv) संगीतात्मक बुद्धि—(१) संगीतात्मक स्वतन्त्र साहचर्य, (२) सामान्य बुद्धि।

(v) संगीतात्मक भावना—(१) संगीतात्मक रुचि, (२) संगीत में सांवेगिक आत्म-प्रदर्शन।

### अभ्यासार्थ प्रश्न

१. छात्र का संक्षिप्त मूल्यांकन करने हेतु आप कौन-कौनसे प्रमापित परीक्षण प्रयोग में ला सकते हैं ? संक्षिप्त परिचय दीजिए।

२. बुद्धि किसे कहते हैं ? आप इसका माप किस प्रकार करेंगे ?

## ७

# निदानात्मक परीक्षाएँ

**(Diagnostic Tests)**

### १. परिचय

गत अध्याय में हमने बुद्धि, निष्पत्ति, रुचि आदि के मापन हेतु परीक्षाओं का अध्ययन किया। ये परीक्षाएँ एक स्तर की ओर इंगित करती हैं, जैसे बुद्धि-परीक्षण छात्र के बुद्धि-स्तर तथा निष्पत्ति-परीक्षण छात्र के निष्पत्ति-स्तर का माप करते हैं, किन्तु निदानात्मक परीक्षण किसी क्षेत्र विशेष के स्तर का ज्ञान न करा कर उस अवस्था का पता लगाते हैं जहाँ पर छात्र को कोई विषय समझने में कठिनाई होती है। संक्षेप में, निदानात्मक परीक्षाएँ छात्र की किसी एक विषय में कठिनाइयों तथा कमजोरियों के कारणों का पता लगाती हैं। निदानात्मक परीक्षाओं का मुख्य उद्देश्य छात्र की विषयगत कठिनाइयों का पता लगाना होता है ताकि उन्हें दूर किया जा सके।

निदानात्मक परीक्षाओं में छात्रों को अङ्क प्रदान नहीं किये जाते हैं, वरन् यह ज्ञात किया जाता है कि कौनसे प्रश्न गलत किये हैं अथवा नहीं किए हैं, तदोपरान्त इन गलत किए गए और न किए गए प्रश्नों की विषय-वस्तु का विश्लेषण करके यह ज्ञात कर लिया जाता है कि छात्र विशेष ने विषय-वस्तु के किस क्षेत्र से सम्बन्धित प्रश्न गलत किए हैं अथवा नहीं किए हैं। इस विश्लेषण से यह पता लगाया जाता है कि छात्र किस विषय-वस्तु के क्षेत्र से सम्बन्धित प्रश्नों को हल नहीं कर पाया है। इसी विषय-वस्तु-क्षेत्र में छात्र ने कठिनाई अनुभव की है, ऐसा समझ लिया जाता है। तदोपरान्त विभिन्न उपायों से छात्र की कठिनाई तथा कमजोरी को दूर करने की चेष्टा की जाती है।

गलत तथा न किए गए प्रश्नों के विश्लेषण के अलावा निदानात्मक परीक्षाओं में हमें विषय के लिए आवश्यक मानसिक प्रक्रिया का भी विश्लेषण करना पड़ता है। प्रत्येक विषय के लिए और यहाँ तक विषय की अनेक इकाइयों के लिए पृथक-पृथक मानसिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता पड़ती है। कुछ छात्र किन्हीं विशेष मानसिक प्रक्रियाओं

को सफलतापूर्वक सम्पादित नहीं कर पाते हैं । फलत, वे उस विषय-वस्तु को समझने मे कठिनाई का बोध करते हैं जिसके लिए ये मानसिक प्रक्रियाएँ आवश्यक हैं जिनका छात्र के पास अभाव है । निदानात्मक परीक्षाएँ इस तथ्य का भी पता लगाती हैं कि छात्र किन मानसिक प्रक्रियाओ को सफलतापूर्वक सम्पादित नहीं कर पाता है ।

निदानात्मक परीक्षाओं का कार्य उन तथ्यो का विश्लेषण करना भी होता है जिनके कारण छात्र को विषय मे कठिनाई होती है । इन तथ्यो मे प्रकाश, अक्षरों का आकार, गर्मी-सर्दी आदि का समावेश किया जाता है ।

निदानात्मक परीक्षाओ मे समय सम्बन्धी किसी भी प्रकार की पाबन्दी नहीं होती है । छात्र परीक्षा के लिए इच्छित समय ले सकते हैं क्योंकि धारणा यह है जिस उत्तर को छात्र जानता ही नहीं, अधिक समय मिलने पर भी वह उसका उत्तर न दे पायेगा ।

२. निदानात्मक परीक्षाओं का महत्त्व

शरीर अस्वस्थ होने पर डाक्टर चिकित्सा करने से पूर्व रोग का जिस प्रकार निदान करता है, अर्थात् पता लगाता है और फिर दवा देता है और रोग ठीक न होने पर यह समझ जाता है कि या तो दवा ठीक नहीं है अथवा रोग का निदान ठीक से नहीं हुआ है, ठीक इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र मे निदान-कार्य का बड़ा महत्त्व है। इस कार्य द्वारा शिक्षक छात्र के अध्ययन सम्बन्धी रोग (कठिनाइयों) का निदान कर उपयुक्त दवा (कठिनाई-निवारणार्थ) देता है । बिना निदान किये अध्यापक तथा छात्र दोनों के ही श्रम तथा समय व्यर्थ जा सकते हैं । इस व्यर्थता को एक-दो उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है ।

एक छात्र समूह अर्थशास्त्र मे कठिनाई अनुभव कर रहा है । कठिनाई अनुभव करने के कारणो का पता लगाये बिना तकनीकी शब्दो मे कठिनाई का निदान किये बिना ही शिक्षक बार-बार अर्थशास्त्र पढने (अगर कहा जाय कि रटने) के लिए छात्रों को बाध्य करता है तो वांछित परिणाम प्राप्त नहीं होंगे । हो सकता है कि छात्र इसलिए कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं क्योंकि उनमें पाठन-क्षमता (Reading-skill) का अभाव है । यहाँ जब तक अध्यापक छात्रों की इस कमी का दूर न करेगा तब तक छात्र वांछित प्रगति नहीं कर पायेंगे ।

दूसरा उदाहरण—बी० एड० कक्षा के छात्र मूल्यांकन प्रश्न-पत्र मे प्रमाप विचलन को नहीं कर पा रहे हैं फलत प्राध्यापक बार-बार अभ्यास करा रहा है किन्तु फिर भी वांछित उद्देश्य प्राप्त नहीं हो रहा है । यहाँ निदानात्मक परीक्षा के द्वारा एक तथ्य स्पष्ट होता है कि छात्र इसलिए 'प्रमाप विचलन' नहीं समझ पा रहे हैं कि उन्हें वर्गमूल निकालना नहीं आता है । अत अध्यापक पहले उन्हें वर्गमूल समझाता है तो देखता है कि वांछित उद्देश्य बड़ी शीघ्रता से प्राप्त हो गए हैं ।

छात्रों को किसी विषय में कभी-कभी उन कारणो से कठिनाई हो सकती है जो अन्य तथ्यों से सम्बन्धित होते हैं । निदानात्मक परीक्षाओं के द्वारा इनका पता लगाना

सम्भव नहीं है अतः छात्रों की निदानात्मक परीक्षा लेने से पूर्व इन कारणों का ज्ञान आवश्यक है। इन कारणों में निम्नांकित उल्लेखनीय हैं :

(i) बुद्धिहीनता,
(ii) शारीरिक दोष,
(iii) दूषित आर्थिक-सामाजिक वातावरण,
(iv) दूषित शिक्षण,
(v) रुचि का अभाव,
(vi) हीनता की भावना।

## ३. निदानात्मक परीक्षाएँ (The Diagnostic Tests)

पश्चिमी देशों में प्रायः सभी विषयों के क्षेत्र में अनेक निदानात्मक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। कुछ विषयों में तो निदानात्मक परीक्षाओं की बहुत अधिकता है। आज प्रवृत्ति यह है कि पाठ की इकाइयों तथा उप-इकाइयों पर भी निदानात्मक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। आज न केवल 'अंग्रेजी' भाषा पर ही निदानात्मक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं, वरन् 'अंग्रेजी' के विभिन्न पाठों—वर्तनी, व्याकरण, विराम-चिह्न, शब्द-प्रयोग, पठन आदि पर पृथक्-पृथक् परीक्षाएँ हैं। इतना ही नहीं विराम-चिह्नों पर भी अल्प विराम, पूर्ण विराम, आदि पर जहाँ पृथक्-पृथक् निदानात्मक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं, वहाँ संज्ञा, सर्वनाम तथा उनके विभिन्न अङ्गों पर भी पृथक्-पृथक् परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। शानेल (Schonell) ने गणित सम्बन्धी परीक्षाओं को १२ भागों में विभक्त किया है :

(१) बेसिक जोड़, (२) बेसिक बाकी, (३) बेसिक गुणा, (४) बेसिक भाग, (५) विविध जोड़, बाकी गुणा, भाग, (६) क्रमबद्ध जोड़, (७) क्रमबद्ध बाकी, (८) A क्रमबद्ध गुणा, B क्रमबद्ध गुणा, (९) क्रमबद्ध सरल भाग, (१०) लम्बे सरल भाग, (११) लम्बे कठिन भाग, तथा (१२) क्रमबद्ध मानसिक गणित।

इन परीक्षाओं द्वारा गणित के विभिन्न क्षेत्रों में सम्बन्धित कठिनाइयों का पता लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, बेसिक गुणा के क्षेत्र से सम्बन्धित निदानात्मक परीक्षा छात्रों के गुणा करने में होने वाली कठिनाइयों का पता लगाती है। इन परीक्षाओं की एक विशेषता यह भी है कि प्रश्नों का कठिनाई-स्तर क्रमशः बढ़ता जाता है; जैसे—

| | | | |
|---|---|---|---|
| १. | ६+१= | ४ | ■ +१= |
| २. | ९+०= | ५ | १६+६= |
| ३ | ७+२= | ६ | २१+९= |

इसमें प्रश्न नं० ४ तक सरल प्रश्न हैं किन्तु पाँचवाँ प्रश्न हासिल का प्रश्न है। यदि वह पाँचवें तथा उसके आगे के प्रश्न न कर पाये तो समझना चाहिए कि छात्र को हासिल के सवाल समझने में कठिनाई होती है

गणित में शानेल के अतिरिक्त 'बुसवेल-जौन डाइग्नोस्टिक टैस्ट फार फन्डामेन्टल प्रोसेसेज इन अरिथमेटिक' परीक्षण भी उल्लेखनीय है।

गणित के अलावा वाचन (Readings) के निदानार्थ भी अनेक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं। वाचन सम्बन्धी निदानात्मक परीक्षाओं के निर्माण हेतु डा० प्रेसी (Dr. Pressey) ने उल्लेखनीय कार्य किये हैं। डा० प्रेसी ने अपनी परीक्षा में नेत्र कार्यशीलता, शब्दोच्चारण तथा कुछ ऐसे तत्वों का जो शब्द-भण्डार-वृद्धि में सहायक होते हैं, उपयुक्त स्थान दिया। इन कार्यों हेतु डा० प्रेसी ने एक छोटा शीशा, एक पढ़ने का फोल्डर (Folder) एक पुस्तक तथा छात्र के लेखन-पत्र को उपकरण के रूप में प्रयोग किया। डा० प्रेसी के परीक्षणों को प्रेसी डाइग्नास्टिक रीडिंग टेस्ट्स फार क्लासेज III टू IX के नाम से पुकारते हैं। इन परीक्षणों में अनेक शब्द हैं। शब्दों को इस वैज्ञानिक विधि से सजाया गया है कि बालक जितने शब्द पढ़ लेता है उस संख्या के सामने दो शून्य और रख देने से उसके शब्द-भण्डार का ज्ञान हो जाता है। जैसे, यदि कोई बालक ३५ शब्द पढ़ लेता है तो उसका शब्द-भण्डार ३५०० है।

गणित तथा वाचन के अतिरिक्त अमेरिका जैसे देशों में प्रायः अध्ययन के सभी क्षेत्रों के सम्बन्ध में निदानात्मक परीक्षाएँ उपलब्ध हैं, किन्तु खेद का विषय है कि भारत में अभी तक इस क्षेत्र में कुछ भी कार्य नहीं हुआ है, और जो कुछ भी थोड़ा बहुत कार्य हुआ है उसमें मौलिकता का अभाव है, प्रायः सभी भारतीय निदानात्मक परीक्षण पश्चिमी देशों में निर्मित निदानात्मक परीक्षणों का भारतीयकरण नहीं हैं, किन्तु यह भारतीयकरण भी किन्हीं अर्थों में दूषित है क्योंकि भारतीयकरण करते समय सभ्यता, संस्कृति, आर्थिक तथा सामाजिक वातावरण आदि का पूरी तरह ध्यान रखा गया है।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. निदानात्मक परीक्षाएँ किसे कहते हैं? इस प्रकार की परीक्षाओं के क्या कार्य हैं?
२ मूल्यांकन में निदानात्मक परीक्षाओं का क्या महत्त्व है?
३ कुछ प्रमुख निदानात्मक परीक्षाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

८

# विश्वसनीयता एवं वैधता

**(Reliability and Validity)**

एक अच्छे तथा प्रमापीकृत परीक्षण (Test) में निम्नांकित गुण होते हैं :

१ विश्वसनीयता (Reliability)
२. वैधता (Validity)
३. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)
४ विभेदकारिता (Discrimination)
५ व्यापकता (Comprehensiveness)
६. व्यवहार-योग्यता (Usability) ।

प्रस्तुत अध्याय में केवल प्रथम दो गुणों का ही वर्णन किया जायगा क्योंकि ये दो गुण ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं और अन्य चार गुण भी इन्हीं दो पर आधारित हैं ।

## १ विश्वसनीयता
**(Reliability)**

विश्वसनीयता परीक्षण का वह गुण है जिसके कारण हम परीक्षण पर विश्वास करते हैं और विश्वास इसलिए करते हैं क्योंकि वह उसी तथ्य का समान रूप से मापन करती है जिसके माप हेतु वह परीक्षण निर्मित हुआ था। इस प्रकार परीक्षण की विश्वसनीयता के कारण परीक्षण उसी गुण या तथ्य या सामान्य का माप सगति के साथ करता है जिसके माप हेतु परीक्षण का निर्माण किया गया है।[1] अनास्तासी ने विश्वसनीयता के सम्बन्ध में लिखा है कि बार-बार एक ही या एक जैसा परीक्षण लेने पर फलांकों से सगति (Consistency) का होना ही विश्वसनीयता कहलाता है।[2] यदि एक परीक्षण को कई बार कुछ समय बाद छात्रों के एक ही समूह

1. "By reliability of a test measures the consistency with which a test measures what it tends to measure"

"The reliability of a test refers to the consistency of score obtained by the same individuals on different occassions or with different sets of equivalent item."—Anastase : 'Psychological Testings." p. 14.

को दिया गया तो उनके द्वारा प्राप्त प्राप्तांकों में विशेष अन्तर नहीं होना चाहिए। यदि अन्तर अधिक आता है तो हम कहते हैं कि परीक्षण में विश्वसनीयता नहीं है। उदाहरण हेतु यदि एक छात्र प्रथम बार मानसिक योग्यता की परीक्षा में ८० अङ्क प्राप्त करता है और एक माह बाद जब दुबारा उसी परीक्षण को दिया जाता है तो उसके प्राप्तांक ३० आते हैं। इस प्रकार के परीक्षण को हम विश्वसनीय नहीं कह सकते हैं। यदि दुबारा की गई परीक्षा में उस छात्र ने ७८ अङ्क भी प्राप्त किये होते तब हम परीक्षण को विश्वसनीय कह सकते।

विश्वसनीयता ज्ञात करने की विधियाँ—परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने की निम्न चार विधियाँ हैं

(i) परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि (Test Retest Method)

इस विधि के अन्तर्गत छात्रों की पहले एक परीक्षण से परीक्षा ले ली जाती है और छात्रों द्वारा प्राप्त प्राप्तांक ज्ञात कर लिये जाते हैं। उसी परीक्षण से कुछ समय बाद उन्हीं छात्रों की पुनः परीक्षा ली जाती है और छात्रों के प्राप्तांक ज्ञात कर लिये जाते हैं। तदोपरान्त दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध धनात्मक रूप से काफी अधिक हो तो समझना चाहिए कि परीक्षण विश्वसनीय है अन्यथा नहीं।

यह विधि उतनी अधिक वैज्ञानिक नहीं है। इस विधि के विपक्ष में निम्नांकित तर्क दिये जा सकते हैं

(१) यदि परीक्षण तथा पुनर्परीक्षण के मध्य समयान्तर थोड़ा है तो छात्रों के प्रत्यास्मरण का सह-सम्बन्ध में अवांछनीय रूप से धनात्मक प्रभाव पड़ेगा और सह-सम्बन्ध बहुत अधिक आ जायगा।

(२) समयान्तर थोड़ा होने से पुनर्परीक्षण के फलांकों पर अभ्यास, पूर्व परिचय आदि का धनात्मक प्रभाव पड़ेगा।

(३) फलांकों पर दोषपूर्ण निर्देश, अस्पष्ट भाषा, भाषा की कठिनाई, थकावट, विभिन्न वातावरण आदि का भी प्रभाव पड़ सकता है।

(४) यदि समयान्तर काफी अधिक है तो छात्रों के शारीरिक तथा मानसिक विकास के फलस्वरूप पुनर्परीक्षण के फलांक निश्चय ही अधिक आयेंगे।

उपर्युक्त तथ्यों को देखकर सरलतापूर्वक कहा जा सकता है कि किसी परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने हेतु इस विधि का बड़ी सावधानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।

(ii) विकल्प या समान्तर विधि (Alternative or Parallel Form Method)

इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण तैयार करने के साथ ही साथ उसका एक विकल्प या समानान्तर रूप भी तैयार करना पड़ता है। इस विकल्प या समानान्तर प्ररूप की रूपता मुख्य परीक्षण के समान ही होती है। समान्तर प्ररूप बना लेने के

उपरान्त मुख्य परीक्षण तथा समानान्तर रूप परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध अच्छा होता है तो उसकी विश्वसनीयता अच्छी मानी जाती है। इस विधि के निम्नांकित दोष हैं

१ मुख्य परीक्षण तथा समानान्तर प्रारूप की समस्त विशेषताएँ एक जैसी नहीं भी हो सकती हैं।

२ मुख्य परीक्षण छात्रों को कुछ प्रशिक्षण प्रदान करता है। इस प्रशिक्षण का समानान्तर प्रारूप के हल करने पर धनात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

३ छात्रों द्वारा स्मृति से लाभ उठाने की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं।

४ समानान्तर प्रारूप के हल करने पर छात्रों की थकान का ऋणात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

### (iii) अर्ध-विच्छेदन विधि (Split-half Method)

इस विधि के अन्तर्गत मुख्य परीक्षण को ही दो समान भागों में विभक्त कर लिया जाता है और उन दो भागों से प्राप्त फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। परीक्षण को दो भागों में विभक्त करने के लिए दो तरीके अपनाये जाते हैं। प्रथम तरीके के अनुसार प्रत्येक विषम (Odd items) पद एक भाग में और प्रत्येक सम (Even) पद एक भाग में रख लिये जाते हैं। दूसरे तरीके के अनुसार प्रथम आधे पद एक भाग में और द्वितीय आधे पद दूसरे भाग में सम्मिलित कर लिये जाते हैं। यदि परीक्षण में कठिनाई-स्तर निरन्तर बढ़ता जाय, तो सम-विषम विधि (Even-odd Method) उपयुक्त रहता है। इस विधि की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि परीक्षण-निर्माता को समस्त प्रदत्त एक ही समय में प्राप्त हो जाते हैं।

दोनों भागों के फलांक ज्ञात होने पर उनमें सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। यह सह-सम्बन्ध एक ही भाग की विश्वसनीयता बतायेगी। पूरे परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने हेतु एक अन्य सूत्र का प्रयोग करना पड़ेगा। यह सूत्र 'स्पीयरमैन ब्राउन सूत्र' (Spearman Brown Formula) के नाम से पुकारा जाता है। सूत्र इस प्रकार है—

$$r = \frac{2r'}{1+r'}$$

जिसमें,

r = सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक

r' = आधे परीक्षणों में सह-सम्बन्ध गुणांक

यदि परीक्षण के दोनों भागों में सह-सम्बन्ध ·८ है तो सम्पूर्ण परीक्षण के लिए विश्वसनीयता गुणांक निम्न प्रकार से ज्ञात किया जा सकता है :

$$r = \frac{२ \times ·८}{१ + ·८} = \frac{१·६}{१·८} = ०·९$$

६ गुणांक परीक्षण की उच्च विश्वसनीयता का द्योतक है। इस विधि की निम्नांकित अच्छाइयाँ तथा बुराइयाँ हैं .

१. इस विधि के अन्तर्गत एक ही परीक्षण निर्मित करना पड़ता है।

२ अर्थ भाग का एक ही बार प्रशासन होने पर दैव-त्रुटियों का दोनों भागों पर समान असर पड़ता है।

३. अभ्यास, थकान तथा समयान्तर आदि का कुप्रभाव नहीं पड़ता है।

४. गति-परीक्षणों (Speed Tests) में इसका प्रयोग सम्भव नहीं है।

५ परीक्षण को दो भागों में विभक्त करने की कई विधियाँ हैं और प्रत्येक विधि से विश्वसनीयता गुणांक अलग-अलग आता है, परिणामस्वरूप एक विधि से पाए उत्तर की जाँच दूसरी विधि से करना सम्भव नहीं है।

(iv) तर्कयुक्त समानता विधि (Method of Rational Equivalence)

कूडर (Kuder) तथा रिचर्डसन (Richardson) द्वारा निर्मित इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण के विभिन्न पदों (items) के मध्य सह-सम्बन्ध तथा प्रश्नों का सम्पूर्ण परीक्षण के साथ सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार इस विधि की मान्यता यह है कि परीक्षण के सभी पद एक-दूसरे से तथा सम्पूर्ण परीक्षण से सम्बन्धित होते हैं। इस विधि में निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है .

$$r=\left(\frac{N}{N-१}\right)\left(\frac{\sigma^2-\Sigma PQ}{\sigma^2}\right)$$

इसमें, $r$=सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक

$N$=परीक्षण के प्रश्नों की कुल संख्या

$\sigma$=परीक्षा में प्राप्त अङ्कों का प्रमाप विचलन .

$P$=प्रश्नों के सही उत्तर देने वाले छात्रों का समूह का अनुपात

$Q$=गलत उत्तर देने वाले छात्र समूह का अनुपात।

सूत्र को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है—

एक परीक्षा में निम्नांकित तथ्य स्पष्ट हुए—

१. प्रश्नों की कुल संख्या—५० (N)

२. फ्लाकों का प्रमाप विचलन=१० ($\sigma$)

३. गलत तथा सही उत्तर देने वाले छात्रों के अनुपात के गुणनफल का योग=१५ ($\Sigma PQ$)

इनके आधार पर सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक निकाला जा सकता है।

$$r=\left(\frac{५०}{५०-१}\right)\left(\frac{(१०)^2-१५}{(१०)^2}\right)=\frac{५०}{४९}\times\frac{८५}{१००}$$

Σ PQ ज्ञात करने के लिए प्रश्न को सही तथा गलत रूप में हल करने वाले छात्रों का अनुपात निकाल लिया जाता है और फिर प्रत्येक का परस्पर गुणा किया जाता है। इन गुणनफलों का योग ही Σ PQ होता है। जैसे—

| प्रश्न संख्या | P | Q | PQ |
|---|---|---|---|
| ४ | ३० | ७० | ·२१०० |
| ६ | ४० | ६० | ·२४०० |
| १० | ८० | २० | १६०० |
| १४ | २५ | ७५ | ·१८७५ |
| | | | ΣPQ ७८७५ |

इस विधि में यह मानकर चलना पड़ता है कि परीक्षण के समस्त पदों का कठिनाई-स्तर समान है, जबकि वास्तव में ऐसा होता नहीं है।

(आ) गति परीक्षणों की विश्वसनीयता (Reliability of Speed Tests)—गति परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए अर्ध-विच्छेद विधि तथा तर्कयुक्त समानता विधि का प्रयोग करना ठीक नहीं है। गति परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि तथा समानान्तर प्रारूप विधि का ही प्रयोग करना चाहिए।

(इ) विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले तत्त्व (Factors Affecting Reliability)—परीक्षण की विश्वसनीयता पर निम्नांकित तत्त्वों का प्रभाव पड़ता है

(i) परीक्षण की लम्बाई (Length of the Test)—परीक्षण में प्रश्नों की संख्या बढ़ाने से तात्पर्य परीक्षण की लम्बाई बढ़ाने से है। परीक्षण की लम्बाई बढ़ने से उसकी विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है। यदि एक परीक्षण में १० ही प्रश्न हैं तो वह उतना विश्वसनीय नहीं होगा, जितना वह परीक्षण जिसमें १०० प्रश्न हों। स्पीयरमैन-ब्राउन प्रोफेसी सूत्र (Spearman-Brown Prophecy Formula) द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि कितनी लम्बाई बढ़ाने से कितनी विश्वसनीयता बढ़ जायगी। सूत्र निम्नांकित है -

$$r = \frac{N \times r'}{1 + (N - 1) r'}$$

जिसमें,

r = उस परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक जिसमें प्रश्नों की वृद्धि की गई है।

## २ वैधता
### (Validity)

वैधता से तात्पर्य उस कुशलता से है जिससे कोई परीक्षण उस तथ्य का माप करता है जिसके माप हेतु परीक्षण का निर्माण किया गया है। उदाहरण के लिए, भूगोल निष्पत्ति हेतु निर्मित परीक्षण उसी समय वैध कहा जायगा जब वह भूगोल निष्पत्ति का ही माप करे। इसी प्रकार आठवीं कक्षा हेतु बनाया गया परीक्षण आठवीं कक्षा हेतु ही वैध होगा, क्योंकि वह आठवीं कक्षा के उद्देश्य से ही बनाया गया है।

**(अ) वैधता के प्रकार**

वैधता के निम्न प्रकार हैं :
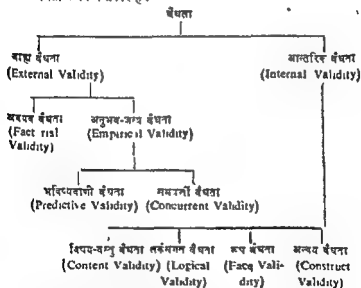
नीचे इनका संक्षिप्त परिचय है

(i) अवयव वैधता (Factorial Validity)—अवयव वैधता का अर्थ परीक्षण तथा अन्य परीक्षणों के समूह या व्यवहार के अन्य समस्त अवयवों से व्याप्त सह-सम्बन्ध से है।[1] इसमें एक परीक्षण का अन्य परीक्षणों के अवयवों से विश्लेषण

1. "The factorial validity of a test is the correlation between the test and the factor common to a group of tests or other measures of behaviour." —Anastase, *Psychological Testing*, p. 123.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊंचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उत्कर्ष प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होता तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण के प्रश्न बनाए जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण के ऐसे ही पदों का निर्माण किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि गणित [illegible] का [illegible] में [illegible] विचार का माप करता है तो उसके प्रश्न-पत्र [illegible] तर्कसंगत वैधता होगी। इस ओर [illegible]

[illegible]

[illegible]

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधानुसार इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इसके विपरीत, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से देखा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का वाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psycho logy and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस संदर्भ में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(स) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation In Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थ-शास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्य-वाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परी-क्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में रुचि विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस संद i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप में ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है -

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. *Thorndike & Hagen, Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊंचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलाकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलाकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाकों और परीक्षण के फलाकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो यह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधानुसार इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसम्मत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सम्मत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में ज्ञान विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसम्मत वैधता होगी। इस अंश ... यदि प्रश्न-पद इतिहास के रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसम्मत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से देखने

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का वाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(ख) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या स्वभावतः उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते है तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-1४.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊंचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ मे एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते है तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणो के फलाको के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्य-वाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित मे आठवी कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओ मे भी गणित मे उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणो के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय मे छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलाकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाको से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाको और परीक्षण के फलाकों मे सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण मे समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयो में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयो का उप-इकाइयो मे विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण मे प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण मे ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते है जो उन्ही योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास मे बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण मे तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र मे, यदि प्रश्न-पद इतिहास मे रुचि के सम्बन्ध मे पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का वाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण मे रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण मे रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण मे अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएं (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों मे कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र मे पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग मे लाई जाती है, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा क्रमांकन (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण मे कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस बोध i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या स्वाभाविक उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार ■ उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते ■ जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस तरह i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए वह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या स्वतः उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थ-शास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्य-वाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परी-क्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस प्रकार, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप में ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या जिन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनायें (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए वह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अत्यन्त उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभिक्षमता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण मे रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण मे अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों मे कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र मे पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अत नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग मे लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण मे कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। उसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस ओर i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अत नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस संबंध में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(अा) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-1?.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) **अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)**—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ मे एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलाकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) **भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)**—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध मे क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित मे आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओ मे भी गणित मे उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) **समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)**—समवर्ती वैधता किसी विषय मे छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलाकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलाकों और परीक्षण के फलाकों मे सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण मे समवर्ती वैधता है।

(v) **विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)**—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। उसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों मे विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयो का उप-इकाइयो मे विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण मे प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) **तर्कसगत वैधता (Logical Validity)**—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओ का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास मे बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण मे तर्कसगत वैधता होगी। इस क्षेत्र मे, यदि प्रश्न-पद इतिहास मे रुचि के सम्बन्ध मे पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसगत रूप मे वैध नहीं होगा।

(vii) **रूप वैधता (Face Validity)**—जब परीक्षण बाह्य रूप मे ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्रो-मैडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(ख) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस संदर्भ में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, गद्दार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psycho logy and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए वह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता तभी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधानुसार इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण के प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनायें (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद अब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप में ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (*Concepts*) *के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय'* (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

**(आ) कसौटी (Criterion)**

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा श्रेणीक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता तभी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण मे रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधो (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण मे अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों मे कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र मे पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है:

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊंचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

**(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)**—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करते हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

**(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)**—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चाङ्क प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

**(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)**—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

**(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)**—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

**(vi) तर्कसगत वैधता (Logical Validity)**—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसगत रूप से वैध नहीं होगा।

**(vii) रूप वैधता (Face Validity)**—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psycho logy and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थ-शास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्य-वाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधानुसार इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परी-क्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस तरह से, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से देखा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का वाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीक्ल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psycho logy and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस प्रकार, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अत नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गीकरण (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊंचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता तभी समय होगी जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उत्कर्ष प्राप्त करे। अभिक्षमता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का समस्त पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को बुद्धिमत्तापूर्ण इकाइयों में विभक्त कर लिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर प्रश्न बनाए जाते हैं। इस प्रकार की वैधता ज्ञात करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए यदि परीक्षण [illegible] का उद्देश्य [illegible] के [illegible] विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। [illegible] यदि छात्र [illegible] के [illegible] में [illegible] नहीं है [illegible] तो परीक्षण तर्कसंगत [illegible] नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण [illegible]

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करना हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मैडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मैडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण मे रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा क्रमांकन (Ratings) शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या स्वाभाविक उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है:

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस तरह ।, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण मे रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्ही सम्बोधो (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण मे अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है:

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण मे कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस और i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता तभी उत्तम होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उत्कर्ष प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-सगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस लेकिन, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद सब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इन क्षेत्र i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप-वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनायें (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(अा) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए वह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evolution in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता तभी सत्य होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस प्रकार i., यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उत्कृष्ट प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों का उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस ओर , यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या जिन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए वह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा क्रमक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस क्षेत्र में, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से ऐसा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूपवैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ जाती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र में सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(अ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापार की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

---

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118-19.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इसमें यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधानुसार इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माता का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस बीच, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप में वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से देखा

प्रतीत हो मानो वह उसी योग्यता की माप करता हो जिसका मापन करने हेतु उस परीक्षण का निर्माण हुआ है, तो परीक्षण की इस विशेषता को रूप वैधता कहा जायगा। उदाहरण के लिए, प्री-मेडीकल परीक्षा का बाह्य रूप देखकर ही यदि यह पता चल जाय कि परीक्षण मेडीकल से सम्बन्धित है तो परीक्षण में रूप वैधता कही जायगी। सेना-चयन परीक्षण के प्रश्न-पत्र युद्ध अस्त्र-शस्त्र, राडार आदि से सम्बन्धित होने पर ही परीक्षण में रूप वैधता आ सकती है।

(viii) अन्वय वैधता (Construct Validity)—प्रत्येक परीक्षण का उद्देश्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित योग्यता का माप करना होता है। इस योग्यता की व्याख्या किन्हीं सम्बोधों (Concepts) के आधार पर करनी होती है। ये सम्बोध ही 'अन्वय' (Construct) के नाम से पुकारे जाते हैं। यदि योग्यता की व्याख्या वैध होती है तो परीक्षण में अन्वय वैधता मानी जाती है। व्याख्या की वैधता के लिए अनेक उपकल्पनाएँ (Hypotheses) करनी पड़ती हैं और फिर उन उपकल्पनाओं की सत्यता की जाँच करनी पड़ती है।

(आ) कसौटी (Criterion)

कसौटी वह तथ्य है जिसके आधार पर हम किसी परीक्षण की वैधता की जाँच करते हैं। 'कसौटी' सरल शब्दों में कार्य की सफलता या वस्तु की अच्छाई का ज्ञान करने का एक आधार है। जैसे, 'वर्ष भर की कुल बिक्री' एक व्यापारी की सफलता का ज्ञान करने की कसौटी हो सकती है। परीक्षण के क्षेत्र में पूर्व-ख्याति प्राप्त वैध परीक्षण की वैधता नवीन परीक्षण की वैधता का ज्ञान करने के लिए एक कसौटी हो सकती है। वैधता का ज्ञान करने के लिए पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के साथ नवीन परीक्षण का सह-सम्बन्ध ज्ञात करके नवीन परीक्षण की वैधता ज्ञात की जाती है। नवीन परीक्षण की वैधता की जाँच पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण के आधार पर की गई है, अतः नवीन परीक्षण के लिए यह पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षण एक 'कसौटी' का कार्य करेगा।

पूर्व-ख्याति प्राप्त परीक्षणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कसौटियाँ भी प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे आयु-भेद, अध्यापक द्वारा वर्गक्रम (Ratings), शैक्षिक उपलब्धि, कार्य पर सफलता, व्यतिरेक समूह (Contrasted Group) आदि। इस प्रकार हम अपने परीक्षण की जाँच किसी भी कसौटी के आधार पर कर सकते हैं। 'कसौटी' का चयन कैसे किया जाय, या अच्छी कसौटी किसे कहते हैं, यह समस्या अनायास उठ खड़ी होती है। थार्नडाइक तथा हेगन[1] ने अच्छी कसौटी के लिए निम्नांकित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(i) अनुरूपता (Relevance)—प्रत्येक परीक्षण में कुछ अवयव (Factors)

1. Thorndike & Hagen, *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, pp. 118–1Y.

(Factor Analysis) द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यदि सह-सम्बन्ध ऊँचा होता है तो परीक्षण की वैधता अच्छी मानी जाती है।

(ii) अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity)—जब हम किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में एक दूसरे परीक्षण की वैधता ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता के नाम से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम अपने अर्थशास्त्र परीक्षण की वैधता अर्थशास्त्र के किसी अन्य वैध परीक्षण के सन्दर्भ में ज्ञात करते हैं तो उसे अनुभव-जन्य वैधता कहेंगे। अनुभव-जन्य वैधता ज्ञात करने हेतु दोनों परीक्षणों के फलांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(iii) भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity)—परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता से हमारा तात्पर्य परीक्षण की शुद्ध रूप से भविष्यवाणी करने की शक्ति से है। इससे यह देखा जाता है कि परीक्षण किसी छात्र की भावी प्रगति के सम्बन्ध में क्या भविष्यवाणी करता है। उदाहरण के लिए, गणित में आठवीं कक्षा का छात्र यदि अच्छे अङ्क प्राप्त करता है तो परीक्षण की भविष्यवाणी वैधता उसी समय होगी, जब वह छात्र आगामी कक्षाओं में भी गणित में उसी प्रकार से उच्चांक प्राप्त करे। अभियोग्यता तथा व्यावसायिक चयन परीक्षणों के लिए यह वैधता आवश्यक होती है।

(iv) समवर्ती वैधता (Concurrent Validity)—समवर्ती वैधता किसी विषय में छात्रों की योग्यता का मूल्यांकन करती है। इसके अन्तर्गत परीक्षण के फलांकों का सह-सम्बन्ध अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों से ज्ञात किया जाता है। यदि अध्यापक द्वारा ली गई परीक्षा के फलांकों और परीक्षण के फलांकों में सह-सम्बन्ध होगा तो कहा जायगा कि परीक्षण में समवर्ती वैधता है।

(v) विषय-वस्तु वैधता (Content Validity)—जब परीक्षण का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से स्थापित कर दिया जाता है तो वह विषय-वस्तु वैधता कहलाती है। इसके लिए सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को सुविधाजनक इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है, फिर इन इकाइयों को उप-इकाइयों में विभक्त करके प्रत्येक इकाई पर परीक्षण में प्रश्न बनाये जाते हैं। इस प्रकार की वैधता प्राप्त करने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

(vi) तर्कसंगत वैधता (Logical Validity)—जब परीक्षण में ऐसे ही प्रश्न-पद सम्मिलित किये जाते हैं जो उन्हीं योग्यताओं का माप करते हैं जिनके मापन हेतु परीक्षण बना है तो उसे तर्क-संगत वैधता कहेंगे। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण निर्माण का उद्देश्य इतिहास में बोध विकास का माप करना है तो उसके प्रश्न-पद जब इसी योग्यता का माप करेंगे, तभी परीक्षण में तर्कसंगत वैधता होगी। इस दृष्टि से, यदि प्रश्न-पद इतिहास में रुचि के सम्बन्ध में पूछे गये हैं तो परीक्षण तर्कसंगत रूप से वैध नहीं होगा।

(vii) रूप वैधता (Face Validity)—जब परीक्षण बाह्य रूप से देखा

(vi) प्रशासन एवं अंक-प्रदान विधि—परीक्षण निर्माता ने किस विधि से परीक्षण का प्रशासन किया है और किस विधि से अङ्क प्रदान किए हैं, इसका भी वैधता पर प्रभाव पड़ेगा। उदाहरण के लिए, यदि गति परीक्षण में शुद्धता को अधिक महत्त्व दिया गया हो तो वैधता पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. परीक्षण की विश्वसनीयता से आप क्या समझते हैं ? परीक्षण की विश्वसनीयता का माप करने की विधियों का वर्णन कीजिए।
२. परीक्षण की विश्वसनीयता पर किन-किन तत्त्वों का क्या-क्या प्रभाव पड़ता है ? स्पष्ट उल्लेख कीजिए।
३. परीक्षा की वैधता से आप क्या समझते हो ? उदाहरण देकर समझाइए।
४. वैधता कितने प्रकार की होती है ? संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट परिचय दीजिए।
५. परीक्षण की वैधता पर किन-किन तत्त्वों का क्या-क्या प्रभाव पड़ता है ?
६. वैधता की कसौटी से आप क्या समझते हैं ?

होते हैं। अच्छी कसौटी वही है जिसमें अवयवों की नवीन परीक्षण के अवयवों के साथ अनुरूपता हो। संक्षेप में, कसौटी के रूप में प्रयुक्त परीक्षण भी उसी विषय, आयु, स्तर, आदि के अनुरूप होना चाहिए जिसके लिए नवीन परीक्षण है।

(ii) पक्षपातहीनता (Freedom from Bias)—कसौटी ऐसी हो जिसमें सभी छात्रों को अधिकतम अङ्क प्राप्त करने की सुविधा हो। ऐसी कसौटी त्रुटिपूर्ण होती है जिसमें कुछ ही छात्रों को अधिकतम अङ्क प्राप्त करने के अवसर प्राप्त हों। यदि कुछ छात्र कसौटी के रूप में प्रयुक्त परीक्षण से पूर्व-परिचित हैं तो ऐसी कसौटी पक्षपूर्ण होगी।

(iii) विश्वसनीयता (Reliability)—इसका अर्थ है कि कसौटी के रूप में प्रयोग किया जा रहा परीक्षण कसौटी के रूप में विश्वसनीय होना चाहिए। पुनर्परीक्षण से कसौटी-परीक्षण के फलांकों पर उल्लेखनीय प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

(iv) प्राप्यता (Availability)—ऐसे परीक्षण को कसौटी के रूप में प्रयुक्त करना चाहिए जो सरलतापूर्वक प्राप्त हो सके।

(v) वैधता गुणांक (Validity Coefficient)—कसौटी ऐसी होनी चाहिए जिसके साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करके वैधता गुणांक ज्ञात किए जा सकें।

**(इ) वैधता को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Affecting Validity)**

परीक्षण की वैधता पर भी उन्हीं तत्वों का वही प्रभाव पड़ता है जिनका विश्वसनीयता पर पड़ता है। संक्षेप में, ये तत्व निम्नांकित हैं :

(i) परीक्षण की लम्बाई—परीक्षण की लम्बाई बढ़ाने से परीक्षण की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। विश्वसनीयता पर वैधता निर्भर होती है, अतः लम्बाई बढ़ने से वैधता भी बढ़ती है।

(ii) अस्पष्ट निर्देश—परीक्षण को हल करने हेतु दिए गए निर्देश या प्रश्नों की भाषा अस्पष्ट होने पर वैधता पर कुप्रभाव पड़ता है। अतः निर्देश स्पष्ट, सरल व संक्षिप्त तथा प्रत्यक्ष होने चाहिए।

(iii) सांस्कृतिक प्रभाव—प्रत्येक संस्कृति की अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं। इसके कारण एक सांस्कृतिक वातावरण में वैध परीक्षण दूसरे सांस्कृतिक वातावरण में वैध नहीं होगा।

(iv) छात्रों की शारीरिक स्थिति—छात्रों की शारीरिक थकान, रोग तथा दुर्बलता आदि का वैधता पर प्रभाव पड़ता है। वैधता ज्ञात करने हेतु परीक्षाओं के समय छात्रों की शारीरिक स्थिति सामान्य होनी चाहिए।

(v) समयान्तर—वैधता ज्ञात करने हेतु परीक्षा लेने में समयान्तर न तो बहुत कम होना चाहिए और न बहुत अधिक। थोड़ा समयान्तर अभ्यास को प्रभावित कर देगा, जबकि लम्बा समयान्तर शारीरिक एवं मानसिक विकास से फलांकों को प्रभावित करेगा।

चयन करना जिनमें छात्रों का मूल्यांकन करना है, तथा (२) चुने हुए उद्देश्यों को उनके महत्त्व के अनुसार अङ्क प्रदान करना। इस प्रकार उद्देश्य-भार प्रदान करने से परीक्षा वास्तव में उच्च तथा वास्तविक योग्यताओं का ही माप करती है। वह केवल रटने की क्षमता का माप नहीं करती है। नीचे एक उदाहरण में उद्देश्य-भार प्रदर्शित किया गया है

| क्रमांक | उद्देश्य | अंक | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| १ | ज्ञानात्मक | ९ | ४५% |
| २. | प्रयोगात्मक | ८ | ४०% |
| ३. | कौशलात्मक | २ | १०% |
| ४. | रुचात्मक | १ | ५% |
| | योग | २० | १००% |

(ii) विषय-वस्तु भार प्रदान (Weightage to Subject-Matter)—विषय-वस्तु को भार प्रदान करने से तात्पर्य पाठ्यक्रम की समस्त विषय-वस्तु का उसके महत्त्व के अनुसार अङ्क प्रदान करना है। इसके लिए पाठ्यक्रम का विश्लेषण करना पड़ता है और प्रत्येक इकाई को उसके महत्त्व के अनुसार अङ्क दिए जाते हैं। विषय-वस्तु को भार प्रदान करने से प्रश्न-पत्र के प्रश्न पाठ्यक्रम के किसी एक ही अङ्ग पर केन्द्रित न रहकर सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर फैल जाते हैं। नीचे एक उदाहरण में विषय-वस्तु को भार प्रदान किए गए हैं

| क्रमांक | विषय-वस्तु | अंक | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| १ | राष्ट्रपति | १० | ५०% |
| २. | उप-राष्ट्रपति | १ | ५% |
| ३ | मंत्रि-परिषद | ९ | ४५% |
| | योग | २० | १००% |

## प्रश्न-पत्र निर्मा

*(Formation of Question Pape*

प्रश्न-पत्र निर्माण हेतु निम्नांकित सोपानों की आवश्यकता पड़ती है :

१. योजना-निर्माण (Preparation of a Design)

२ ब्लू प्रिन्ट का निर्माण (Preparation of Blue-Print)

३ ब्लू-प्रिन्ट पर आधारित प्रश्नों का निर्माण (Preparation of Questions based on the Blue-Print)

४. प्रश्न-पत्र का सम्पादन (Editing of the Paper)

५. अङ्क-प्रदान योजना तथा कुंजी-निर्माण (Preparation of Key and the Marking Scheme)

६ प्रश्न-वार विश्लेषण चार्ट (Preparation of the Chart showin Question-wise Analysis)

नीचे इन सोपानों का संक्षिप्त वर्णन है

### १. योजना-निर्माण (Preparation of a Design)

शिक्षा एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। उद्देश्य विहीन शिक्षा को समाज कभी भी स्वीकार नही कर सकता है। इस तथ्य की विस्तृत व्याख्या पुस्तक के प्रारम्भि अध्यायों में की जा चुकी है। सोद्देश्यता के कारण सर्वप्रथम उद्देश्यों का निर्धारण करना पड़ता है। उद्देश्यों का निर्धारण, शिक्षण तथा मूल्यांकन दोनों के लिए आवश्यक होता है। प्रश्न-पत्र निर्माण करने के लिए सर्वप्रथम उद्देश्यों का निर्धारण करना पड़ता है। वास्तव में, उद्देश्यों का निर्धारण तो शिक्षण-कार्य प्रारम्भ करने के पहले ही कर लिया जाता है। अतः उद्देश्य-निर्धारण का कार्य प्रश्न-पत्र ... नहीं करना पड़ता है, फिर भी निर्धारित उद्देश्यों का पूरा ... समय रखा जाता है।

प्रश्न-पत्र निर्माण करते समय प्रथम सोपान ... पड़ता है। योजना-निर्माण कार्य हेतु शिक्षक को

(1) उद्देश्य-भार प्रदान (W...

भार-प्रदान करने की क्रिया में ये तथ्य

भी दिए रहते हैं। ब्लू-प्रिन्ट में विकल्पों की संख्या तथा क्रम भी दिया रहता है। नीचे एक ब्लू प्रिन्ट का उदाहरण है—

### संघीय कार्यपालिका त्रि-दिशा सूचक चार्ट

अंक - 20 — कक्षा - 10, समय - 35 मिनट

| उद्देश्य → / विषयवस्तु | ज्ञानात्मक | | | प्रयोगात्मक | | | कौशलात्मक | | | रुच्यात्मक | | | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | नि. | ल. उ. | व. नि. | नि. | ल. उ. | व. नि. | नि. | ल. उ. | व. नि. | नि. | ल. उ. | व. नि. | |
| राष्ट्रपति | - | - | 3(3) | - | 3(1) | 2(2) | - | - | 1(1) | - | - | 1(1) | 10 |
| उप-राष्ट्रपति | - | - | 1(1) | - | - | - | - | - | - | - | - | - | 1 |
| मंत्रिपरिषद् | 3(1) | - | 2(2) | 3(1) | - | - | | - | 1(1) | - | - | - | 9 |
| | 3 | - | 6 | 3 | 3 | 2 | - | - | 2 | - | - | 1 | |
| योग | 9 | | | 8 | | | 2 | | | 1 | | | 20 |

१. ब्लू-प्रिन्ट पर आधारित प्रश्न-निर्माण (Preparation of Questions based on Blue-Print)

ब्लू-प्रिन्ट में विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की स्थिति ज्ञात करने के पश्चात् उद्देश्यों पर आधारित प्रश्नों का निर्माण करना पड़ता है। प्रश्नों का निर्माण ब्लू-प्रिन्ट में दिखाई गई प्रश्नों की दिशा (Dimensions) का भी ध्यान रखना पड़ता है। इस प्रकार प्रश्नों का निर्माण करते समय चार बातों का ध्यान रखते हैं :

(i) उद्देश्य, जिसकी पूर्ति वह ब्लू-प्रिन्ट में कर रहा है।

(ii) विषय-वस्तु, जिसके सम्बन्ध में उसे मूल्यांकन करना है।

(iii) प्रकार, जो ब्लू-प्रिन्ट में दिखाई गई है।

(iv) अंक-प्रदान, जितने ब्लू-प्रिन्ट में उस प्रश्न को दिये गये हैं।

प्रश्न-निर्माण के समय प्रश्न-पत्र निर्माता को निम्नांकित तथ्य ध्यान में रखने चाहिए :

(i) प्रश्न निर्धारित विषय-वस्तु से ही सम्बन्धित होना चाहिए।

(ii) प्रश्न स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष रूप से विशिष्ट उद्देश्य से ही सम्बन्धित होना चाहिए।

७. कुछ अन्य सुझाव

उपर्युक्त ६ सोपानों के अन्तर्गत ही प्रश्न-पत्र निर्मित हो जाता है। इन सोपानों के समय कुछ सामान्य नियमों तथा तथ्यों को सदैव ध्यान में रखना चाहिए। इस सम्बन्ध में विकल्प प्रश्न, वर्तमान प्रश्न-पत्रों के दोष तथा उनको दूर करने के उपाय एवं विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की चर्चा नीचे की जायगी।

**(अ) विकल्प-प्रश्न (Optional Questions)**—प्रश्न-पत्रों में तीन प्रकार के विकल्प पाए जाते हैं

*(i) समग्र विकल्प (Over-all Option)*—इस प्रकार के विकल्प समग्र प्रश्न-पत्र के लिए होते हैं। जैसे, दस प्रश्न दिए हैं और कोई से पाँच प्रश्न करवाए गए हैं।

**(ii) खण्ड विकल्प (Section Options)**—इस प्रकार के विकल्प प्रश्न-पत्र के विभिन्न खण्डों को ही प्रभावित करते हैं। जैसे, प्रश्न-पत्र दो खण्डों 'अ' तथा 'ब' में विभक्त है और दोनों में ५, ५ प्रश्न दिए हैं, विकल्प के रूप में कहा गया है कि प्रत्येक खण्ड में कम से कम दो प्रश्न अवश्य करने हैं।

**(iii) प्रश्न विकल्प (Question-wise Options)**—इस प्रकार के विकल्प प्रश्न के साथ दिए जाते हैं, जैसे प्रश्न न० ३ के साथ ही 'या' करके ही दूसरा प्रश्न दिया है। इस प्रकार के प्रश्न-पत्र में कुल उतने ही प्रश्न होते हैं जितने छात्रों को करने होते हैं। दूसरे शब्दों में, यहाँ छात्रों को सभी प्रश्न करने होते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकार के विकल्पों के प्रथम दो विकल्प दूषित हैं। अत उन्हें प्रश्न-पत्र में नहीं देना चाहिए। प्रथम प्रकार के विकल्पों में छात्र कुछ विशेष महत्वपूर्ण पाठ, उप-पाठ एवं शीर्षक पढने के लिए अवसर पा जाते हैं। यही आलोचना दूसरे प्रकार के विकल्पों की भी जा सकती है। यह निश्चित नहीं हो पाता कि छात्र ने प्रश्न-पत्र के सभी उप-खण्डों के लिए पूरी तैयारी कर ली है।

प्रश्न के अन्तर्गत ही विकल्प का देना सदैव अच्छा रहता है। इसमें विकल्प प्रश्न उसी शीर्षक में सम्बन्धित होना चाहिए जिससे मुख्य प्रश्न सम्बन्धित है। इससे अध्यापक यह जान सकता है कि छात्र ने अमुक शीर्षक तैयार किया है अथवा नहीं। यहाँ पर केवल एक सावधानी रखनी चाहिए कि एक प्रश्न के सभी विकल्पों में समान क्रिया, उद्देश्य तथा ध्येय निहित होने चाहिए।

**(आ) वर्तमान प्रश्न-पत्रों के दोष**—वर्तमान प्रश्न-पत्रों के निम्नांकित दोषों का उल्लेख किया जाता है.

(i) प्रश्न प्रमुख रूप से पुनर्पहिचान (Recall) प्रकार के ही होते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने के लिए रटकर ही काम चल जाता है।

प्रश्न के उत्तर में आठ बातें मांगी गई हैं और पूर्ण प्रश्न के लिए चार अङ्क प्रदान किए गए हैं तब स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए कि एक सही बात के लिए आधा अङ्क दिया जाय। भाषा आदि के प्रश्न-पत्रों में वर्तनी तथा व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियों के लिए आवश्यक निर्देशन स्पष्ट रूप से दे देने चाहिए।

६ प्रश्न-वार विश्लेषण (Preparation of Question-wise Analysis)

प्रश्न-निर्माण का अन्तिम सोपान प्रश्न-पत्र के प्रत्येक प्रश्न का विस्तृत विश्लेषण करना है। इस विश्लेषण में निम्नांकित बातों की चर्चा की जाती है :

(i) उद्देश्य जिसका मूल्यांकन प्रश्न करेगा।
(ii) प्रश्न का विशिष्टीकरण।
(iii) विषय-वस्तु जिससे प्रश्न सम्बन्धित है।
(iv) उप-इकाई जिसमें प्रश्न सम्बन्धित है।
(v) प्रश्न-प्रकार।
(vi) प्रश्न के लिए आवश्यक समय।
(vii) प्रश्न के लिए निर्धारित अङ्क।
(viii) प्रश्न का कठिनाई-स्तर।

यहाँ पर बिन्दु दो (प्रश्न का विशिष्टीकरण) का थोड़ा स्पष्टीकरण कर देना आवश्यक है। प्रश्न के विशिष्टीकरण से तात्पर्य छात्र की मानसिक प्रक्रिया से है जिसका मूल्यांकन प्रश्न विशेष करेगा, जैसे पहिचान, पुनर्स्मरण आदि। 'पहिचान' विशिष्टीकरण का अर्थ है कि प्रश्न छात्र की तथ्यों, विचारों या घटनाओं को पहिचानने की शक्ति, ज्ञान, क्षमता या कौशल का मूल्यांकन करेगा। 'विश्लेषण' विशिष्टीकरण प्रश्न की उस शक्ति का द्योतक है जिससे वह छात्र की विश्लेषण-शक्ति का मूल्यांकन करेगा।

नीचे प्रश्न-वार विश्लेषण का एक नमूना है

| क्रम संख्या | प्रश्न नम्बर | उद्देश्य | विशिष्टीकरण | इकाई | उप-इकाई | प्रश्न-प्रकार | प्रदत्त समय | निर्धारित अंक | कठिनाई स्तर |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | | | |

७. कुछ अन्य सुझाव

उपर्युक्त ६ सोपानो के अन्तर्गत ही प्रश्न-पत्र निर्मित हो जाता है। इन सोपानो के समय कुछ सामान्य नियमो तथा तथ्यो को सदैव ध्यान मे रखना चाहिए। इस सम्बन्ध मे विकल्प प्रश्न, वर्तमान प्रश्न-पत्रो के दोष तथा उनको दूर करने के उपाय एवं विभिन्न प्रकार के प्रश्नो की चर्चा नीचे की जायगी।

(अ) विकल्प-प्रश्न (Optional Questions)—प्रश्न-पत्रो मे तीन प्रकार के विकल्प पाए जाते हैं

(i) समग्र विकल्प (Over-all Option)—इस प्रकार के विकल्प समग्र प्रश्न-पत्र के लिए होते हैं। जैसे, दस प्रश्न दिए हैं और कोई से पाँच प्रश्न करवाए गए हैं।

(ii) खण्ड विकल्प (Section Options)—इस प्रकार के विकल्प प्रश्न-पत्र के विभिन्न खण्डो को ही प्रभावित करते हैं। जैसे, प्रश्न-पत्र दो खण्डो 'अ' तथा 'ब' मे विभक्त है और दोनो मे ५, ५ प्रश्न दिए हैं, विकल्प के रूप मे कहा गया है कि प्रत्येक खण्ड मे कम से कम दो प्रश्न अवश्य करने हैं।

(iii) प्रश्न विकल्प (Question-wise Options)—इस प्रकार के विकल्प प्रश्न के साथ दिए जाते हैं, जैसे प्रश्न न० ३ के साथ ही 'या' करके ही दूसरा प्रश्न दिया है। इस प्रकार के प्रश्न-पत्र मे कुल उतने ही प्रश्न होते हैं जितने छात्रो को करने होते हैं। दूसरे शब्दों मे, यहाँ छात्रो को सभी प्रश्न करने होते हैं।

उपर्युक्त तीनो प्रकार के विकल्पो के प्रथम दो विकल्प दूषित हैं। अतः उन्हें प्रश्न-पत्र मे नही देना चाहिए। प्रथम प्रकार के विकल्पों मे छात्र कुछ विशेष महत्वपूर्ण पाठ, उप-पाठ एवं शीर्षक पढने के लिए अवसर पा जाते हैं। यही आलोचना दूसरे प्रकार के विकल्पो की की जा सकती है। यह निश्चित नहीं हो पाता कि छात्र ने प्रश्न-पत्र के सभी उप-खण्डो के लिए पूरी तैयारी कर ली है।

प्रश्न के अन्तर्गत ही विकल्प का देना सदैव अच्छा रहता है। इसमे विकल्प प्रश्न उसी शीर्षक से सम्बन्धित होना चाहिए जिससे मुख्य प्रश्न सम्बन्धित है। इससे अध्यापक यह जान सकता है कि छात्र ने अमुक शीर्षक तैयार किया है अथवा नहीं। यहाँ पर केवल एक सावधानी रखनी चाहिए कि एक प्रश्न के सभी विकल्पो मे समान क्रिया, उद्देश्य तथा ध्येय निहित होने चाहिए।

(आ) वर्तमान प्रश्न-पत्रों के दोष—वर्तमान प्रश्न-पत्रों के निम्नांकित दोषो का उल्लेख किया जाता है :

(i) प्रश्न प्रमुख रूप से पुनर्पहिचान (Recall) प्रकार के ही होते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने के लिए रटकर ही काम चल जाता है।

(ii) प्रश्न-पत्र सम्पूर्ण विषय-वस्तु पर नहीं बने होते हैं। इस दृष्टि से प्रश्न-पत्रों का रूप संकीर्ण कह सकते हैं। प्रश्न-पत्रों का फैलाव (Coverage) कुछ ही पाठों या इकाइयों तक सीमित रहता है।

(iii) प्रश्न-पत्रों के प्रश्न दोषपूर्ण होते हैं। उनकी भाषा दूषित होती है। भाषा से छात्रों को यह आभास नहीं हो पाता है कि उन्हें प्रश्न का किस प्रकार से क्या उत्तर देना है। अतः वे प्रत्येक प्रश्न का अस्पष्ट सा उत्तर दे देते हैं और अंक प्राप्त कर लेते हैं।

(iv) प्रायः यह देखा जाता है कि प्रश्न-पत्र निर्माता गत वर्षों के कुछ प्रश्न-पत्र उठाकर उन्हीं में से कुछ महत्त्वपूर्ण विषय-वस्तु से सम्बन्धित प्रश्नों को चुनकर एक नया प्रश्न-पत्र बना देते हैं। इस प्रकार प्रश्न-पत्र के अधिकतर प्रश्न वे होते हैं जो पिछले दो चार वर्षों में आ चुके होते हैं। इससे छात्र गत चार-पाँच वर्षों के प्रश्न-पत्र तैयार कर लेते हैं।

(v) प्रश्न निबन्धात्मक रूप में होते हैं। इससे वे छात्र अधिक लाभान्वित होते हैं जो भाषा में श्रेष्ठ होते हैं।

(vi) इन प्रश्न-पत्रों में वैधता तथा विश्वसनीयता का अभाव होता है।

(vii) प्रश्न-पत्रों में विकल्प बड़े ही दूषित होते हैं। प्रायः समग्र विकल्प (Over all Option) ही होते हैं। समग्र विकल्पों के दोषों का पहिले ही उल्लेख किया जा चुका है।

इन दोषों से प्रश्न-पत्र को बचाने के लिए निम्नांकित सुझाव दिए जा सकते हैं :

(i) उद्देश्यों का स्पष्ट निर्धारण होना चाहिए। प्रश्न-पत्र निर्माण के समय निर्माता को उन योग्यताओं तथा क्षमताओं का भी ध्यान रखना चाहिए जिनके माप हेतु प्रश्न-पत्र का निर्माण करना है।

(ii) प्रश्न-पत्रों को वैध तथा विश्वसनीय बनाना चाहिए।

(iii) भाषा की स्पष्टता तथा उत्तर की निश्चितता की ओर ध्यान देना चाहिए।

(iv) निबन्धात्मक प्रश्नों के अतिरिक्त वस्तुनिष्ठ तथा लघु उत्तरात्मक प्रश्नों को भी प्रश्न-पत्रों में स्थान दिया जाना चाहिए।

(v) समग्र विकल्प प्रणाली समाप्त करके प्रश्न विकल्प प्रणाली अपनानी चाहिए।

(vi) प्रश्न-पत्रों का फैलाव (Coverage) व्यापक करना चाहिए।

(vii) प्रश्न-पत्रों के निर्माण के समय ही अङ्क-प्रदान योजना तथा कुंजी का निर्माण करना चाहिए।

(इ) प्रश्नों के प्रकार—सामान्यतया प्रश्न दो प्रकार के होते हैं :

(i) निबन्धात्मक प्रश्न,

(ii) वस्तुनिष्ठ प्रश्न।

नीचे दोनों ही प्रकार के प्रश्नों का वर्णन है।

(I) निबन्धात्मक प्रश्न (Essay-type Question)—इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर निबन्ध रूप में एक निश्चित समय में देने पड़ते हैं। इन प्रश्नों का भारत में काफी प्रचलन है।

निबन्धात्मक प्रश्नों के गुण—

(i) इन प्रश्नों से छात्रों की भावाभिव्यक्ति-क्षमता का बोध होता है।

(ii) निबन्धात्मक परीक्षाएँ छात्रों की चिन्तन तथा विचार-शक्ति की मौलिकता का माप करती हैं।

(iii) निबन्धात्मक परीक्षाएँ छात्रों की भाषा-शैली तथा लेखन कला का माप करती हैं।

(iv) निबन्धात्मक प्रश्न रचनात्मक चिन्तन (Creative thinking) का विकास करते हैं।

(v) निबन्धात्मक प्रश्नों से छात्र की उच्च मानसिक प्रक्रियाओं का मापन सम्भव है।

(vi) निबन्धात्मक प्रश्नों से युक्त प्रश्न-पत्र सामूहिक परीक्षण हेतु उत्तम होते हैं।

(vii) निबन्धात्मक प्रश्न अध्ययन की अनेक उपयुक्त विधियाँ अपनाते हैं, जैसे रूपरेखा बनाना, सारांश बनाना इत्यादि।

(viii) प्रश्नों का निर्माण सरल तथा सुगम होता है।

(ix) निर्माण तथा धन की दृष्टि से मितव्ययी होते हैं।

(x) कुछ पाठ्य-वस्तु का माप केवल निबन्धात्मक प्रश्नों के द्वारा ही सम्भव होता है।

(xi) इनके उत्तर देने में केवल तथ्यों की पहिचान करना ही पर्याप्त नहीं होता है, वरन् उनकी पहिचान करके उनकी व्यवस्थित व्याख्या करनी पड़ती है।

**निबन्धात्मक प्रश्नों के दोष—**

(i) निबन्धात्मक प्रश्नो मे वैधता तथा विश्वसनीयता का अभाव होता

(ii) निबन्धात्मक प्रश्नों मे वैयक्तिकता (Subjectivity) होती है।

(iii) निबन्धात्मक प्रश्नो मे युक्त प्रश्न-पत्रो मे प्रतिनिधित्व का पूर्ण अ रहता है, क्योकि छात्र प्रश्न-पत्र मे सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में से केवल प्रश्न ही निर्मित कर पाता है, फलत. प्रश्नो का फैलाव (Cover बहुत ही सीमित रह जाता है।

(iv) अङ्क-प्रदानकर्ता को काफी समय तथा श्रम की आवश्यकता पड़ती है

(v) निबन्धात्मक प्रश्नो मे छात्रो की समस्त योग्यताओ तथा क्षमताओं माप नही होता है।

(vi) प्रश्नो मे एकरूपता की कमी रहती है।

(vii) वे छात्र अधिक लाभ उठा लेते हैं जो भाषा मे अच्छे होते हैं।

(viii) इन प्रश्नो के उत्तरो का निदानात्मक रूप मे उपयोग सम्भव नहीं है

(ix) निबन्धात्मक प्रश्न रटने (Cramming) पर अधिक बल देते हैं।

(x) प्रश्नो की पुनरावृत्ति (Repetition) अधिक होती है, जिससे छात्र अप अध्ययन कुछ महत्वपूर्ण कहे जाने वाले प्रश्नो के उत्तरो तक ही सीमि रखते हैं।

**कुछ सुझाव**—निबन्धात्मक प्रश्नो के दोषो को दूर करने की दृष्टि से निम्न किस सुझाव दिए जा सकते हैं

(i) प्रश्नो की रचना तथा प्रयोग मे सावधानी रखी जाय। रचना के सम ध्यान दिया जाय कि ऐसे प्रश्नो की रचना हो जो उन उद्देश्यो का कर सकें जिनके मापन हेतु परीक्षा की जा रही है। संक्षेप मे, प्र रचना के समय पूर्व-निर्धारित उद्देश्यो का ध्यान रखा जाय।

(ii) प्रश्नो की भाषा सरल, स्पष्ट तथा निश्चित हो जिससे उत्तर मे छा वही तथ्य लिखें जो प्रश्न-पत्र निर्माता द्वारा चाहे गए हैं।

(iii) प्रश्नो का फैलाव व्यापक किया जाय।

(iv) समग्र विकल्प के स्थान पर प्रश्न-वार विकल्प रखा जाय।

(v) उत्तरो की जाँच तथा अङ्क प्रदान करने हेतु वैज्ञानिक विधि अपनाई जाय।

(vi) प्रश्न-पत्र निर्माण हेतु निर्माताओं को तथा प्रश्नों का उत्तर देने हेतु छात्रो को प्रशिक्षित किया जाय।

(ii) वस्तुनिष्ठ प्रश्न—वस्तुनिष्ठ प्रश्न वस्तुस्थिति पर आधारित होते हैं। इनके उत्तर देने में छात्रों को स्वतन्त्रता नहीं होती है, वे अपनी इच्छा से चाहे जो कुछ लिखें चाहे जिस प्रकार उत्तर नहीं दे सकते हैं क्योंकि प्रत्येक प्रश्न का एक विशिष्ट उत्तर होता है और छात्र से वही विशिष्ट उत्तर देने की आशा की जाती है। यदि छात्र उस विशिष्ट उत्तर के अलावा और कुछ भी उत्तर देता है तो वह गलत माना जाता है, इसलिए इन्हें विशिष्टोत्तरसमक प्रश्न *(Specific answer-type questions)* भी कहते हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के गुण—

(i) *वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का फैलाव (Coverage) व्यापक होता है।*

(ii) इनके उत्तरों को अङ्क प्रदान करने में शुद्धता तथा पक्षपात-विहीनता का महान गुण होता है।

(iii) इनके उत्तर देने हेतु छात्रों को अधिक श्रम तथा समय नहीं देना पड़ता है।

(iv) इनकी जाँच परस्पर-विद्यार्थियों द्वारा भी की जा सकती है।

(v) रटने वाले छात्र इनमें लाभ नहीं उठा सकते फलतः रटने की प्रवृत्ति को ये प्रश्न कम करते हैं।

(vi) ये प्रश्न अधिक विश्वसनीय तथा वैध होते हैं।

(vii) इनसे छात्रों की निर्णय-शक्ति का माप ठीक प्रकार से हो सकता है।

(viii) भाषा-ज्ञान रखने वाले छात्र इनमें लाभ नहीं उठा सकते।

(ix) इनसे छात्रों की अनेक योग्यताओं तथा क्षमता का माप सम्भव है, जैसे शुद्धता, तर्क, निर्णय, समय भावना, गति आदि योग्यताएँ।

(x) छात्रों की स्वतन्त्रता सीमित कर देने से छात्र व्यर्थ तथा असम्बन्धित तथ्य लिखकर समय तथा श्रम नष्ट नहीं कर सकते तथा इससे वे जाँच कर्ता की आँख में भी धूल नहीं डाल सकते हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के दोष—

(i) प्रश्न-पत्र निर्माण में बहुत अधिक समय तथा श्रम लगता है।

(ii) इस प्रकार के प्रश्नों से विचार-संगठन सम्भव नहीं है, क्योंकि छात्र को अपने विचारों को संगठित तथा व्यवस्थित रूप में व्यक्त करने के अवसर ये प्रश्न नहीं देते हैं।

(iii) इन प्रश्नों के उत्तरों का देने में अन्दाज *(Guess)* को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। अनेक प्रश्नों के उत्तर छात्र अन्दाज से ही दे देते हैं।

(iv) प्रश्नों की रचना बड़ी जटिल तथा क्लिष्ट होती है।

(v) छात्रों की भाषा सम्बन्धी क्षमता [illegible] का पता नहीं चल पाता है।

(vi) इन प्रश्नों के उत्तर से छात्रों के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कुछ [illegible] नहीं बताया जा सकता है।

(vii) इनमें अनुमान लगाने की सम्भावनाएँ अधिक हैं।

(viii) इनमें समय तत्व की आवश्यकता से अधिक ध्यान रखना पड़ता है।

प्रकार—वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के प्रकार तथा उप-प्रकारों को नीचे दर्शा[illegible] दिखाया गया है.

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

- पहिचान प्रश्न (Recognition Question)
  - सत्यासत्य प्रश्न (True-False Type Question)
  - मिलान पद प्रश्न (Matchings Question)
  - बहुवैकल्पिक चयन प्रश्न (Multiple Choice Question)
    - सर्वोत्तम उत्तर प्रश्न (Best Answer Question)
  - वर्गीकरण प्रश्न (Classification Question)
- प्रत्यास्मरण प्रश्न (Recall Question)
  - सहज प्रत्यास्मरण प्रश्न (Simple Recall Type Question)
  - रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न (Completion Question)
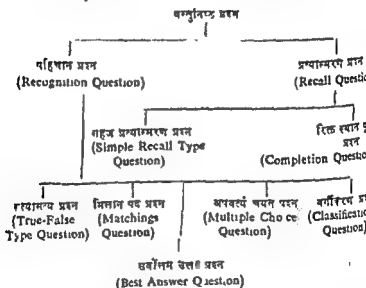
इनका परिचय पीछे दिया जा चुका है।

कुछ सुझाव—वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का निर्माण करते समय निम्नांकित सुझावों को ध्यान में रखना चाहिए :

(i) प्रश्न उद्देश्यों से सम्बन्धित हों।

(ii) प्रश्नों के उत्तर निश्चित होने चाहिए।

(iii) प्रश्नों के कठिनाई-स्तर तथा विभेदकारिता का ध्यान रखना चाहिए।

(iv) प्रश्न ऐसे बनाए जाएँ कि अन्दाज की सम्भावना न हो।

(v) प्रत्येक प्रकार के प्रश्नों के साथ स्पष्ट तथा पूर्ण निर्देश दिए जाएँ।

(vi) उपलब्ध समय के अनुसार ही प्रश्नों की संख्या रखी जाय।

[illegible] गई जाय।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. प्रश्न-पत्र का निर्माण करते समय किन-किन सोपानों की आवश्यकता पड़ती है ? प्रत्येक सोपान का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

२. प्रश्न-पत्रों में विकल्प-प्रश्न प्रदान करने की कौन-कौनसी विधियाँ हैं ? आप किस विधि को उत्तम समझते हैं ? और क्यों ?

३. वर्तमान प्रश्न-पत्रों में कौन-कौनसे दोष हैं ? इन दोषों को दूर करने के उपायों पर प्रकाश डालिए।

४. प्रश्नों का निर्माण करते समय कौन-कौनसी बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

५. प्रश्नों को शैक्षिक उद्देश्यों से किस प्रकार सम्बन्धित किया जा सकता है ? इससे क्या लाभ है ?

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. प्रश्न-पत्र का निर्माण करते समय किन-किन सोपानों की आवश्यकता पड़ती है ? प्रत्येक सोपान का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

२. प्रश्न-पत्रों में विकल्प-प्रश्न प्रदान करने की कौन-कौनसी विधियाँ हैं ? आप किस विधि को उत्तम समझते हैं ? और क्यों ?

३. वर्तमान प्रश्न-पत्रों में कौन-कौनसे दोष हैं ? इन दोषों को दूर करने के उपायों पर प्रकाश डालिए।

४. प्रश्नों का निर्माण करते समय कौन-कौनसी बातों को ध्यान में रखना चाहिए ?

५. प्रश्नों को शैक्षिक उद्देश्यों से किस प्रकार सम्बन्धित किया जा सकता है ? इससे क्या लाभ है ?

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१ प्रश्न-पत्र का निर्माण करते समय किन-किन सोपानो की आवश्यकता पडती है ? प्रत्येक सोपान का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

२ प्रश्न-पत्रो मे विकल्प-प्रश्न प्रदान करने की कौन-कौनसी विधियाँ हैं ? आप किस विधि को उत्तम समझते हैं ? और क्यो ?

३ वर्तमान प्रश्न-पत्रो मे कौन-कौनसे दोष हैं ? इन दोषो को दूर करने [illegible] उपायो पर प्रकाश डालिए।

४. प्रश्नो का निर्माण करते समय कौन-कौनसी बातो को ध्यान मे रखना चाहिए ?

५. प्रश्नो को शैक्षिक उद्देश्यों से किस प्रकार सम्बन्धित किया जा सकता है ? इससे क्या लाभ है ?

खण्ड २

# सांख्यिकी

# (STATISTICS)

# खण्ड २

# सांख्यिकी

# (STATISTICS)

१०

# परिभाषा एव महत्त्व

## (DEFINITION AND IMPORTANCE

### १. परिभाषा

साख्यिकी एक ऐसी वैज्ञानिक विधि है जो किसी भी क्षेत्र से सम्बन्धि
संख्यात्मक प्रदत्तों (Data) का अध्ययन, विश्लेषण तथा विवेचन इस प्रकार से कर
है कि उसके द्वारा भूतकालीन तथ्यों की वर्तमान तथ्यों से तुलना की जाती है अथ
भविष्य के लिए अनुमान निकाले जाते हैं। यहाँ पर यह ध्यान रखने की बात है
साख्यिकी स्वयं कोई विज्ञान नहीं है वरन् यह केवल मात्र एक वैज्ञानिक विधि है
साख्यिकी एक वैज्ञानिक विधि होने के कारण, अनुमान लगाती है, अनुमानों
सत्यता को ज्ञात करती है और अन्त में उन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार करती है
बॉडिंगटन ने इसे 'अनुमान तथा सम्भावनाओं का विज्ञान' कहकर पुकारा है
साख्यिकी की परिभाषा देते हुए लोविट (Lovitt) महोदय लिखते हैं कि साख्य
संख्यात्मक तथ्यों के सकलन, वर्गीकरण तथा सारणीकरण से सम्बन्धित एक अध्य
है, जो सम्बन्धित घटनाओं का विवरण, विवेचन एवं तुलना करती है। अनुमर्स त
लिन्डक्विस्ट के अनुसार 'साख्यिकीय पद्धतियाँ वे प्रणालियाँ हैं जिनके द्वारा सम्
त्मक अथवा परिमाणात्मक प्रदत्तों का सकलन तथा विवेचन किया जाता है।' प्रद
की विवेचना करना सरल कार्य नहीं है। विवेचना करते समय कुछ आवश्यक तथ
की तरफ ध्यान देना पड़ता है और फिर विवेचना के लिए आवश्यक कदम उठ
पड़ते हैं।

विवेचना करने से पूर्व हमें प्रदत्तों को देखना पड़ता है। सभी प्रदत्तों
विवेचना नहीं की जा सकती है। विवेचना करने के लिए प्रदत्तों में कुछ विशेषत
होनी आवश्यक हैं। केवल उन्हीं प्रदत्तों की विवेचना सम्भव है जिनमें निम्नांकि
विशेषताएँ हों :

(i) प्रदत्त संख्यात्मक हों अथवा संख्या में परिवर्तित करने योग्य हों।

११

# निदर्शन तथा आवृत्ति-वितरण

**(Sampling and Frequency Distribution)**

## निदर्शन

**(Sampling)**

वर्तमान समय में अनुसंधानकर्ता अथवा शिक्षक के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह अपने अनुसंधान अथवा खोज के लिए सभी व्यक्तियों या वस्तुओं को अपना विषय बनाये। समग्र (Universe) का अध्ययन करना प्रायः असम्भव है। उदाहरण के लिए, यदि अनुसंधानकर्ता किशोरावस्था के युवकों की रुचियों का पता लगाना चाहता है तो अध्ययन के लिए सभी किशोर समग्र (Universe or population) कहलायेगा।[1] किन्तु वह ऐसा नहीं कर पायेगा। उसे इस समग्र में से कुछ ऐसे किशोर ले लेने पड़ेंगे जो समग्र का सही-सही प्रतिनिधित्व कर सकें। समग्र में से कुछ ऐसे अंशों का चयन कर लेना जो समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें, निदर्शन कहलाता है। निदर्शन के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों का विवेचन सांख्यिकी में किया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि समग्र अत्यन्त छोटा होता है, तो उसमें से निदर्शन का छांटना व्यावहारिक नहीं होता है। जब हम समग्र की विवेचना करते हैं तो वह सांख्यिकी न कहलाकर पैरामीटर कहलाता है। संक्षेप में सांख्यिकी निदर्शन में लागू होती है जबकि पैरामीटर समग्र में लागू होता है।

**निदर्शन-विधियाँ**

निदर्शन करने की कई विधियाँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नांकित हैं :

---

1. "Population (universe) includes all sets of individuals, objects or reactions that can be described as having a unique pattern of qualities."—Guilford, J. P.. *Fundamental Statistics In Psychology and Education*, Mc Graw Hill, N. Y.

(अ) दैव निर्देशन (Random Sampling)

यदि समग्र में से प्रत्येक व्यक्ति, तथ्य तथा घटना के चयन करने के समान अवसर होते हैं, एक चुना गया तथ्य दूसरे के चयन पर प्रभाव नहीं डालता है और इन आधारों पर जब निदर्शन किया जाता है तो वह दैव निर्दशन कहलाता है।[1] सिक्के को उछालना, लाटरी आदि में इसी का प्रयोग किया जाता है। दैव निदर्शन दो प्रकार का होता है—नियमित दैव निदर्शन तथा शुद्ध दैव निदर्शन।

(आ) पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sampling)

इस प्रकार के निदर्शन में एक पूर्व नियोजित तथा नियमित त्रुटि होती है। इस विधि में कुछ तथ्यों को चुने जाने के अन्य तथ्यों की अपेक्षा अधिक अच्छे अवसर प्राप्त होते हैं।

(इ) स्तरित निदर्शन (Stratified Sampling)

इस प्रकार की विधि के अन्तर्गत सबसे पहले समग्र को कई समूहों में विभक्त कर लिया जाता है और फिर प्रत्येक समूह से दैव निदर्शन किया जाता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं। हमने अपने समग्र को सबसे पहले दो समूहों—शिक्षित तथा अशिक्षित—में विभक्त कर दिया। तदोपरान्त दोनों ही समूहों से निदर्शन किया जायगा।

(ई) सोद्देश्य निदर्शन (Purposive Sampling)

निदर्शन को व्यावहारिक तथा सुविधाजनक बनाने हेतु इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत समग्र के कुछ अंशों को लेकर उनसे ही निदर्शन किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं तो हम सम्पूर्ण राष्ट्र से निदर्शन न लेकर राष्ट्र के दो-चार राज्यों से ही निदर्शन ले सकते हैं।

(उ) आकस्मिक निदर्शन

यह निदर्शन इसलिए लिये जाते हैं क्योंकि वे अत्यन्त सुविधाजनक रूप से उपलब्ध होते हैं। यह समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकता है और नहीं भी कर सकता है।

## आवृत्ति वितरण
### (Frequency Distribution)

समग्र से अथवा निदर्शन से तथ्य या प्रदत्त संग्रह कर लेने के उपरान्त उन्हें नियमित तथा व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। अव्यवस्थित

1. "........it is selection of cases from the population in such a manner that every individual in the population has an equal chance of being chosen. The selection of any one individual is also in no way tied to the selection of any other". —Guilford, *op. cit.*, p. 156.

## ११

# निदर्शन तथा आवृत्ति-वितरण
**(Sampling and Frequency Distribution)**

### निदर्शन
**(Sampling)**

वर्तमान समय मे अनुसधानकर्त्ता अथवा शिक्षक के लिए यह संभव नहीं है कि वह अपने अनुसधान अथवा खोज के लिए सभी व्यक्तियो या वस्तुओ को अपना विषय बनाये। समग्र (Universe) का अध्ययन करना प्राय असभव है। उदाहरण के लिए, यदि अनुसधानकर्त्ता किशोरावस्था के युवको की रुचियों का पता लगाना चाहता है तो अध्ययन के लिए सभी किशोर समग्र (Universe or population) कहलायेगा।[1] किन्तु वह ऐसा नही कर पायेगा। उसे इस समग्र मे से कुछ ऐसे किशोर ले लेने पडे गे जो समग्र का सही-सही प्रतिनिधित्व कर सकें। समग्र मे से कुछ ऐसे अशो का चयन कर लेना जो समग्र का प्रतिनिधित्व कर सके, निदर्शन कहलाता है। निदर्शन के आधार पर प्राप्त प्रदत्तो का विवेचन सांख्यिकी मे किया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि समग्र अत्यन्त छोटा होता है, तो उसमें से निदर्शन का छाँटना व्यावहारिक नही होता है। जब हम समग्र की विवेचना करते हैं तो वह सांख्यिकी न कहलाकर पैरामीटर कहलाता है। सक्षेप मे सांख्यिकी निदर्शन में लागू होती है जबकि पैरामीटर समग्र मे लागू होता है।

**निदर्शन-विधियाँ**

निदर्शन करने की कई विधियाँ हैं। इनमे से कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नांकित हैं :

---

1. ... lividuals, objects ... unique pattern ... Statistics in Psy-

(अ) दैव निदर्शन (Random Sampling)

यदि समग्र में से प्रत्येक व्यक्ति, तथ्य तथा घटना के चयन करने के समान अवसर होते हैं, एक चुना गया तथ्य दूसरे के चयन पर प्रभाव नहीं डालता है और इन आधारों पर जब निदर्शन किया जाता है तो वह दैव निदर्शन कहलाता है।[1] सिक्के को उछालना, लाटरी आदि में इसी का प्रयोग किया जाता है। दैव निदर्शन दो प्रकार का होता है—नियमित दैव निदर्शन तथा शुद्ध दैव निदर्शन।

(आ) पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sampling)

इस प्रकार के निदर्शन में एक पूर्व नियोजित तथा नियमित त्रुटि होती है। इस विधि में कुछ तथ्यों को चुने जाने के अन्य तथ्यों की अपेक्षा अधिक अच्छे अवसर प्राप्त होते हैं।

(इ) स्तरित निदर्शन (Stratified Sampling)

इस प्रकार की विधि के अन्तर्गत सबसे पहले समग्र को कई समूहों में विभक्त कर लिया जाता है और फिर प्रत्येक समूह से दैव निदर्शन किया जाता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं। हमने अपने समग्र को सबसे पहले दो समूहों—शिक्षित तथा अशिक्षित—में विभक्त कर दिया। तदोपरान्त दोनों ही समूहों से निदर्शन किया जायगा।

(ई) सोद्देश्य निदर्शन (Purposive Sampling)

निदर्शन को व्यावहारिक तथा सुविधाजनक बनाने हेतु इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत समग्र के कुछ अंशों को लेकर उनसे ही निदर्शन किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं तो हम सम्पूर्ण राष्ट्र से निदर्शन न लेकर राष्ट्र के दो-चार राज्यों से ही निदर्शन ले सकते हैं।

(उ) आकस्मिक निदर्शन

यह निदर्शन इसलिए लिये जाते हैं क्योंकि वे अत्यन्त सुविधाजनक रूप में उपलब्ध होते हैं। यह समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकता है और नहीं भी कर सकता है।

## आवृत्ति वितरण
## (Frequency Distribution)

समग्र से अथवा निदर्शन से तथ्य या प्रदत्त संग्रह कर लेने के उपरान्त उन्हें नियमित तथा व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। अव्यवस्थित

1. "........it is selection of cases from the population in such a manner that every individual in the population has an equal chance of being chosen. The selection of any one individual is also in no way tied to the selection of any other". —Guilford, *op. cit.*, p. 156.

११

# निदर्शन तथा आवृत्ति-वितरण
**(Sampling and Frequency Distribution)**

## निदर्शन
**(Sampling)**

वर्तमान समय में अनुसंधानकर्ता अथवा शिक्षक के लिए यह संभव नहीं है कि वह अपने अनुसंधान अथवा खोज के लिए सभी व्यक्तियों या वस्तुओं को अपना विषय बनाये। समग्र (Universe) का अध्ययन करना प्रायः असम्भव है। उदाहरण के लिए, यदि अनुसंधानकर्ता किशोरावस्था के युवकों की रुचियों का पता लगाना चाहता है तो अध्ययन के लिए सभी किशोर समग्र (Universe or population) कहलायेगा।[1] किन्तु वह ऐसा नहीं कर पायेगा। उसे इस समग्र में से कुछ ऐसे किशोर ले लेने पड़ेंगे जो समग्र का सही-सही प्रतिनिधित्व कर सकें। समग्र में से कुछ ऐसे अंशों का चयन कर लेना जो समग्र का प्रतिनिधित्व कर सके, निदर्शन कहलाता है। निदर्शन के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों का विवेचन सांख्यिकी में किया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि समग्र अत्यन्त छोटा होता है, तो उसमें से निदर्शन का छांटना व्यावहारिक नहीं होता है। जब हम समग्र की विवेचना करते हैं तो वह सांख्यिकी न कहलाकर पैरामीटर कहलाता है। संक्षेप में सांख्यिकी निदर्शन में लागू होती है जबकि पैरामीटर समग्र में लागू होता है।

### निदर्शन-विधियाँ

निदर्शन करने की कई विधियाँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नांकित हैं :

---

1. "Population (universe) includes all sets of individuals, objects or reactions that can be described as having a unique pattern of qualities."—Guilford, J. P. : *Fundamental Statistics in Psychology and Education*, Mc Graw Hill, N. Y.

(अ) दैव निदर्शन (Random Sampling)

यदि समग्र में से प्रत्येक व्यक्ति, तथ्य तथा घटना के चयन करने के समान अवसर होते हैं, एक चुना गया तथ्य दूसरे के चयन पर प्रभाव नहीं डालता है और इन आधारों पर जब निदर्शन किया जाता है तो वह दैव निदर्शन कहलाता है।[1] सिक्के को उछालना, लाटरी आदि में इसी का प्रयोग किया जाता है। दैव निदर्शन दो प्रकार का होता है—नियमित दैव निदर्शन तथा शुद्ध दैव निदर्शन।

(आ) पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sampling)

इस प्रकार के निदर्शन में एक पूर्व नियोजित तथा नियमित त्रुटि होती है। इस विधि में कुछ तथ्यों को चुने जाने के अन्य तथ्यों की अपेक्षा अधिक अच्छे अवसर प्राप्त होते हैं।

(इ) स्तरित निदर्शन (Stratified Sampling)

इस प्रकार की विधि के अन्तर्गत सबसे पहले समग्र को कई समूहों में विभक्त कर लिया जाता है और फिर प्रत्येक समूह से दैव निदर्शन किया जाता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं। हमने अपने समग्र को सबसे पहले दो समूहों—शिक्षित तथा अशिक्षित—में विभक्त कर दिया। तदोपरान्त दोनों ही समूहों से निदर्शन किया जायगा।

(ई) सोद्देश्य निदर्शन (Purposive Sampling)

निदर्शन को व्यावहारिक तथा सुविधाजनक बनाने हेतु इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत समग्र के कुछ अशों को लेकर उनसे ही निदर्शन किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं तो हम सम्पूर्ण राष्ट्र से निदर्शन न लेकर राष्ट्र के दो-चार राज्यों से ही निदर्शन ले सकते हैं।

(उ) आकस्मिक निदर्शन

यह निदर्शन इसलिए लिये जाते हैं क्योंकि वे अत्यन्त सुविधाजनक रूप से उपलब्ध होते हैं। यह समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकता है और नहीं भी कर सकता है।

## आवृत्ति वितरण
### (Frequency Distribution)

समग्र में अथवा निदर्शन से तथ्य या प्रदत्त संग्रह कर लेने के उपरान्त उन्हें नियमित तथा व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। अव्यवस्थित

1. "......It is selection of cases from the population in such a manner that every individual in the population has an equal chance of being chosen. The selection of any one individual is also in no way tied to the selection of any other". —Guilford, *op. cit.*, p. 156.

११

# निदर्शन तथा आवृत्ति-वितरण

**(Sampling and Frequency Distribution)**

## निदर्शन

**(Sampling)**

वर्तमान समय में अनुसंधानकर्त्ता अथवा शिक्षक के लिए यह संभव नहीं कि वह अपने अनुसंधान अथवा खोज के लिए सभी व्यक्तियों या वस्तुओं को अपना विषय बनाये। समग्र (Universe) का अध्ययन करना प्राय असंभव है। उदाहरण के लिए, यदि अनुसंधानकर्त्ता किशोरावस्था के युवकों की रुचियों का पता लगाना चाहता है तो अध्ययन के लिए सभी किशोर समग्र (Universe or population) कहलायेगा।[1] किन्तु वह ऐसा नहीं कर पायेगा। उसे इस समग्र में से कुछ ऐसे किशोर ले लेने पड़ेंगे जो समग्र का सही-सही प्रतिनिधित्व कर सकें। समग्र में से कुछ ऐसे अंशों का चयन कर लेना जो समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें, निदर्शन कहलाता है। निदर्शन के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों का विवेचन सांख्यिकी में किया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि समग्र अत्यन्त छोटा होता है, तो उसमें से निदर्शन का छाँटना व्यावहारिक नहीं होता है। जब हम समग्र की विवेचना करते हैं तो वह सांख्यिकी न कहलाकर पैरामीटर कहलाता है। संक्षेप में सांख्यिकी निदर्शन में लागू होती है जबकि पैरामीटर समग्र में लागू होता है।

### निदर्शन-विधियाँ

निदर्शन करने की कई विधियाँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नांकित हैं :

---

1. "Population (universe) includes all sets of individuals, objects or reactions that can be described as having a unique pattern of qualities."—Guilford, J. P. : *Fundamental Statistics in Psychology and Education,* Mc Graw Hill, N. Y.

(अ) दैव निदर्शन (Random Sampling)

यदि समग्र में से प्रत्येक व्यक्ति, तथ्य तथा घटना के चयन करने के समान अवसर होते हैं, एक चुना गया तथ्य दूसरे के चयन पर प्रभाव नहीं डालता है और इन आधारों पर जब निदर्शन किया जाता है तो वह दैव निदर्शन कहलाता है।[1] सिक्के को उछालना, लाटरी आदि में इसी का प्रयोग किया जाता है। दैव निदर्शन दो प्रकार का होता है—नियमित दैव निदर्शन तथा शुद्ध दैव निदर्शन।

(आ) पक्षपातपूर्ण निदर्शन (Biased Sampling)

इस प्रकार के निदर्शन में एक पूर्व नियोजित तथा नियमित त्रुटि होती है। इस विधि में कुछ तथ्यों को चुने जाने के अन्य तथ्यों की अपेक्षा अधिक अच्छे अवसर प्राप्त होते हैं।

(इ) स्तरित निदर्शन (Stratified Sampling)

इस प्रकार की विधि के अन्तर्गत सबसे पहले समग्र को कई समूहों में विभक्त कर लिया जाता है और फिर प्रत्येक समूह से दैव निदर्शन किया जाता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं। हमने अपने समग्र को सबसे पहले दो समूहों—शिक्षित तथा अशिक्षित—में विभक्त कर दिया। तदोपरान्त दोनों ही समूहों से निदर्शन किया जायगा।

(ई) सोद्देश्य निदर्शन (Purposive Sampling)

निदर्शन को व्यावहारिक तथा सुविधाजनक बनाने हेतु इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत समग्र के कुछ अंशों को लेकर उनसे ही निदर्शन किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं तो हम सम्पूर्ण राष्ट्र से निदर्शन न लेकर राष्ट्र के दो-चार राज्यों में ही निदर्शन ले सकते हैं।

(उ) आकस्मिक निदर्शन

यह निदर्शन इसलिए लिये जाते हैं क्योंकि ये अत्यन्त सुविधाजनक रूप से उपलब्ध होते हैं। यह समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकता है और नहीं भी कर सकता है।

## आवृत्ति वितरण
## (Frequency Distribution)

समग्र में अथवा निदर्शन में तथ्य या प्रदत्त संग्रह कर लेने के उपरान्त उन्हें नियमित तथा व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। अव्यवस्थित

---

1. "........it is selection of cases from the population in such a manner that every individual in the population has an equal chance of being chosen. The selection of any one individual is also in no way tied to the selection of any other".
—Guilford, *op. cit.*, p. 156.

सारणी २

| वर्गान्तर | चिह्नांकन | आवृत्तियाँ |
| --- | --- | --- |
| ५५—५९ | । | १ |
| ५०—५४ | । | १ |
| ४५—४९ | ।।। | ३ |
| ४०—४४ | ।।।। | ४ |
| ३५—३९ | ~~।।।।~~ । | ६ |
| ३०—३४ | ~~।।।।~~ ।। | ७ |
| २५—२९ | ~~।।।।~~ ~~।।।।~~ ।। | १२ |
| २०—२४ | ~~।।।।~~ । | ६ |
| १५—१९ | ~~।।।।~~ ।।। | ८ |
| १०—१४ | ।। | २ |

योग=५०

### वास्तविक वर्गान्तर

ऊपर की सारणी में हमने ५ के वर्ग-विस्तार के १० वर्ग बनाये हैं। इसकी विवेचना के लिए हम प्रथम वर्गान्तर (१०—१४) को लेते हैं।

ऊपर के रेखाचित्र में क ख रेखा पर प्रदत्त १०, ११, १२, १३ तथा १४ को ५ वर्गों में प्रदर्शित किया गया है। प्रथम वर्ग को देखिए। यह १० का वर्ग है, परन्तु क्या यह १० से ही प्रारम्भ होता है ? नहीं, १० का वर्ग वास्तव में ९·५ से प्रारम्भ होता है। इसी प्रकार अन्तिम वर्ग १४ पर समाप्त न होकर १४·५ पर होता है। इस प्रकार हमारा १०—१४ का वर्ग वास्तविक रूप से ९·५ से लेकर १४·५ तक के प्रदत्तों तक विस्तारित है। यही तथ्य वर्गों के साथ लागू होता है। अब हम यह सकते हैं कि ऊपर की सारणी के सभी वर्ग निम्न संख्याओं तक फैले हुए हैं:

सारणी ३

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ५४·५—५९·५ | १ |
| ४९·५—५४·५ | १ |
| ४४·५—४९·५ | ३ |
| ३९·५—४४·५ | ४ |
| ३४·५—३९·५ | ६ |
| २९·५—३४·५ | ७ |
| २४·५—२९·५ | १२ |
| १९·५—२४·५ | ६ |
| १४·५—१९·५ | ८ |
| ९·५—१४·५ | २ |

N=५०

यह वर्गान्तर अन्य प्रकार के वर्गान्तरों से कहीं अधिक वैज्ञानिक है।

### मध्य बिन्दु

ऊपर दी गई सारणी २ को समावेशित प्रदत्त सारणी के नाम से पुकारते हैं। इस सारणी में प्रत्येक वर्ग की उच्चतम एव न्यूनतम सीमा वाले अङ्क भी उसी

मे रखे जाते हैं। सारणी ३ को अपवर्जीय प्रदत्त सारिणी (Exclusive table) नाम से पुकारते हैं। सांख्यिकीय गणना करने के लिए प्रत्येक वर्ग का मध्य बिन्दु जानने की आवश्यकता पड़ती है।

समावेशिक प्रदत्त सारणी के वर्गों के लिए जब मध्य बिन्दु निकालना होता तो वर्ग की निम्न सीमा मे उच्च सीमा से निम्न सीमा घटाकर दो का भाग देने से जो भी संख्या आए उसे जोडकर मध्य बिन्दु ज्ञात कर लेते हैं। उदाहरणस्वरूप, यदि हम १०—१४ वर्ग का मध्य बिन्दु निकालें, तो—

$$\text{मध्य बिन्दु} = १० + \frac{१४ - १०}{२}$$

$$= १० + २$$

$$= १२$$

अपवर्जीय प्रदत्त सारणी के लिए भी मध्य बिन्दु इसी प्रकार निकालेंगे—

$$\text{मध्य बिन्दु} = ९.५ + \frac{१४.५ - ९.५}{२}$$

$$= ९.५ + २.५$$

$$= १२$$

इस प्रकार हम देखते हैं कि सारणी चाहे अपवर्जीय हो या समावेशिक, मध्य बिन्दु पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

# केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक
## (MEASURES OF CENTRAL TENDENCY)

आवृत्ति वितरण का कार्य पूरा हो जाने के उपरान्त आवृत्ति वितरण की केन्द्रीय प्रवृत्ति को ज्ञात करना है। केन्द्रीय प्रवृत्ति से हमारा तात्पर्य उस संख्या से है जिसके चारो ओर समूह के सभी अंक छाये रहते हैं। साधारण भाषा में केन्द्रीय प्रवृत्तियों को हम माध्य (Averages) कह सकते हैं, किन्तु व्यवहार में केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ औसत या माध्य से कहीं अधिक वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक होती हैं। केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ समस्त समूह का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती हैं। केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ यह भी बताती हैं कि सम्पूर्ण समूह का निष्पादन (Performance) कितना है, है तथा किस दशा में है। केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ दो या दो से अधिक समूहों के निष्पा का तुलनात्मक अध्ययन भी करती हैं। एक साधारण औसत इन कार्यों को करता है। साधारणतया शिक्षा और मनोविज्ञान में तीन केन्द्रीय प्रवृत्तियों—मध्य (Mean), माध्यमिका (Median) तथा बहुलाक (Mode) का प्रयोग जाता फलत: प्रस्तुत पुस्तक में इन्हीं तीन केन्द्रीय प्रवृत्तियों की चर्चा की जायगी।

### १ मध्यक
### (Mean)[1]

मध्यक अविभाजित प्रदत्त में समस्त इकाइयों के मूल्य को इकाइयों की सर से भाग देने पर प्राप्त होता है। विभिन्न प्रकार के प्रदत्त समूहों में मध्यक निकाल की निम्नांकित विधियाँ है

**(अ) अवर्गित प्रदत्त समूह (Ungrouped Data)**

जब प्रदत्त समूह अवर्गित होता है तो उसका मध्यक निकालना बड़ा सरल है

---

1. "The mean of a distribu. ... is the point o the score scale corresponding ... ( b their number."

इस प्रकार के समूह का जब मध्यक निकालना होता है तो समूह के सभी प्रदत्तों को जोड़कर जोड़ में समूह के प्रदत्तों की संख्या का भाग लगा दिया जाता है और भाग देने पर जो कुछ प्राप्त होता है वही मध्यक कहलाता है। उदाहरण के लिए, यदि दस विद्यार्थियों ने एक परीक्षा में क्रमश १०, १४, १६, १८, १०, १४ १८, २२, २०, १६ अंक प्राप्त किये। इनका मध्यक निकालने हेतु हम सर्वप्रथम इनका योग करेंगे और योग में १० का भाग लगा देंगे क्योंकि दस ही छात्र हैं। अत हमारा मध्यक $\frac{१५८}{१०}$=१५·८ हुआ। इस प्रकार के प्रदत्त समूह का मध्यक निकालने के लिए निम्नांकित सूत्र काम में लाया जाता है

सूत्र— $M=\frac{\Sigma x}{N}$ ··· (सूत्र न० १)

जिसमें, M=मध्यक

$\Sigma x$=समस्त समूह प्रदत्तों का योग।

N=समूह की इकाइयों की संख्या।

(आ) अवर्गित आवृत्तियुक्त प्रदत्त (*Ungrouped Data with Frequencies*)

कभी-कभी ऐसी सारणी भी देखने को मिलती हैं जो अवर्गित तो होती हैं किन्तु उनकी आवृत्तियाँ भी होती हैं। इस प्रकार की सारणी का मध्यक निकालने के लिए हम प्रत्येक प्रदत्त का उसकी आवृत्ति से गुणा कर लेते हैं और गुणा करके आई समस्त संख्याओं को जोड़कर जोड़ में आवृत्ति-योग का भाग लगा देते हैं। जैसे—

सारणी ४

| प्रदत्त (x) | आवृत्तियाँ (f) | प्रदत्त × आवृत्तियाँ (fx) |
|---|---|---|
| ६ | २ | १२ |
| ८ | ३ | २४ |
| १० | ५ | ५० |
| १२ | २ | २४ |
| १४ | ३ | ४२ |
| | N=१५ | ΣFx=१५२ |

$$M=\frac{१५२}{१५}=१०\ १३$$

इस प्रकार की सारणी के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं -

$M=\frac{\Sigma fx}{N}$ ··· (सूत्र न० २)

जिसमें,

$$M = \text{मध्यक}$$
$$\Sigma fx = \text{प्रदत्त एवं आवृत्ति के गुणनफलों का योग}$$
$$N = \text{आवृत्तियों का जोड़}$$

### ३ वर्गित प्रदत्त (Grouped Data)

वर्गित प्रदत्त वे प्रदत्त है जो किन्हीं वर्गों में विभक्त रहते हैं। वर्गित प्रदत्त हमारे सामने दो रूपों में आ सकते हैं—वे शृंखलाबद्ध हो सकते हैं, अथवा अशृंखलाबद्ध रूप में।

*(i) अशृंखलाबद्ध वर्गित प्रदत्त (Discrete Grouped Data)*—अशृंखलाबद्ध वर्गित प्रदत्त माना गए है जिसके वर्गों में कोई विशेष व्यवस्था तथा शृंखला नहीं पाई जाती है। इनमें निरन्तरता का भी अभाव होता है। इस प्रकार के प्रदत्तों का मध्यक निकालने के लिए सर्वप्रथम प्रत्येक वर्ग का हमें मध्यबिन्दु ज्ञात करना पड़ता है। फिर मध्यबिन्दु और आवृत्ति का गुणा करके सभी गुणनफलों के योग में आवृत्तियों के योग का भाग लगा देते हैं। इसके लिए हम वही सूत्र काम में लाते हैं जो हम अवर्गित आवृत्तियुक्त प्रदत्तों के लिए $\left( M = \frac{\Sigma fx}{N} \right)$ लाते हैं। जैसे—

सारणी ५

| वर्गान्तर | मध्यबिन्दु (x) | आवृत्तियाँ (f) | म० बि० × आवृत्तियाँ (fx) |
|---|---|---|---|
| १७५—१७९ | १७७ | ८ | १४१६ |
| १६५—१६९ | १६७ | ६ | १००२ |
| १५५—१५९ | १५७ | ४ | ६२८ |
| १५०—१५४ | १५२ | २ | ३०४ |
| १४०—१४४ | १४२ | १ | १४२ |
| | | N=२१ | Σfx=३४९२ |

$$M = \frac{३४९२}{२१}$$
$$= १६६\cdot३$$

(ii) शृंखलाबद्ध वर्गित प्रदत्त—ये वे प्रदत्त हैं जिनके वर्गों में शृंखलाबद्धता, तारतम्यता तथा निरन्तरता पाई जाती है। इसके दो पड़ोसी वर्गों में कोई रिक्त स्थान नहीं होता है। निम्न वर्ग की उच्चतम सीमा उच्च वर्ग की न्यूनतम सीमा होती है।

$$= ३७ - \frac{७४ \times ५}{५०}$$

$$= २९ ६$$

उपर्युक्त प्रश्न में ३७ को काल्पनिक मध्यक माना है। ३७ को प्रत्येक मध्य विन्दु में घटाकर विचलन ज्ञात किया गया है। इस विचलन में ५ (वर्गान्तर प्रसार) से भाग दिया गया है, जिसके परिणामस्वरूप dx ज्ञात किया गया है। यदि विचलन में वर्गान्तर प्रसार का भाग न दें तब सूत्र के अन्त में से वर्गान्तर प्रसार का गुणा हटा देना पड़ेगा, किन्तु उस अवस्था में कलाकन (Calculation) अधिक करने पड़ेंगे और हमें dx के स्थान पर केवल d ही प्राप्त होगा और हमारा सूत्र निम्न प्रकार से होगा। इसमें उत्तर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा

$$M = AM \pm \frac{\Sigma fd}{N} \quad \text{(सूत्र न० ६)}$$

संक्षिप्त विधि से मध्यक ज्ञात करते समय निम्नांकित पदों (Steps) की आवश्यकता पड़ती है

(i) किसी मध्य बिन्दु या किसी अन्य संख्या को काल्पनिक मध्यक मान लीजिए। बीच के मध्यबिन्दु को काल्पनिक मध्यक मानना सदैव सुविधाजनक रहता है।

(ii) काल्पनिक मध्यक के सामने ० रखिए और यदि ऊपर के वर्ग बड़े हैं तो ० से ऊपर क्रमश +१, +२, +३ रखिए और इसी प्रकार नीचे की ओर क्रमश. −१, −२, −३ रखिए। इस प्रकार dx ज्ञात कीजिए।

(iii) आवृत्ति तथा काल्पनिक मध्यक से विचलन (dx) का गुणा करके fdx ज्ञात कीजिए।

(iv) fdx की धनात्मक तथा ऋणात्मक संख्याओं के पृथक्-पृथक् जोड़ करके उनका अन्तर ज्ञात कीजिए। अन्तर के साथ धनात्मक तथा ऋणात्मक चिन्ह रहेगा।

(v) इस अन्तर में N से भाग देकर वर्ग-प्रसार से गुणा कर दीजिए और गुणनफल ज्ञात कीजिए।

(vi) यदि अन्तर धनात्मक था, तो इस गुणनफल को काल्पनिक मध्यक में जोड़ दीजिए और यदि ऋणात्मक हो तो घटाकर वास्तविक मध्यक ज्ञात कर लीजिए।

## २ मध्यांक
## (Median)

मध्यांक से तात्पर्य वितरण के मध्य बिन्दु से है। मध्यांक से दोनों तरफ

निकालने के अन्य भी तरीके प्रयोग होते हैं। मध्यांक निकालने के लिए भी हमें दो तरह की असंगठित प्रदत्त मालाओं व दो विभिन्न स्थितियाँ अपनानी पड़ती हैं।

(अ) असंगठित प्रदत्त माला

मध्यांक निकालने के असंगठित प्रदत्त मालाएं सम या विषम हो सकती हैं। सम प्रदत्त माला वह है जिसके प्रदत्तों की इकाइयों में दो का पूरा-पूरा भाग चला जाता है और विषम प्रदत्त माला वह है जिसकी इकाइयों में दो का पूरा-पूरा भाग नहीं जाता है।

प्रदत्त माला चाहे सम हो या विषम, उसकी संख्याओं को आरोहण क्रम में रखना पड़ता है। विषम प्रदत्त माला का मध्यांक निकालने समय हम प्रदत्त माला के बीच का अंक मान कर लेते हैं। जैसे, १८, ३१, ३६, ४४, ५८, ६०, ६३ का मध्यांक ४४ है क्योंकि इसके दायें बायें तीन-तीन संख्याएँ हैं।

यदि प्रदत्त माला (सम) हो तो बीच वाली दो संख्या को जोड़कर दो का भाग लगा देते हैं। जैसे, १८, ३१, ३६, ४४, ५८, ६० कुल ६ संख्याएँ हैं। इसका मध्यांक निकालने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जायगा

$$Mdn = \frac{N+1}{२} \text{ th number} \qquad \cdots (\text{सूत्र नं० ७})$$

$$= \frac{६+१}{२} = ३.५\text{वीं संख्या}$$ (तीसरी और चौथी संख्या के बीच की संख्या)

उपर्युक्त प्रदत्त माला में मध्यांक ४० है। सम प्रदत्त माला में सीधे से मध्यांक निकालने के लिए बीच की दो संख्याओं को जोड़कर दो से भाग देने पर भी मध्यांक प्राप्त होता है। ऊपर की प्रदत्त माला में ३६ तथा ४४ बीच के प्रदत्त हैं

अतः $\frac{३६+४४}{२} = ४०$ हमारा मध्यांक हुआ।

(आ) वर्गित प्रदत्त माला

वर्गित प्रदत्त माला का मध्यांक निकालने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$Mdn = l_1 + \frac{\left(\frac{N}{२} - f\right)}{fm} \times i \qquad \cdots (\text{सूत्र नं० ८})$$

जिसमें,

$l_1$ = मध्यांक वर्ग की निम्नतम सीमा

N = आवृत्तियों का योग

f=मध्यांक वर्ग से नीचे आवृत्तियों का योग
fm=मध्यांक वर्ग की आवृत्ति
i=वर्गान्तर प्रसार

एक उदाहरण से इसे स्पष्ट किया जा सकता है।

| वर्गान्तर | आवृत्ति f | सचयी आवृत्ति Cf |
|---|---|---|
| ५४·५—५९·५ | १ | ५० |
| ४९·५—५४·५ | १ | ४९ |
| ४४·५—४९·५ | ३ | ४८ |
| ३९·५—४४·५ | ४ | ४५ |
| ३४·५—३९·५ | ६ | ४१ |
| २९·५—३४·५ | ७ | ३५ |
| २४·५—२९·५ | १२ | २८ |
| १९·५—२४·५ | ६ | १६ |
| १४·५—१९·५ | ८ | १० |
| ९·५—१४·५ | २ | २ |
| | N=५० | |

$$\text{Mdn}=\text{२४·५}+\frac{\frac{\text{५०}}{\text{२}}-\text{१६}}{\text{१२}}\times\text{५}$$

$$=\text{२४·५}+\frac{\text{२५}-\text{१०}}{\text{१२}}\times\text{५}$$

$$=\text{२८·२५}$$

स्पष्टीकरण—मध्यांक निकालने के लिए सर्वप्रथम आवृत्तियों को सचयी आवृत्तियों में परिवर्तित करना पड़ता है। आवृत्ति में दो से भाग देकर बीच की आवृत्ति ज्ञात कर लेते हैं। इसी आवृत्ति के सामने के वर्ग में मध्यांक होता है, अतः इस वर्ग को हम मध्यांक वर्ग कहते है। उपर्युक्त प्रदत्त माला में $\frac{N}{2}$=२५ है। २५ सख्या १६ से अधिक है और २८ से कम, अतः २४·५—२९·५ हमारा मध्यांक वर्ग है। १९·५—२४·५ की उच्चतम सीमा तक केवल १६ आवृत्तियाँ ही आती हैं जबकि हमें २५वीं आवृत्ति तक पहुँचना है। यह २४·५ से कहीं ऊपर ही होगी किन्तु २९·५ से नीचे होगी क्योंकि इस बिन्दु तक २८ आवृत्तियाँ आ जाती हैं। हमारा मध्यांक २४·५ से २९·५ के कहीं बीच में है। २४·५ तक १६ आवृत्तियाँ आ जाती हैं, २५वीं आवृत्ति तक पहुँचने के लिए हमे ९ (२५—१६=९) आवृत्तियाँ लेनी हैं और देखना है कि २४·५—२९·५ वर्ग में ९ आवृत्तियाँ किस बिन्दु पर आती हैं। २४·५—२९·५

जब हमें मध्यक तथा मध्यांक ज्ञात होते हैं, तब हम इनकी सहायता से भी बहुलांक ज्ञात कर सकते हैं। इस अवस्था में आया बहुलांक सूत्र नम्बर ९ से निकले बहुलांक से भिन्न होता है। किन्तु दोनों ही उत्तर सही माने जाते हैं। मध्यक तथा मध्यांक ज्ञात होने पर हम निम्न सूत्र से बहुलांक ज्ञात करते हैं

Mode=3 Median—2 Mean ··· (सूत्र नं० १०)

जैसे, सारणी ३ का मध्यांक २८.२५ तथा मध्यक २६.६ है, तो बहुलांक हुआ—

Mode=३×२८.२५—२×२६.६

=८४.७५—५३.२

=३१.५५

## मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक के प्रयोग

मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक तीनों ही माध्य के रूप हैं। इस अवस्था में शिक्षा तथा मनोविज्ञान के छात्रों के लिए यह समस्या पैदा हो सकती है कि इनका प्रयोग कब करना चाहिए। नीचे उन परिस्थितियों का वर्णन है, जिनमें माध्य के इन तीन विभिन्न प्रकारों का प्रयोग करना चाहिए।

(अ) मध्यक का प्रयोग

(i) मध्यक माध्य का अत्यन्त शुद्ध तथा सही माप करता है। अतः जब हमें अत्यन्त शुद्ध तथा सही माध्य मालूम करना हो तो उस समय मध्यक का प्रयोग करना पड़ता है।

(ii) जब आवृत्ति किसी एक ही क्षेत्र में सीमित न होकर सम्पूर्ण वर्गान्तरों पर समान रूप से फैली हो।

(iii) जब अन्य सांख्यिकीय प्रक्रियाएँ, जैसे—विचलन, सह-सम्बन्ध आदि का करना आवश्यक हो।

(iv) जब दो वितरणों के माध्यों की तुलना करनी हो।

(आ) मध्यांक का प्रयोग

(i) जब समय तथा श्रम की मात्रा सीमित हो।

(ii) जब आवृत्तियों के वितरण विषमता लिये हो।

(iii) जब आवृत्ति-वितरण अपूर्ण हो।

(iv) जब बिना वर्गीकरण के प्रश्नों की तुलना करना सम्भव न हो।

(इ) बहुलांक का प्रयोग

(i) जब अत्यन्त शुद्ध तथा सही माध्य की आवश्यकता न हो।

(ii) जब समय तथा श्रम का बहुत अधिक अभाव हो।

(iii) जब हम केवल निरीक्षण द्वारा ही केन्द्रीय प्रवृत्ति का आभास करना चाहें।

(iv) जब हम सर्वाधिक प्रतिनिधित्व को ज्ञात करना चाहें।

(v) जब उच्चतम तथा निम्नतम सीमा के अभाव को महत्त्व न दिया जाता हो।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रदत्त मात्राओं के मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञात

| आवृत्तियाँ |
|---|
| ३ |
| ६ |
| ८ |
| ९ |
| ७ |
| १० |
| ७ |
| N=५० |

| (आ) वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ५५—५९ | १४ |
| ५०—५४ | २० |
| ४५—४९ | १८ |
| ४०—४४ | १७ |
| ३५—३९ | ९ |
| ३०—३४ | १५ |
| २५—२९ | ७ |
| | N=१०० |

तथा [illegible] बताइए :

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | ६ |
| ८०—८९ | [illegible] |
| ७०—७९ | १० |
| ६०—६९ | १२ |
| ५०—५९ | १४ |
| ४०—४९ | १४ |
| ३०—३९ | १० |
| २०—२९ | [illegible] |
| १०—१९ | ७ |
| | N=९० |

३. मध्याक ज्ञात कीजिए :

(अ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | २ |
| ८०—८९ | १ |
| ७०—७९ | ० |
| ६०—६९ | ० |
| ५०—५९ | २ |
| ४०—४९ | ० |
| ३०—३९ | ० |
| २०—२९ | ३ |
| १०—१९ | २ |
| | N=१० |

(आ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | १० |
| ८०—८९ | ११ |
| ७०—७९ | १२ |
| ६०—६९ | १७ |
| ५०—५९ | ० |
| ४०—४९ | १८ |
| ३०—३९ | १२ |
| २०—२९ | १२ |
| १०—१९ | ८ |
| | N=१०० |

४.

| A | B | C | D | E | F | G | H | I | J |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १८ | ९६ | ८ | ५५ | ६९ | ११ | ७१ | २७ | ४७ | ९९ |
| २२ | ९२ | ९ | ४५ | २९ | ३३ | ६३ | ५७ | ५८ | २६ |
| २६ | ८९ | ७ | ३५ | ३१ | ४१ | ८९ | ११ | ५२ | २८ |
| २८ | ७९ | ६ | ६५ | ४१ | ११ | ४७ | ३९ | ११ | ६९ |
| २१ | ९९ | १२ | २५ | ३२ | २१ | १९ | ४१ | १८ | ६३ |

(i) उपर्युक्त प्रदत्तो का मध्यक निकालिए।

(ii) कालम B के प्रदत्तो का मध्यक ज्ञात कीजिए।

(iii) कालम C के प्रदत्तो का मध्यक ज्ञात कीजिए।

(iv) कालम B के प्रदत्तो के मध्यक की तुलना सम्पूर्ण प्रदत्तों के मध्यक से कीजिए।

(v) कालम C के प्रदत्तो के मध्यक की तुलना सम्पूर्ण के मध्यक से कीजिए।

(vi) सम्पूर्ण से १० प्रतिशत का दैव निदर्शन कीजिए और मध्यक ज्ञात कीजिए।

(vii) उपर्युक्त सारणी से १० प्रतिशत स्तरित निदर्शन कीजिए और मध्यक निकालकर सम्पूर्ण के मध्यक से तुलना कीजिए।

(इ) बहुलाक का प्रयोग

(i) जब अत्यन्त शुद्ध तथा सही माध्य की आवश्यकता न हो।

(ii) जब समय तथा श्रम का बहुत अधिक अभाव हो।

(iii) जब हम केवल निरीक्षण द्वारा ही केन्द्रीय प्रवृत्ति का आभास करना चाहें।

(iv) जब हम सर्वाधिक प्रतिनिधित्व को ज्ञात करना चाहें।

(v) जब उच्चतम तथा निम्नतम सीमा के अभाव को महत्त्व न दिया जाना हो।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१ निम्नांकित प्रदत्त मालाओं के मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञात कीजिए :

(अ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ६०—६४ | ३ |
| ५५—५९ | ६ |
| ५०—५४ | ८ |
| ४५—४९ | ९ |
| ४०—४४ | ७ |
| ३५—३९ | १० |
| ३०—३४ | ७ |
| | N=५० |

(आ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ५५—५९ | १४ |
| ५०—५४ | २० |
| ४५—४९ | १८ |
| ४०—४४ | १७ |
| ३५—३९ | ९ |
| ३०—३४ | १५ |
| २५—२९ | ७ |
| | N=१०० |

२. मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक बताइए :

(अ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ४०—४४ | ८ |
| ३५—३९ | १२ |
| ३०—३४ | १८ |
| २५—२९ | ६ |
| २०—२४ | ४ |
| १५—१९ | २ |
| | N=५० |

(आ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | ६ |
| ८०—८९ | ८ |
| ७०—७९ | १० |
| ६०—६९ | १२ |
| ५०—५९ | १४ |
| ४०—४९ | १४ |
| ३०—३९ | १० |
| २०—२९ | [illegible] |
| १०—१९ | ७ |
| | N=९० |

३ मध्यांक ज्ञात कीजिए :

(अ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | २ |
| ८०—८९ | १ |
| ७०—७९ | ० |
| ६०—६९ | ० |
| ५०—५९ | २ |
| ४०—४९ | ० |
| ३०—३९ | ० |
| २०—२९ | ३ |
| १०—१९ | २ |
| | N=१० |

(आ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | १० |
| ८०—८९ | ११ |
| ७०—७९ | १२ |
| ६०—६९ | १७ |
| ५०—५९ | ० |
| ४०—४९ | १८ |
| ३०—३९ | १२ |
| २०—२९ | १२ |
| १०—१९ | ८ |
| | N=१०० |

४

| A | B | C | D | E | F | G | H | I | J |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १८ | ९६ | ८ | ५५ | ६९ | ११ | ७१ | २७ | ४७ | ९९ |
| २२ | ९२ | ९ | ४५ | २९ | ३३ | ६३ | ५७ | ५८ | २६ |
| २१ | ८९ | ७ | ३५ | ३१ | ४१ | ८९ | ११ | ५२ | २८ |
| २८ | ७९ | ६ | ६५ | ४१ | ११ | ४७ | ३९ | १३ | ६९ |
| २१ | ९१ | १२ | २५ | ३२ | २१ | १९ | ४१ | १८ | ६३ |

(i) उपर्युक्त प्रदत्तों का मध्यक निकालिए।

(ii) कालम B के प्रदत्तों का मध्यक ज्ञात कीजिए।

(iii) कालम C के प्रदत्तों का मध्यक ज्ञात कीजिए।

(iv) कालम B के प्रदत्तों के मध्यक की तुलना सम्पूर्ण प्रदत्तों के मध्यक से कीजिए।

(v) कालम C के प्रदत्तों के मध्यक की तुलना सम्पूर्ण के मध्यक से कीजिए।

(vi) सम्पूर्ण से १० प्रतिशत का दैव निदर्शन कीजिए और मध्यक ज्ञात कीजिए।

(vii) उपर्युक्त सारणी से १० प्रतिशत स्तरित निदर्शन कीजिए और मध्यक निकालकर सम्पूर्ण के मध्यक से तुलना कीजिए।

विचलन-माप की चार विधियाँ हैं

(i) प्रसार (Range)

(ii) चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

(iii) मध्यक विचलन (Mean Deviation)

(iv) प्रमाप विचलन (Standard Deviation)

१ प्रसार (Range)

प्रसार विचलन वितरण का विचलन ज्ञात करने की सबसे सरल विधि है। इस विधि के अन्तर्गत वितरण की सबसे छोटी तथा सबसे बड़ी संख्या ज्ञात करके उनके अन्तर को ज्ञात कर लेते हैं। यह अन्तर ही प्रसार विचलन होता है। ऊपर गणित में राम के अङ्कों का प्रसार विचलन १३५ है, क्योंकि राम के उच्चतम अंक १५० तथा निम्नतम १५ हैं। यह विधि अधिक सही तथा शुद्ध विचलन का ज्ञान नहीं कराती है।

२ चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

इस विधि से आवृत्ति वितरण के प्रथम तथा तृतीय चतुर्थकों का अन्तर ज्ञात करके उसे दो से विभाजित कर दिया जाता है। इसके लिए हम निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं :

$$Q=\frac{Q_3-Q_1}{२} \quad \cdots \text{(सूत्र नं० ११)}$$

$Q_3$ तथा $Q_1$ ज्ञात करने के लिए क्रमश निम्नांकित सूत्रों का प्रयोग किया जाता है :

$$Q_3=L_1\times\frac{\frac{N\times ३}{४}-f}{fm}\times i \quad \cdots \text{(सूत्र नं० १२)}$$

$$Q_1=L_1\times\frac{\frac{N}{४}-f}{fm}\times i \quad \cdots \text{(सूत्र नं० १३)}$$

उपर्युक्त दोनों ही सूत्रों के स्पष्टीकरण के लिए सूत्र नं० ८ का अध्ययन करें, क्योंकि चतुर्थक निकालने की भी वही विधि है जो मध्यांक निकालने की है। नीचे एक उदाहरण है :

सारणी ७

| प्राप्तांक | आवृत्ति | संचयी आवृत्ति |
|---|---|---|
| ६०—६४ | ३ | ५० |
| ५५—५९ | ६ | ४७ |
| ५०—५४ | ८ | ४१ |
| ४५—४९ | ९ | ३३ |
| ४०—४४ | ७ | २४ |
| ३५—३९ | १० | १७ |
| ३०—३४ | ७ | ७ |
| | N=५० | |

$Q_1 = ३९.५ + \frac{१२.५ - ७}{१०} \times ५$

$= ४२.२५$

$Q_3 = ४९.५ + \frac{३७.५ - ३३}{८} \times ५$

$= ५२.३१$

$Q = \frac{५२.३१ - ४२.२५}{२}$

$= ५.०३१२$

३. माध्य विचलन (Mean Deviation)

माध्य विचलन किसी भी केन्द्रीय प्रवृत्ति से ज्ञात किया जाता है किन्तु इसके लिए सामान्यतः मध्यक की सहायता ली जाती है। माध्य विचलन के लिए वास्तविक मध्यक से वितरण की सभी संख्याओं से अन्तर ज्ञात कर लिया जाता है। अन्तर ज्ञात करते समय धन तथा ऋण के चिह्नों का ध्यान नहीं रखा जाता है। इन अन्तर को आवृत्ति से गुणा करके समस्त गुणनफलों के योग को आवृत्ति के योग (N) से विभाजित करने पर माध्य विचलन आ जाता है। इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$Md = \frac{\Sigma fx}{N} \qquad \cdots \text{(सूत्र नं॰ १४)}$$

जिसमें, Md=माध्य विचलन

$\Sigma fx$=वास्तविक मध्यक से अन्तर का आवृत्तियों के साथ गुणनफलों का योग

N=कुल आवृत्तियों का योग

सारणी ३ के आधार पर (मध्यक २९.६)

| वर्गान्तर | मध्य बिन्दु M | आवृत्ति f | माध्य से विचलन x | आ × वि fx |
|---|---|---|---|---|
| ५४.५—५९.५ | ५७ | १ | २७.४ | २७.४ |
| ४९.५—५४.५ | ५२ | १ | २२.४ | २२.४ |
| ४४.५—४९.५ | ४७ | ३ | १७.४ | ५२.२ |
| ३९.५—४४.५ | ४२ | ४ | १२.४ | ४९.६ |
| ३४.५—३९.५ | ३७ | ६ | ७.४ | ४४.४ |
| २९.५—३४.५ | ३२ | ७ | २.४ | १६.८ |
| २४.५—२९.५ | २७ | १२ | २.६ | ३१.२ |
| १९.५—२४.५ | २२ | ६ | ७.६ | ४५.६ |
| १४.५—१९.५ | १७ | ८ | १२.६ | १००.८ |
| ९.५—१४.५ | १२ | ३ | १०.६ | ३५.२ |
| | | N = ५० | | Σfx = ४२५.६ |

$$Md = \frac{४२५.६}{५०}$$

$$= ८.५१२$$

## ४ प्रमाप विचलन
## (Standard Deviation)

विचलन ज्ञात करने का यह सर्वोत्तम मापक तथा विधि है। इसलिए इस मापक का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। गिल्फोर्ड ने प्रमाप विचलन की परिभाषा देते हुए लिखा है—'प्रमाप विचलन किसी श्रेणी के विभिन्न पदों के समान्तर मध्यक से विचलन के वर्गों के समान्तर मध्यक का वर्गमूल होता है।'[1]

प्रमाप विचलन को निकालने के लिए वर्गित तथा अवर्गित प्रदत्त मालाओं के लिए दो विभिन्न सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

(अ) अवर्गित प्रदत्त माला

अवर्गित प्रदत्त मालाओं से प्रमाप विचलन ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$S.D\ (\sigma) = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}} \quad \text{.. (सूत्र नं० १५)}$$

---

1. "Standard deviation is the square-root of the arithmetic mean of the squared deviation of measurements from their mean." Guilford, *'Fundamental Statistics in Psychology and Education'*, p 85.

जिसमे,  S D या ($\sigma$)=प्रमाप विचलन
$\sqrt{\ }$=वर्गमूल
$\Sigma$=योग
$d^2$=विचलन वर्ग
N=आवृत्ति योग

नीचे एक उदाहरण पर इस सूत्र को प्रयोग किया गया है

| अङ्क | वास्तविक मध्यक से विचलन d | विचलनों का वर्ग $d^2$ |
|---|---|---|
| ५ | १ | १ |
| २ | —२ | ४ |
| ४ | ० | ० |
| ६ | २ | ४ |
| ३ | —१ | १ |
| ४ | ० | ० |
| $\Sigma X$=२४ | | $\Sigma d^2$=१० |

N=६
Mean=४

$$S\ D.\ (\sigma)=\sqrt{\frac{१०}{६}}$$
=१ २९ लगभग

व्याख्या—अवर्गित प्रदत्त मालाओं का प्रमाप विचलन निकालने के लिए प्रदत्त माला का सर्वप्रथम मध्यक निकाल लिया जाता है, तदोपरान्त प्रत्येक प्रदत्त का वास्तविक मध्यक से अन्तर ज्ञात कर लिया जाता है। इन अन्तरों को विचलन (d) के नाम से पुकारा जाता है। विचलन ज्ञात होने के उपरान्त उनके वर्ग ज्ञात कर लिये जाते हैं। विचलन वर्गों के योग में कुल प्रदत्तों की संख्या (N) का भाग देकर भागफल का वर्गमूल निकाल लिया जाता है। यही प्रमाप विचलन होता है।

(आ) वर्गित प्रदत्त माला (Grouped Data)

वर्गित प्रदत्त माला से प्रमाप विचलन ज्ञात करने के लिए निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है

$$S\ D.\ (\sigma)=i\sqrt{\frac{\Sigma fx^2}{N}-\left(\frac{\Sigma fx}{N}\right)^2} \quad \text{... (सूत्र न० १६)}$$

जिसमे,  S D ($\sigma$)=प्रमाप विचलन
i=वर्ग विस्तार
$\Sigma fx^2$=आवृत्ति तथा विचलन वर्ग के गुणनफलों का योग।

$\Sigma fx$=आवृत्ति तथा विचलन के गुणनफलों का योग।

N=कुल संख्या।

नीचे एक उदाहरण प्रस्तुत है

| वर्गान्तर | म० वि० M | आवृत्ति f | विचलन d | आ०×वि fd | आ०×वि०² fd² |
|---|---|---|---|---|---|
| ५४.५—५९.५ | ५७ | १ | +५ | +५ | २५ |
| ४९.५—५४.५ | ५२ | १ | +४ | +४ | १६ |
| ४४.५—४९.५ | ४७ | ३ | +३ | +९ | २७ |
| ३९.५—४४.५ | ४२ | ४ | +२ | +८ | १६ |
| ३४.५—३९.५ | ३७ | ६ | +१ | +६ | ६ |
| २९.५—३४.५ | ३२ | ७ | ० | ०+३२ | ० |
| २४.५—२९.५ | २७ | १२ | —१ | —१२ | १२ |
| १९.५—२४.५ | २२ | ६ | —२ | —१२ | २४ |
| १४.५—१९.५ | १७ | ८ | —३ | —२४ | ७२ |
| ९.५—१४.५ | १२ | २ | —४ | —८ | ३२ |
| | | | | —५६ | |
| | N=५० | | | Σfd=—२४ | Σfd²=२३० |

$$\sigma = ५\sqrt{\frac{२३०}{५०} - \left(\frac{-२४}{५०}\right)^2}$$

$$= ५\sqrt{४.६ - (.४८)^2}$$

$$= ५\sqrt{४.६ - .२३०४}$$

$$= ५\sqrt{४.३६९६}$$

$$= ५ \times २.०९$$

$$= १०.४५ \text{ लगभग}$$

व्याख्या—मध्यक की गणना करने के लिए जिस प्रकार हम विचलन निकालते हैं, ठीक उसी विधि से विचलन निकालने के पश्चात् प्रत्येक विचलन को सामने वाली आवृत्ति से गुणा करके 'fd' ज्ञात कर लीजिए और 'fd' के प्रत्येक पद का उसके सामने वाले विचलन से ही पुनः गुणा करके 'fd²' ज्ञात कर लीजिए। इन दोनों कालमों के योग ही क्रमशः Σfd तथा Σfd² होंगे। संक्षेप में, प्रमाप विचलन के लिए निम्नांकित पदों की आवश्यकता पड़ती है :

(i) विचलन ज्ञात कीजिए।

(ii) विचलनों को उनकी आवृत्तियों से गुणा करके आ×वि ज्ञात कीजिए।

(iii) आ×वि का योग करके Σfd ज्ञान कीजिए।

(४) प्रमाप विचलन का प्रयोग —नीचे लिखी अवस्थाओ मे प्रमाप विचलन का प्रयोग किया जाता है

(अ) जब अत्यन्त अधिक शुद्ध तथा सही विचलन ज्ञात करना हो।

(आ) जब प्रदत्तो के छोर (Extremes) का सम्पूर्ण प्रदत्त माला पर उल्लेखनीय प्रभाव पड रहा हो।

(इ) जब अन्य सांख्यिकीय विधियो, जैसे सम्भावित त्रुटि, सह-सम्बन्ध आदि की गणना करनी हो।

(ई) जब प्रदत्तो की सामान्य विभाजन वक्र के सन्दर्भ मे विवेचना करनी हो।

## अभ्यासार्थ प्रश्न

१. निम्नांकित प्रदत्त मालाओ के चतुर्थांक, मध्यक तथा प्रमाप विचलन ज्ञात कीजिए :

(अ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ६०—६४ | ३ |
| ५५—५९ | ४ |
| ५०—५४ | ८ |
| ४५—४९ | ९ |
| ४०—४४ | ७ |
| ३५—३९ | १० |
| ३०—३४ | ७ |
| | N=५० |

(आ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ५५—५९ | १४ |
| ५०—५४ | २० |
| ४५—४९ | १८ |
| ४०—४४ | १७ |
| ३५—३९ | ९ |
| ३०—३४ | १५ |
| २५—२१ | ७ |
| | N=१०० |

(इ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ४०—४४ | ८ |
| ३५—३९ | १२ |
| ३०—३४ | १८ |
| २५—२९ | ६ |
| २०—२४ | ४ |
| १५—१९ | २ |
| | N=५० |

(ई)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
|---|---|
| ९०—९९ | ६ |
| ८०—८९ | ८ |
| ७०—७९ | १० |
| ६०—६९ | १२ |
| ५०—५९ | १४ |
| ४०—४९ | १४ |
| ३०—३९ | १० |
| २०—२९ | ९ |
| १०—१९ | ७ |
| | N=९० |

(उ)

| वर्गान्तर | आवृत्तियाँ |
| --- | --- |
| ५५—५९ | १ |
| ५०—५४ | १ |
| ४५—४९ | ३ |
| ४०—४४ | ४ |
| ३५—३९ | ६ |
| ३०—३४ | [illegible] |
| २५—२९ | १२ |
| २०—२४ | ९ |
| १५—१९ | ८ |
| १०—१४ | २ |
| | N=५० |

# १४

# सह-सम्बन्ध
## (CORRELATION)

### [प्र]स्तावना

सह-सम्बन्ध में हम दो प्रदत्त मात्राओं के मध्य व्याप्त पारस्परिक सम्बन्ध की निकटता अथवा दूरी का ज्ञान प्राप्त करते हैं। प्राय देखा जाता है कि एक बालक दो विषयों में ली गई परीक्षा में समान अङ्क प्राप्त नहीं करता है। सह-सम्बन्ध विधि के द्वारा दो विषयों में प्राप्त अङ्कों के मध्य की समानता, निकटता तथा दूरी का अध्ययन किया जाता है। जब विद्यार्थी दो विषयों में योग्य होता है तो समझा जाता है कि दोनों में निकटता का सह-सम्बन्ध है, या सम सह-सम्बन्ध है। इसके विपरीत, जब छात्र दो विषयों में से एक में योग्य होते हैं, दूसरे में कमजोर, तो समझा जाता है कि दोनों विषयों में विषम सह-सम्बन्ध है। उच्च बुद्धि-लब्धि (I Q) वाले छात्रों की निष्पत्तियाँ भी उच्च ही होती हैं अर्थात् बुद्धि-लब्धि और निष्पत्तियों में सम सह-सम्बन्ध है। संक्षेप में, दो प्रदत्त, सम्बोध, घटनाओं अथवा तथ्यों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों की दूरी, निकटता या उदासीनता ही सह-सम्बन्ध कहलाती है।

दूरी, निकटता तथा उदासीनता के अनुसार ही सह-सम्बन्ध तीन प्रकार का हो सकता है :

(i) ऋणात्मक सह-सम्बन्ध (Negative Correlation)
(ii) धनात्मक सह-सम्बन्ध (Positive Correlation)
(iii) शून्य सह-सम्बन्ध (Zero Correlation)

जब दो तथ्यों के मध्य विपरीत सह-सम्बन्ध होता है, तो वह ऋणात्मक सह-सम्बन्ध कहलाता है। उदाहरण के लिए, एक विषय के ज्ञान के बढ़ने का प्रभाव दूसरे विषय के ज्ञान पर ह्रास के रूप में पड़े तो इन दोनों विषयों में ऋणात्मक सह-सम्बन्ध होगा। जब एक विषय के ज्ञान की वृद्धि दूसरे विषय के ज्ञान पर भी प्रगतिशील प्रभाव डाले तो इनमें धनात्मक सह-सम्बन्ध होगा और जब एक विषय के ज्ञान का दूसरे विषय पर कोई भी प्रभाव न पड़े तो वह शून्य सह-सम्बन्ध कहलायेगा।

सूत्रानुसार—

$$\rho = १ - \frac{६ \times १२}{१० (१०^{२} - १)}$$

$$= १ - \frac{७२}{१० \times ९९} \quad १ - \cdot ०७३$$

$$= + \cdot ९३ \text{ लगभग}$$

+·९३ दोनों विषयों के प्राप्तांकों में उच्च धनात्मक सहृ-सम्बन्ध व्यक्त करता है।

व्याख्या—ऊपर के उदाहरण में सारणी के प्रथम खाने में भूगोल के प्राप्तांक हैं, दूसरे में गणित के प्राप्तांक। तीसरा खाना $R_1$ है। इसमें भूगोल के प्राप्तांकों को क्रम प्रदान किये गये हैं। भूगोल में सर्वाधिक अंक को १, उससे कम अंक को २, फिर उससे कम को ३ और फिर ४, ५, ६, ७, ८, ९ तथा १० तक अंक प्रदान किये गये हैं। चौथे खाने में $R_2$ दिखाया गया है। इसमें गणित के अंकों को क्रम प्रदान किया गया है। गणित में २१ सर्वाधिक बड़ा अंक है और इसमें १ तथा १० न्यूनतम अंक है। अतः इसे १० वाँ क्रम दिया गया है। पाँचवें खाने में $R_1$ तथा $R_2$ का अन्तर ज्ञात किया गया है। अन्तर ज्ञात करते समय ऋण तथा धन के चिन्हों का ध्यान नहीं रखा गया है। अन्तिम खाने में पाँचवें खाने में प्राप्त अन्तरों के वर्ग बनाकर लिखे गये हैं। वर्गों के योग को सूत्र में रखकर सहृ-सम्बन्ध ज्ञात किया गया है।

जब सहृ-सम्बन्ध शून्य (०) आये तो समझना चाहिए कि दोनों प्रदत्त मालाओं में कोई भी सहृ-सम्बन्ध नहीं है। धनात्मक दिशा में सहृ-सम्बन्ध +१ से अधिक तथा ऋणात्मक दिशा में −१ से कम नहीं आ सकता है। दूसरे शब्दों में, हमारा उत्तर सदैव +१ और −१ के मध्य रहेगा। धनात्मक सम्बन्ध +१ पर आकर यह बताता है कि दोनों में धनात्मक रूप में पूर्ण सहृ-सम्बन्ध (Perfect Positive Correlation) है। ऋणात्मक सम्बन्ध −१ पर आकर पूर्ण ऋणात्मक सहृ-सम्बन्ध (Perfect Negative Correlation) बताता है। दोनों ही दशाओं में सहृ-सम्बन्ध जितना अधिक +१ या −१ के निकट होगा, उतना ही अधिक वह क्रमश धनात्मक या ऋणात्मक सहृ-सम्बन्ध बतायेगा। +·६ पर्याप्त धनात्मक सहृ-सम्बन्ध बताता है जबकि −·१ का सहृ-सम्बन्ध −१० से काफी दूर है, अत काफी कम ऋणात्मक सहृ-सम्बन्ध बताता है।

-10 -9 -8 -7 -6 -5 -4 -3 -2 -1 +1 +2 +3 +4 +5 +6 +7 +8 +9 +1 00

उदाहरण २—

सारणी ९

| भूगोल मे प्राप्तांक | गणित मे प्राप्तांक | क्रम (भूगोल) $R_1$ | क्रम (गणित) $R_2$ | क्रमान्तर D | क्रमान्तर वर्ग $D^2$ |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ |
| १० | १५ | ९ | ८ | १ | १ |
| १५ | १७ | ६·५ | ४ | २ ५ | ६ २५ |
| १० | १५ | ९ | ८ | १ | १ |
| १८ | १९ | ३ | १ ५ | १ ५ | २ २५ |
| १० | १७ | [illegible] | ४ | [illegible] | २५ |
| १५ | १५ | ६ ५ | ८ | २·५ | ६ २५ |
| १९ | १६ | १ ५ | ६ | ४ ५ | २०·२५ |
| १७ | १७ | ४ | ४ | ० | ० |
| १९ | १९ | १ ५ | १ ५ | ० | ० |
| १६ | १४ | ५ | १० | ५ | २५ |
| | | | | | $\Sigma D^2 = ८७·००$ |

सूत्रानुसार—

$$\rho = १ - \frac{६ \times ८७}{१० (१०० - १)}$$

$$= १ - \frac{५२२}{९९०} = १ - ·५३$$

$$= + ·४७ \text{ लगभग}$$

+·४७ सामान्य स्तरीय धनात्मक सह-सम्बन्ध बताता है।

व्याख्या—प्रथम तथा द्वितीय उदाहरण मे केवल थोडा-सा अन्तर है। प्रथम उदाहरण मे प्रत्येक छात्र ने अलग-अलग अक प्राप्त किये हैं। किन्ही भी दो छात्रो ने एक ही समान अक प्राप्त नही किये हैं, जबकि द्वितीय उदाहरण में कई छात्र ऐसे हैं जिन्होंने समान अंक प्राप्त किये हैं; जैसे भूगोल मे तीन ऐसे छात्र हैं जिन्होंने १०-१० अक प्राप्त किये हैं, दो छात्रो ने १५-१५ अक प्राप्त किये हैं। इसी प्रकार गणित मे तीन छात्रों ने १५-१५ अक प्राप्त किये हैं। इस प्रकार की अवस्थाओ मे क्रम प्रदान करना थोडा कठिन होता है। इसके लिए हम समान अङ्को को दिये जाने वाले क्रमो को जोड़कर उनका

औसत निकाल लेते हैं और फिर सभी समान प्राप्तांको को वही क्रम प्रदान कर देते हैं। जैसे, भूगोल के प्राप्ताङ्क मे सर्वोच्च प्राप्ताङ्क १६ है जो छात्रो ने प्राप्त किया है फिर १८ है। १८ को तीसरा क्रम देना है। प्रथम दो क्रम दोनो १६ को दे देना है। अत क्रम १ तथा क्रम २ को जोडकर (१+२=३) उसका औसत ($\frac{3}{2}$) निकाल लेंगे और दोनो प्राप्ताङ्को को प्रदान कर देंगे। तीसरा क्रम १८ को देना होगा, क्योंकि पहले दो क्रम १६-१६ को दे दिये गये हैं। छठे क्रम पर दो स्थानो पर १५-१५ आते हैं अत इन दोनो मे 6th तथा 7th क्रम विभाजित किया गया है, जो ६.५ आया। इसी प्रकार गणित के प्राप्ताङ्को के साथ किया गया है। आगे के १० तीन बार आये हैं जिन्हें 8th, 9th तथा 10th क्रम का औसत $\left(\frac{८+९+१०}{३}=९\right)$ दिया गया है।

दोनो ही उदाहरणो मे केवल क्रम प्रदान करने की विधि का ही अन्तर है। क्रम ज्ञात हो जाने के उपरान्त दोनो ही उदाहरणो मे समान सोपान (Steps) हैं। अतः आगे का कार्य प्रथम उदाहरण के समान ही होना है।

### अभ्यासार्थ प्रश्न

१. क्रमान्तर विधि से सह-सम्बन्ध ज्ञात कीजिए .

(अ)

| छात्र | प्राप्तांक—१ | प्राप्तांक—२ |
|---|---|---|
| १ | २० | ५० |
| २ | २८ | ५८ |
| ३ | ३८ | ६० |
| ४ | ४० | १० |
| ५ | २४ | ४५ |
| ६ | २५ | ३८ |
| ७ | २१ | १९ |
| ८ | १८ | २० |

(आ)

| छात्र | गणित में प्राप्तांक | भाषा मे प्राप्ताङ्क |
|---|---|---|
| १ | १९ | ९ |
| २ | १७ | ११ |
| ३ | १६ | १२ |
| ४ | १५ | १३ |
| ५ | १८ | १० |
| ६ | ०६ | १८ |
| ७ | ११ | १९ |
| ८ | १३ | १२ |
| ९ | २० | ९ |
| १० | ९ | २१ |

(इ)

| X | Y |
|---|---|
| १६ | १४ |
| २० | २० |
| २२ | ११ |
| २६ | ९ |
| २७ | ८ |
| २९ | ५ |
| ३१ | ६ |
| ३२ | १२ |
| ४२ | ७ |
| ४४ | ३ |

(ई)

| A | B |
|---|---|
| १५ | ४० |
| १८ | ४८ |
| २२ | ४० |
| १५ | ३४ |
| २१ | ४० |
| १८ | ४८ |
| १५ | ३६ |
| १६ | ३७ |
| १७ | ३५ |
| १८ | ३४ |

## १५

# सामान्य सम्भावना वक्र

## (NORMAL PROBABILITY CURVE)

### १. प्रस्तावना

सांख्यिकी मे सामान्य सम्भावना वक्र (Normal Probability Curve) को बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। सांख्यिकी मे इसे कई नामों से पुकारा जाता है, जैसे गोसियन वक्र (Gaussian Curve), सामान्य विभाजन वक्र (Normal Distribution Curve) या सिर्फ समान्य वक्र (Normal Curve)। इस वक्र के अनुसार सम्भावना (Probability) इस बात की अधिक रहती है कि सभी तथ्य सामान्य होगे। स्पष्ट शब्दों मे मध्यक या माध्य (औसत) से नीचे की प्रवृत्ति ही औसत के ऊपर पाई जाती है। इस सिद्धान्त के अनुसार सम्भावना इस बात की अधिक है कि कक्षा में औसत छात्रो से नीचे जितने छात्र हैं, औसत छात्रों से उतने ही अच्छे छात्र कक्षा मे होगे। इसे एक स्थूल उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट किया जा सकता है। यदि हम एक सिक्के को उछाले तो उसके सीधा तथा उल्टा पड़ने के समान अवसर होते हैं। यदि दो सिक्के साथ-साथ उछाले जायें तो कई सम्भावनाएँ हो जाती हैं। जैसे, एक सीधा एक उल्टा, दोनो सीधे दोनों उल्टे। इसी प्रकार यदि दस सिक्के एक साथ उछाले जायें तो निम्नांकित सम्भावनाएँ हो जाती है

| | | |
|---|---|---|
| १. दसो सिक्के सीधे पड़ें ($H^{10}$) | १ | सम्भावना |
| २ नौ सिक्के सीधे एक उल्टा पड़े ($H^{9}T^{1}$) | १० | सम्भावनाएँ |
| ३ आठ सिक्के सीधे दो उल्टे पड़ें ($H^{8}T^{2}$) | ४५ | सम्भावनाएँ |
| ४. सात सिक्के सीधे तीन उल्टे पड़े ($H^{7}T^{3}$) | १२० | सम्भावनाएँ |
| ५. छह सिक्के सीधे चार उल्टे पड़ें ($H^{6}T^{4}$) | २१० | सम्भावनाएँ |
| ६. पाँच सिक्के सीधे पाँच उल्टे पड़ें ($H^{5}T^{5}$) | २५२ | सम्भावनाएँ |
| ७. चार सिक्के सीधे छह उल्टे पड़ें ($H^{4}T^{6}$) | २१० | सम्भावनाएँ |
| ८. तीन सिक्के सीधे सात उल्टे पड़ें ($H^{3}T^{7}$) | १२० | सम्भावनाएँ |
| ९ दो सिक्के सीधे आठ उल्टे पड़ें ($H^{2}T^{8}$) | ४५ | सम्भावनाएँ |
| १०. एक सिक्का सीधा नौ उल्टे पड़ें ($H^{1}T^{9}$) | १० | सम्भावनाएँ |
| ११. दसों सिक्के उल्टे पड़ें ($T^{10}$) | १ | सम्भावना |
| | १०२४ | कुल सम्भावनाएँ |

उपर्युक्त उदाहरण में आयी सभी सम्भावनाओं को यदि ग्राफ पर प्रदर्शित किया जाय, तो जो वक्र रेखा बनेगी वह सामान्य सम्भावना वक्र होगा। इस वक्र की आकृति मध्य से ऊपर-नीचे एक समान होगी।
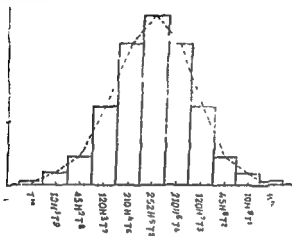
उपर्युक्त वक्र रेखा को सरल रेखा द्वारा निर्मित किया जाय तो उसका रूप निम्नांकित होगा
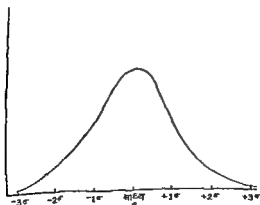
सामान्य सम्भावना वक्र

इस वक्र को देखने से इसकी निम्नांकित विशेषताएँ ज्ञात होती हैं -

(i) सामान्य सम्भावना वक्र की आकृति घण्टाकार (Bell-shaped) होती है।

(ii) सामान्य वक्र की आधार रेखा छह प्रमाप विचलनों तक फैली होती है। तीन प्रमाप विचलन ऋणात्मक दिशा में होते हैं तथा तीन प्रमाप विचलन धनात्मक दिशा में।

(iii) मध्य बिन्दु पर शिखर (Peak) होता है। मध्य बिन्दु पर ही मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक होते हैं। सामान्य वितरण से सामान्य वक्र बनता है, अतः इसमें मध्यक, मध्यांक तथा बहुलांक एक ही होते हैं और वे एक ही बिन्दु पर आते हैं।

(iv) माध्य से +१σ तथा —१σ के मध्य कुल आवृत्तियों का ६८.२६ प्रतिशत भाग आ जाता है।

(v) माध्य से नीचे तथा ऊपर पचास-पचास प्रतिशत आवृत्तियाँ आती हैं।

(vi) सम्भावना वक्र के लिए निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$y = \frac{N}{\sigma\sqrt{2\pi}} e^{-\frac{x^2}{2\sigma^2}} \qquad \cdots (\text{सूत्र सं० १८})$$

जिसमें,

y = कुल आवृत्तियाँ

N = कुल संख्या

σ = प्रमाप विचलन

π = ३.१४१६

e = २.७१८

x = मध्यक से विचलन

### सामान्य सम्भावना वक्र के प्रयोग

शिक्षा तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र में सम्भावना वक्र की बड़ी उपयोगिता है। इसके विभिन्न उपयोगों की नीचे चर्चा की गई है।

**१. दी हुई सीमा के अन्तर्गत प्रतिशत ज्ञात करना**

उदाहरण—एक सम वितरण का मध्यक १६ है तथा प्रमाप विचलन ४ है, तो बताइए कि (i) १२ तथा २० के मध्य कितने प्रतिशत विस्तार आयेगा ? (ii) २२ से ऊपर कितने प्रतिशत विस्तार आयेगा ? तथा (iii) ८ से नीचे कितने प्रतिशत विस्तार आयेगा ?

(i) वितरण २०, मध्यक १६ से ४ बिन्दु (२०—१६) ऊपर है। हमारा विचलन भी ४ ही है अतः हम कह सकते हैं कि वितरण २० मध्यक से $+ 1\sigma$ ऊपर है। इसी प्रकार १२ भी मध्यक से—$1\sigma$ $\left(\frac{१२-१६}{४}\right)$ नीचे है। इस प्रकार हमें ज्ञात करना है कि $+\sigma$ के मध्य कितने प्रतिशत वितरण आयेंगे। अध्याय के अन्त में दी गई सारणी 'क' से देखने पर ज्ञात होता है कि $\pm 1\sigma$ के मध्य ६८.२६% वितरण आयेगा।

(ii) वितरण २२ मध्यक से $+ १.५\sigma$ $\left(\frac{२२-१६}{४}\right)$ ऊपर है। सारणी 'क' से ज्ञात हुआ कि मध्यक तथा $+ १.५$ के बीच ४३.३२% वितरण आता है। अतः ६.६८% (५०—४३.३२) वितरण २२ से ऊपर आयेगा। मध्यक से ऊपर ५०% वितरण होता है अतः मध्यक तथा $+ १.५\sigma$ के बीच का वितरण ज्ञात हो तो आगे का वितरण ५० में से ४३.३२ घटाकर ज्ञात किया जा सकता है।

(iii) ८ मध्यक से—$2\sigma$ $\left(\frac{१८-१६}{४}\right)$ नीचे है। मध्यक तथा—$2\sigma$ के मध्य ४७.७२ प्रतिशत (सारणी 'क' के अनुसार) वितरण आता है तो—$2\sigma$ से २.२८% (५०—४७.७२) वितरण आयेगा। दूसरे शब्दों में, ८ से नीचे २.२८% वितरण आयेगा।

### २ दिये हुए प्रतिशत की सीमाएँ ज्ञात करना

जिस प्रकार सीमाओं के मध्य के वितरण का प्रतिशत ज्ञात किया जा सकता है, उसी प्रकार दिये हुए प्रतिशत की सीमाएँ भी ज्ञात की जा सकती हैं।

उदाहरण—एक सम वितरण का मध्यक १२ तथा प्रमाप विचलन ४ है तो बताइए बीच का ६०% वितरण किन सीमाओं में पड़ेगा?

बीच के ६०% वितरण का अर्थ है ३०% वितरण मध्यक से ऊपर तथा ३०% वितरण से नीचे। सारणी 'क' से ज्ञात होता है कि ३०% वितरण $.८४\sigma$ के मध्य आता है। दूसरे शब्दों में, बीच के ६०% विचलन $\pm$ $.८४\sigma$ के मध्य आयेगा। हमारा एक विचलन ४ के बराबर है, तो .८४ विचलन ३.३६ के बराबर रहेगा। अर्थात् बीच के ६०% वितरण १५.३६ (१२+३.३६) तथा ८.६४ (१२—३.३६) के बीच आयेगा।

### ३. प्रश्नों का कठिनाई-स्तर ज्ञात करना

उदाहरण—एक परीक्षा में एक प्रश्न केवल १०% छात्रों ने, दूसरा केवल

२०% छात्रो ने, तीसरा केवल ३०% छात्रो ने सही हल किया। परीक्षा की मापन-शक्ति सामान्य है, तो १, २, ३ का सम्बन्धित कठिनाई-स्तर बनाइए।

प्रथम प्रश्न १०% छात्रो ने किया है अर्थात् ९०% छात्रो ने उसको सही हल नहीं किया है। दूसरे शब्दो मे, माध्य से ४० ऊपर (९० – ५०) छात्र प्रश्न नहीं कर पा रहे हैं। सारणी 'क' से ज्ञात होता है कि ४०% विवरण माध्य और +१·२८८ के बीच पड़ता है। अत. १·२८८ ही इस प्रश्न के कठिनाई-स्तर के रूप मे लिया जा सकता है।

इसी प्रकार दूसरे प्रश्न को ८०% छात्र नहीं कर पाते हैं अर्थात् माध्य से ३०% (८० – ५०) ऊपर के छात्र प्रश्न को नहीं कर पाते हैं। सारणी 'क' से देखने पर ज्ञात होता है कि ३०% विवरण माध्य और +·८४८ के बीच आता है। हम ·८४ को दूसरे प्रश्न का कठिनाई-स्तर निर्धारित कर सकते हैं।

तीसरे प्रश्न को ३०% छात्र ही सही हल कर पाते है अर्थात् ७०% छात्र हल नहीं कर पाते हैं। माध्य से २०% ऊपर (७० – ५०) छात्र इस प्रश्न को नहीं कर पाते हैं। सारणी 'क' से ज्ञात होता है कि २०% विवरण मध्यक और +·५२८ के मध्य पड़ता है। ·५२ ही इस प्रश्न का कठिनाई-स्तर हो सकता है।

संक्षेप मे, प्रथम तथा द्वितीय प्रश्नो के मध्य ·४४ (१·२८ – ·८४) प्रमाप कठिनाई-स्तर है तथा द्वितीय व तृतीय प्रश्न के मध्य ·३२ (·८४ – ·५२) प्रमाप कठिनाई-स्तर है।

४ मध्यबिन्दु से दूर की सीमाओ के मध्य प्रतिशत निर्धारित करना

उदाहरण—एक सम विवरण का मध्यक २० है तथा प्रमाप विचलन ५ है बताइए १० और १५ के मध्य कितने प्रतिशत विवरण आयेगा ?

१५ मध्यक से —१σ $\left(\frac{१५-२०}{५}\right)$ दूर है और १० मध्यक से —२σ

$\left(\frac{१०-२०}{५}\right)$ दूर है। अब हमे ज्ञात करना है कि —१σ तथा —२σ के मध्य कितने प्रतिशत विवरण आयेगा। सारणी 'क' को देखने से ज्ञात होता है कि मध्यक तथा —१σ के बीच ३४·१३% विवरण आता है तथा मध्यक और —२σ के बीच ४७·७२% विवरण आता है, अत —१σ और —२σ के बीच १३·५९% (४७·७२ – ३४·१३) विवरण आयेगा।

५. समूह निर्माण करना

उदाहरण—एक कक्षा मे १२० छात्र हैं। प्रधानाध्यापक इन छात्रो को ३ वर्गों मे विभक्त करना चाहता है। प्रधानाध्यापक योग्यता के आधार पर वर्ग बनाना चाहता है

## सारणी 'क'

(इस सारणी [illegible] (Mean) [illegible] (S D) [illegible] [illegible] 1.53 [illegible] 43.70 [illegible]

सारणी [illegible] 10,000 [illegible] 4370 [illegible] 10,000 [illegible] 43.70 [illegible]

| $\frac{x}{\sigma}$ | ·00 | ·01 | ·02 | ·03 | ·04 | ·05 | ·06 | ·07 | ·08 | ·09 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 0·0 | 0000 | 0040 | 0080 | 0120 | 0160 | 0199 | 0239 | 0279 | 0319 | 0359 |
| 0·1 | 0398 | 0438 | 0478 | 0517 | 0557 | 0596 | 0636 | 0675 | 0714 | 1753 |
| 0·2 | 0793 | 0832 | 0871 | 0910 | 0948 | 0987 | 1026 | 1064 | 1103 | 1141 |
| 0·3 | 1179 | 1217 | 1255 | 1293 | 1331 | 1368 | 1406 | 1443 | 1480 | 1517 |
| 0·4 | 1554 | 1591 | 1628 | 1664 | 1700 | 1736 | 1772 | 1808 | 1844 | 1879 |
| 0·5 | 1915 | 1950 | 1985 | 2019 | 2054 | 2088 | 2123 | 2157 | 2190 | 2224 |
| 0·6 | 2257 | 2291 | 2324 | 2357 | 2389 | 2422 | 2454 | 2486 | 2517 | 2549 |
| 0·7 | 2580 | 2611 | 2642 | 2673 | 2704 | 2734 | 2764 | 2794 | 2823 | 2052 |
| 0·8 | 2881 | 2910 | 2939 | 2967 | 2995 | 3023 | 3051 | 3078 | 3106 | 3133 |
| 0·9 | 3159 | 3186 | 3212 | 3238 | 3264 | 3290 | 3315 | 3340 | 3365 | 3389 |
| 1·0 | 3413 | 3438 | 3461 | 3485 | 3508 | 3531 | 3554 | 3577 | 3599 | 3621 |
| 1·1 | 3643 | 3665 | 3686 | 3708 | 3729 | 3749 | 3770 | 3790 | 3810 | 3830 |
| 1·2 | 3849 | 3869 | 3888 | 3907 | 3925 | 3944 | 3962 | 3980 | 3997 | 4015 |
| 1·3 | 4042 | 4049 | 4066 | 4082 | 4099 | 4115 | 4131 | 4147 | 4162 | 4177 |
| 1·4 | 4192 | 4207 | 4222 | 4236 | 4251 | 4265 | 4279 | 4292 | 4306 | 4319 |
| 1·5 | 4332 | 4345 | 4357 | 4370 | 4383 | 4394 | 4406 | 4418 | 4429 | 4441 |
| 1·6 | 4452 | 4463 | 4474 | 4484 | 4495 | 4505 | 4515 | 4525 | 4535 | 4545 |
| 1·7 | 4554 | 4564 | 4573 | 4582 | 4591 | 4599 | 4608 | 4616 | 4625 | 4633 |
| 1·8 | 4641 | 4649 | 4656 | 4664 | 4671 | 4678 | 4686 | 4693 | 4699 | 4706 |
| 1·9 | 4713 | 4719 | 4726 | 4732 | 4738 | 4744 | 4750 | 4756 | 4761 | 4767 |
| 2·0 | 4772 | 4778 | 4783 | 4788 | 4793 | 4798 | 4803 | 4808 | 4812 | 4817 |
| 2·1 | 4821 | 4826 | 4830 | 4834 | 4838 | 4842 | 4846 | 4850 | 4854 | 4857 |
| 2·2 | 4861 | 4864 | 4868 | 4871 | 4875 | 4878 | 4881 | 4884 | 4887 | 4890 |
| 2·3 | 4893 | 4896 | 4898 | 4901 | 4904 | 4906 | 4909 | 4911 | 4913 | 4816 |
| [illegible] | 4918 | 4920 | 4922 | 4925 | 4927 | 4929 | 4931 | 4932 | 4934 | 4836 |

| $\frac{x}{d}$ | 00 | 01 | ·02 | ·03 | ·04 | 05 | 06 | 07 | 08 | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 2 5 | 4938 | 4940 | 4941 | 4943 | 4945 | 4946 | 4948 | 4949 | 4951 | 4 |
| 2 6 | 4953 | 4955 | 4956 | 4957 | 4959 | 4960 | 4961 | 4962 | 4963 | 4 |
| 2 7 | 4965 | 4966 | 4967 | 4968 | 4969 | 4970 | 4971 | 4972 | 4973 | 4 |
| 2 8 | 4974 | 4975 | 4976 | -4977 | 4977 | 4978 | 4979 | 4979 | 4980 | 4 |
| 2 9 | 4981 | 4982 | 4982 | 4983 | 4984 | 4984 | 4985 | 4985 | 4986 | 4 |
| 3 0 | 4986·5 | 4986 9 | 4987 4 | 4987 8 | 4988 2 | 4988·6 | 4988·9 | 4989 3 | 4989 7 | 4 |
| 3·1 | 4990·3 | 4990 6 | 4991 0 | 4991 3 | 4791 6 | 4991 8 | 4992 1 | 4992 4 | 4992 6 | 4 |
| 3 2 | 4993·129 | | | | | | | | | |
| 3 3 | 4995 166 | | | | | | | | | |
| 3·4 | 4996 631 | | | | | | | | | |
| 3·5 | 4997 674 | | | | | | | | | |
| 3·6 | 4998·409 | | | | | | | | | |
| 3·7 | 4998·922 | | | | | | | | | |
| 3 8 | 4999·277 | | | | | | | | | |
| 3 9 | 4999·519 | | | | | | | | | |
| 4 0 | 4999 683 | | | | | | | | | |
| 4·5 | 4999·966 | | | | | | | | | |
| 5 0 | 4999·997 | | | | | | | | | |